ओ३म्

संशोधित संस्करण

बोलो! किधर जाओगे?



आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक



तिथि ज्येष्ठ शुक्ला अष्टमी विक्रम सम्वत् 2075, दिनांक 20, जून 2018
उपराष्ट्रपति आवास पर 'वेदविज्ञान-आलोकः' ग्रन्थ का विमोचन करते हुए
महामहिम उपराष्ट्रपति श्रीमान् एम. वेंकैया नायडू जी



दिनांक 9/10/2011 को अन्तर्राष्ट्रिय ख्यातिर्लब्ध खगोल वैज्ञानिक
प्रो. आभास कुमार मित्रा एवं प्रख्यात खगोल वैज्ञानिक प्रो. ए. आर. राव
अनुसंधान भवन का उद्घाटन करते हुए

ओ३म्

बोलो! किधर जाओगे?

(हर जीवित, जाग्रत प्रबुद्ध हृदय को झकझोर देने वाली क्रान्तिकारी पुस्तक)

लेखक

आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक

सम्पादक

विशाल आर्य

(M.Sc. Theoretical Physics)

प्रकाशक

श्री वैदिक स्वस्ति पन्था न्यास

(वैदिक एवं आधुनिक भौतिक विज्ञान शोध संस्थान)

वेद विज्ञान मन्दिर, भागलभीम, भीनमाल जिला-जालोर

(राजस्थान) पिन- 343029

द्वितीय संस्करण

शारदीय नवसस्येष्टि विक्रम संवत 2075
महर्षि दयानन्द निर्वाण दिवस

07 नवम्बर 2018

संख्या - 1000

मूल्य - 200 रु. वेद रक्षार्थ अपेक्षित सहयोग राशि

प्रकाशकः
श्री वैदिक स्वस्ति पन्था न्यास
(वैदिक एवं आधुनिक भौतिक विज्ञान शोध संस्थान)
वेद विज्ञान मन्दिर, भागलभीम, भीनमाल जिला-जालोर
(राजस्थान) पिन- 343029
दूरभाष-02969-222103, 9829148400
Email: swamiagnivrat@gmail.com
Website: www.vaidicphysics.org, www.vaidicscience.com

अनुक्रमणिका

(क) विनम्र समर्पणम्

१. उन मान्य बन्धु/भगिनी, जिनके हृदय में विश्वबन्धुत्व, मानव एकता एवं प्राणिमात्र के प्रति पवित्र प्रेम पलता है।

२. जिनके मस्तिष्क में उच्च वैज्ञानिक आकांक्षाओं एवं कल्पनाओं का ज्वार सतत उमड़ता है तथा जो अपनी वैज्ञानिकता को सर्वहितकारी स्वरूप देने के स्वप्न संजोते हैं।

३. जिनके आत्मा में सत्य सनातन वैदिक धर्म के प्रति पूर्ण श्रद्धा तथा अपने पूज्य देवों, ऋषियों एवं समस्त महापुरुषों के प्रति गम्भीर व यथार्थ सम्मान विद्यमान है।

४. जो सकल सृष्टि स्रष्टा, परमपिता परमात्मा की यथार्थ पूजा के प्रति सतत अनुरागी हैं।

५. जो कुरान एवं बाइबिल के यथार्थ तत्व को जानना चाहते हैं।

६. जो भगवान् बुद्ध व महावीर स्वामी एवं उनके अनुवर्ती बौद्ध व जैन मत की वास्तविकता पर गम्भीर विचार करने की इच्छा रखते हैं।

७. जो सिख मत एवं अपने पूज्य गुरु साहिबानों के प्रति श्रद्धा रखते हैं।

८. जो ईश्वर, आत्मा, धर्म, कर्मफल जैसी मान्यताओं को ठुकराकर संसार अथवा स्वयं के भौतिक ऐश्वर्य के लिये सतत प्रयत्नशील हैं। जिनको केवल वर्तमान पदार्थ विज्ञान व उच्चतम तकनीक की उन्नति के द्वारा संसार को भोगवादी बनाना ही श्रेयस्कर प्रतीत होता है।

९. जो सभी सम्प्रदायों को सत्य मानकर सबके प्रति सम्मान का भाव रखकर सच्चे सैक्यूलरिज्म की वकालत करते अथवा साम्प्रदायिक तुष्टिकरण से स्वार्थ साधना में रत रहते हैं।

१०. जो समाजवाद वा साम्यवाद के द्वारा गरीब व दुर्बल वर्गों की हृदय से सच्ची सेवा का विचार रखते हैं।

११. जो वास्तव में आर्थिक व सामाजिक रूप से पिछड़े वर्गों की उन्नति करके सम्पूर्ण देश में सामाजिक समरसता लाना चाहते हैं अथवा इनको भड़काकर देश को वर्ग संघर्ष की आग में धकेलकर विदेशी षड्यन्त्रकारियों के हाथ की कठपुतली बनने में ही अपना अहोभाग्य मानते हैं।

१२. जो अपने राष्ट्र से भय, भूख, भ्रष्टाचार आदि मिटाने की इच्छा के साथ भारतीय गौरवमय इतिहास व आदर्श के प्रति सच्ची श्रद्धा रखते हैं। इसके साथ ही सच्ची राष्ट्रभक्ति का परिचय करना चाहते हैं।

१३. एवं अन्य कोई भी मानवमात्र।

–आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक

(ख) भूमिका

डॉ. वसन्त कुमार मदनसुरे

B.Tech. (विद्युत् अभि.), M.Tech. Ph.D (कृषि अभि.),
पूर्व विभागाध्यक्ष एवं प्रोफेसर
(अपारम्परिक ऊर्जा एवं विद्युत् इंजीनियरिंग विभाग)

ओ३म्। संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथापूर्वे संजानाना उपासते।। (ऋग्वेद १०.१९१.२)

ओ३म्। यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः।
ब्रह्मराजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय।। (यजु.२६.२)

मूलतः सभी मनुष्य प्राणी एक जैसे हैं। उनकी शारीरिक, मानसिक, आत्मिक संरचना पूर्णतः समान है। सभी का लक्ष्य लौकिक व पारलौकिक उन्नति करना है। सभी के लिए प्रकृति, ज्ञान, विज्ञान, न्याय व्यवस्था, सत्य व्यवहार, ईश्वर एक ही है। सभी मानव शरीरों में ५ ज्ञानेन्द्रिय, ५ कर्मेन्द्रिय, मस्तिष्कगत भेजा (दिमाग) और नाड़ी संस्थान और इतर कार्य प्रणालियां एक जैसी ही हैं। लेकिन इस धरती पर यह मनुष्य जाति अब स्वाभाविक, नैमित्तिक, सामाजिक इत्यादि कारणों से अलग-२ घटकों में विभाजित हो चुकी है। देश, काल, वातावरण, खानपान इत्यादि के निमित्त उनके बाह्य शरीरों में अन्तर (काला-गोरा, ऊँचा-नाटा, सुन्दर-सामान्य इत्यादि) दिखायी पड़ता है। माता, पिता, संस्कार, सामाजिक परम्पराएं, सभ्यता और स्वयं के पूर्व जन्म के कर्मों इत्यादि के कारण बच्चों में भाषा, व्यवहार, कार्यशीलता, भावनात्मक उत्तेजना, संवेदना इत्यादि में फरक दिखायी देता है। इसके साथ-२ विभिन्न सम्प्रदाय, पंथ, वाद (साम्यवाद, भौतिकवाद, पूंजीवाद, आतंकवाद इत्यादि) और स्वार्थ अहंकार के कारण मनुष्य समाज बहुत घटकों/समूहों में बंटा हुआ है। कुछ स्वाभाविक और समाज के समन्वय कार्यों के कारण मनुष्य समाज में विभाजन हुआ। जैसे समाज को सुचारु और सामंजस्यपूर्ण शैली से, वर्ण व्यवस्था (जो कि गुण, कर्म, स्वभाव पर योग्यता के कारण आधारित थी, जन्म से नहीं) का निर्माण, जिससे

अज्ञान, अन्याय, अभाव और आलस्य/असेवाभाव को नष्ट कर व्रत धारण कर अपना और समाज का हित करती थी। व्यक्तिगत और सामाजिक उत्कर्ष के लिए आश्रम व्यवस्था (ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास आश्रम) भी आवश्यक था। इसके विपरीत पंथ या स्वजातीयता के कारण सत्य-असत्य का निर्णय न कर समाज के सम्प्रदायवादी/अविवेकी लोग पक्षपात करके समाज विघातक बहुत से समूहों, जातियों में विभाजित हो गये, जो कि संसार की अशान्ति का कारण बने हुए हैं।

आर्य समाज (वर्णाश्रम पर आधारित) न जाने कब से ''उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्'' का पाठ पढ़ाती है और बतलाती है कि उदार पुरुषों के लिए तो समस्त संसार ही एक कुटुम्ब के समान है। वैदिक लोग भले और बुरे की दो ही जातियां मानते थे, जिन्हें आर्य और दस्यु कहते थे। आज हमारा समाज जाति-उपजातियों में (कुछ स्वाभाविक और कुछ स्वार्थवश शैली से) बंटा हुआ है और अपने-२ संगठनों की अलग-२ कठोर व्यवहार पद्धतियों को अपनाये हुए है। प्रत्येक उस जाति की अपनी पहचान व परम्परा है, जो कि उस समाज की दृढ़ता और निर्माण के लिए आवश्यक है। किन्तु अति होने से वह मानवता से दूर जा रहे हैं। विभिन्न जाति और कुलों में परस्पर सहिष्णुता और सामंजस्य का होना मानवता और सभ्य समाज के व्यवस्थापन के लिए अति आवश्यक है।

जो-जो भी मानव मात्र के लिए सत्य, न्यायपूर्ण, लाभप्रद और कल्याणकारक व्यवस्था है, उसे ही धर्म कहा जाता है। वह सभी के लिए एक ही है।

''यतोऽभ्युदयनिःश्रेयस सिद्धिः स धर्मः'' (वैशेषिक दर्शन १.१.२)

मानवमात्र का लौकिक व पारलौकिक अभ्युदय ही धर्म है। देश, काल, परम्परा इत्यादि से जो भी खानपान, भाषा, व्यवहार का मनुष्यों में भेद है, वे ऊपरी हैं और इससे उनकी उन्नति में और समाज व राष्ट्र की धारणा वा व्यवस्था में बाधा नहीं आनी चाहिए। समाज में सुदृढ़ता मानवतावादी धर्म (निष्काम, त्यागमय, न्यायपूर्ण व्यवहार) से ही शक्य होगी और इसे ही अनेकता (अलग भाषा, खानपान, बाह्य

विविधता) में एकता (एक ध्येय, न्यायपूर्ण व्यवहार) कह सकते हैं। अलग-२ प्रकार के समाज में स्वार्थवश सम्प्रदायी व्यवहार से मानव समाज में सामञ्जस्य और समन्वय का निर्माण नहीं होना है। वह अनेकता में अनेकता ही रहती है। जो समाज के स्वास्थ्य को श्रेष्ठ नहीं बनने देती है। सभी का कल्याणकारक न्यायप्रद एक ही ध्येय हो, तो ही एकता बनती है। मनुष्य जाति के लिए बाह्य विविधता होते हुए भी ध्येय, आस्था, अन्तिम सत्य एक ही होता है परन्तु स्वार्थगत व्यवहार से अनेकता के कारण अलग-२ समूह व जातियां एक दूसरे के शत्रु बन चुके हैं। पं. मोहनलाल विष्णुलाल पण्ड्या के प्रश्न के उत्तर में महर्षि स्वामी दयानन्द जी ने कहा, **''जब तक समस्त देशवासी एक ही धर्म के अनुयायी, एक ही भाषा, एक ही आचार-विचार एवं व्यवहार को धारण कर एक ही लक्ष्य की पूर्ति सर्वात्मना कृतनिश्चय नहीं हो जाते, तब तक स्वदेश की एकता और समृद्धि स्वप्नमात्र ही रहेगी।''** यह विचार मनुष्यमात्र के लिए लागू होता है। दुःख है कि आजकल सम्प्रदायों और मतमतान्तरों ने 'धर्म' शब्द की बहुत बड़ी बदनामी कर रखी है परन्तु वास्तव में 'धर्म' शब्द का अर्थ सम्प्रदाय, मजहब अथवा मतमतान्तर नहीं है।

धारणाद् धर्ममित्याहुर्धर्मेण विधृताः प्रजाः।
यः स्याद् धारणसंयुक्तः स धर्म इति निश्चयः।।
{महाभारत/शान्तिपर्व/राजधर्मानुशासनपर्व (अ.१०६ श्लोक ११)}

''जिससे सभी प्राणियों का धारण व पोषण होता है, वही धर्म कहलाता है।'' पंचतंत्र में सभ्य समाज की व्यवस्था में लिखा है-

''मातृवत्परदारेषु परद्रव्येषु लोष्ठवत्।
आत्मवत् सर्वभूतेषु यः पश्यति सः पश्यति।।''

अर्थात् जो परायी स्त्री को माता के समान और पराये धन को मिट्टी के ढेले के समान समझता है, सब प्राणियों को अपने आत्मा के समान समझता है, वही वास्तव में देखता है।

आर्य स्मृतिकार भगवान् मनु महाराज ने धर्म के निम्नलिखित लक्षण बताये हैं-

''धृति क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्।।''

धर्म के दस लक्षण हैं। धृति (धैर्य), क्षमा (मान-अपमान आदि में समान रहना), दम (शरीर, इन्द्रिय और मन पर संयम), अस्तेय (चोरी न करना), शौच (पवित्रता), इन्द्रिय निग्रह (इन्द्रियों को वश में रखना), धी (बुद्धि), विद्या (ज्ञान), सत्य (सच्चाई), अक्रोध (क्रोध नहीं करना)। स्वामी दयानन्द सरस्वती (अहिंसा परमो धर्मः) अहिंसा को धर्म का ग्यारहवां लक्षण लिखते हैं। धर्म वह है, जिसके बिना प्राकृतिक विज्ञान और राजनीति के विचार एक पग भी आगे नहीं चल सकते। धर्म मजहब, पंथ अथवा वाद नहीं, बल्कि यथार्थ ज्ञान, न्यायपूर्ण सत्य व्यवहार ही ऐसा होना है, जो अनियंत्रित अति लोभी अर्थव्यवस्था और निरंकुश काम को मर्यादित करके मोक्ष और अर्थ व काम के मध्य सामंजस्य उत्पन्न कर सकता है।

आज समाज में संवेदनशीलता समाप्त हो गई है। उसका व्यवहार काम-अर्थ प्रधान हो गया है। धर्म के नाम पर मजहबी जुनून लोगों पर सवार रहता है। साथ ही समाज का हर वर्ग अति भौतिकता की आंधी में भटक रहा है। सभी सामाजिक वर्गों, जाति-उपजातियों की युवा पीढ़ी अति भोगवाद से ग्रस्त है।

आधुनिक पीढ़ी राष्ट्र व समाज के किसी भी ऋण को न मानकर भारतीय शैली की अर्थ, शिक्षण, न्याय, प्रशासन, रक्षा, कृषि, चिकित्सा, स्वास्थ्य, उद्योग-व्यवसाय, आहार-विहार की व्यवस्था की अवहेलना कर पाश्चात्य पद्धति को ही अपनाती नजर आती है। इसके साथ ही समाज में आतंकवाद, गुंडागर्दी, मार्क्सवाद, पूंजीवाद, असभ्यता, अन्यायपूर्ण व्यवहार, निराशा, कुंठित जीवन, आरक्षण, बेरोजगारी, भ्रष्टाचार, व्यभिचार इत्यादि में वृद्धि हो रही है। देश व समाज की सुरक्षा एवं उन्नति के लिए आवश्यक है कि धर्म के सत्य स्वरूप को समझा जाये, समाज में संवेदनशीलता, न्यायप्रियता बढ़े, परस्पर सौहार्द हो। एक ऐसी

व्यवस्था हो, जो सम्पूर्ण समाज, राष्ट्र व मानवमात्र को सुन्दर व मजबूत बनाये। **''बोलो किधर जाओगे?''** पुस्तक माननीय आचार्य अग्निव्रत जी नैष्ठिक ने इसी दृष्टिकोण से लिखी है। आज समाज में धर्म के नाम पर विभिन्न स्वरूप (मजहब, पंथ, वाद) हिन्दू, जैन, बौद्ध, ईसाई, इस्लाम, भोगवाद, मूलनिवासी वाद इत्यादि प्रचलित हैं। किन्तु अधिकांश लोगों को उनके धर्म ग्रन्थों व सिद्धान्तों में क्या लिखा है, जिन्हें वे मानते हैं, उसकी भी जानकारी नहीं है। प्रस्तुत पुस्तक में आदरणीय आचार्य जी ने हमारे समाज, जो विभिन्न जाति-उपजाति, धर्म (मजहब, पंथ) में बंटा हुआ इधर-उधर भटक रहा है, को एक नई दिशा दी है। इन विविध मतों की उत्पत्ति कैसे हुई? **'धर्म का आदि स्रोत'** में पं गंगाप्रसाद, रिटायर्ड जज लिखते हैं- **'प्राचीन समय में एक ही धर्म वेदों पर आधारित था।' स्वार्थ, अज्ञान, अहंकार और आलस्य के कारण मल, दोष और विकृति आकर अलग-२ पंथ बने।** उपस्थित सभी मतों के मिलान और अनुशीलन से ज्ञात होता है कि प्रत्येक नवीन पंथ (मत, सम्प्रदाय) प्रारम्भ में किसी प्राचीनतर पंथ या धर्म की तत्कालीन दशा का संशोधन करने का प्रयास रहा। इसी कारण सभी मजहबों में 'ओ३म्' व 'आर्य' इत्यादि शब्द किसी न किसी रूप में मिलते हैं। वैदिक ज्ञान एवं भाषा के मूल सिद्धान्त भी थोड़े बदल-२ कर सभी मतों में मिलते हैं।

वर्तमान कथित हिन्दू धर्म का वास्तविक व विशुद्ध रूप वैदिक धर्म है। वेद संसार के सबसे पुराने ग्रन्थ हैं। वैदिक साहित्य (वेद, उपवेद, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद्, दर्शन, वेदांग, स्मृतियां इत्यादि) सभी मानवमात्र के कल्याण के लिए उपयोगी ग्रन्थ हैं। सभी मजहब, पंथ, सम्प्रदाय इस वैदिक काल के बाद ही बने हैं। वेद सार्वजनिक व सार्वभौमिक है। वेद ने कहा है- **'यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः'** अर्थात् मानव मात्र को वेद पढ़ने-पढ़ाने, सुनने-सुनाने और समझने का अधिकार है। जैसे भगवान् ने पृथ्वी, तेज, वायु, सूर्य, चन्द्र और अन्न आदि पदार्थ सबके लिए बनाये हैं, वैसे ही वेद (ज्ञान-विज्ञान) भी सबके लिए प्रकाशित किये हैं। वेद में **''मनुर्भव''** मननशील मनुष्य बनो, ऐसी शिक्षा मिलती है। वेद में मनुष्यों को संबोधित किया गया है, किसी विशेष देश, जाति या रंग, वर्ग के मनुष्य को नहीं। वेदों की शिक्षायें सर्वथा पवित्र, निष्पक्ष, न्याययुक्त, सार्वकालिक, युक्तियुक्त तथा

विज्ञानसम्मत हैं। समस्त आध्यात्मिक, आधिदैविक एवं आधिभौतिक विद्याओं का मूल उसमें है। वेद संहिता में सारा ज्ञान-विज्ञान बीज रूप में विद्यमान है।

वेदों को स्वतः और अन्य ग्रन्थों को परतः प्रमाण मानने का, जो प्राचीन विश्वास आर्यों में चला आ रहा है, उसी को मान्य समझकर वेदों का स्वाध्याय करके केवल संहिताओं से ही अपने धर्म-कर्म की शिक्षा ग्रहण करें। इसका कारण स्पष्ट है कि अन्य ग्रन्थों में मनुष्यों की कपोल कल्पना का होना सम्भव है, किन्तु वेद संहिता ईश्वर प्रदत्त हैं, इसलिए उनके आदेश निर्भ्रान्त हैं। वेदों की उपेक्षा करके आसुरी सिद्धान्तों को ग्रहण करने से ही हमारा पतन हुआ (**वैदिक सम्पत्ति**, पं. रघुनन्दन शर्मा) अनार्षता के कारण नवीन सम्प्रदायों का प्रवर्तन और वैदिक साहित्य के विध्वंस (मिलावट) के कारण ही आज हिन्दुओं में नाना प्रकार के कुसंस्कार, मूर्तिपूजा, छूआछूत, अविद्या, आलस्य और अनैक्यता दिखायी पड़ती है। धर्म के नाम से मद्य, मांस, व्यभिचार, जंगली व्यवहार (शक्ति के जोर पर अपने से छोटों को दबाना), दुर्व्यसन और अनाचार भी हिन्दुओं (आर्यों) में प्रविष्ट हुए हैं। **जहाँ वंचक और अविवेकी मनुष्य गुरु बन जायें, वहाँ विद्या का प्रचार कैसे हो सकता है?** यह देखा गया है कि वैदिक धर्म को छोड़कर बाकी सभी पंथ, सम्प्रदाय का प्रवर्तन किसी न किसी महापुरुष ने किया है।

वैदिक साहित्य को छोड़कर हिन्दुओं के अन्य साहित्य को देखने से अनार्षता और सम्प्रदायवाद का दर्शन होता है। पुराणों में कितनी गप्पें हैं तथा सभी पुराणों में आपसी कितना विरोधाभास है, इसका हिन्दुओं को पता नहीं है। पुराणों के कर्त्ता महर्षि वेदव्यास जी को बताया जाता है। पुराणों के लेखक यदि महर्षि वेदव्यास जी होते, तो उसमें इतने गपोड़े नहीं लिखे गये होते, क्योंकि व्यास जी बड़े विद्वान्, सत्यवादी, धार्मिक तथा योगी थे। पुराण परस्पर विरोधी सम्प्रदायी लोगों के बनाये कपोल कल्पित ग्रन्थ हैं। इसी प्रकार जैन व बौद्ध मत अनीश्वरवादी हैं, सर्वव्यापक, सृष्टिकर्ता ईश्वर को नहीं मानते। केवल जीव एक चेतन तत्व मानते हैं। इनके ग्रन्थों में असम्भव कहानियां भरी हैं। बौद्ध मत तो विश्व को दुःखों का घर ही मानता है। बाईबल व कुरान में क्या है? वे कितने सच्चे तथा मानव के हितकारी हैं, ये भी

सामान्य जनों को पता नहीं है। बाईबिल में तो पुराणों से भी ज्यादा गप्पें हैं, साथ ही विज्ञान विरोधी बातें भरी हैं। कुरान में भी विज्ञान की कोई बात नहीं है। कुरान का खुदा तो आदेश देता है– 'बस जब तुम मिलो, उन लोगों से कि काफिर हुए, बस मारो, गर्दन उनकी चूर कर दो, उनको.......... लगता है, कुरान का खुदा और मुसलमान गदर मचाने, सबको दुःख देने और अपना मतलब साधने वाले दयाहीन हैं। मध्यकाल में वैदिक साहित्य, आचार–विचार, व्यवहार में आसुरी संस्कृति का संमिश्रण हुआ। (विस्तृत जानकारी के लिए ''वैदिक सम्पत्ति'' पं. रघुनन्दन शर्मा का ग्रन्थ पढ़ें) वेद संहिता में (वेदपाठी ब्राह्मणों के पुण्य प्रताप से वे शुद्ध मिलते हैं) मिलावट न कर पाने से आसुरी लोगों ने वेदों के भाष्य कर उसमें वाममार्गी, अवैज्ञानिक, अनैतिक और असम्भव बातें लिख दी। वेदों का पढ़ना शूद्र और स्त्री जाति के लिए निषिद्ध किया गया। इस अनार्ष साहित्य के कारण ही आर्य–अनार्य–द्रविड़, मूल निवासी–आक्रमणकारी, उत्तर–दक्षिण भारतीय, साम्य–समाज–पूंजीवाद, उच्च–नीच, छूआछूत इत्यादि कल्पित व अहितकारी वाद निर्माण किये जा रहे हैं।

इसके अतिरिक्त आधुनिक विज्ञान भी अब संदिग्धता के कगार पर खड़ा है। ऊर्जा, मूलकण, सृष्टि की उत्पत्ति सिद्धान्त अभी भी परिपक्व नहीं बने हैं। इस विज्ञान का विनियोग ऐसी तकनीक में होता है कि इससे पर्यावरण का रख रखाव, मनुष्य का स्वास्थ्य, समाज में समानता, निसर्ग का स्वास्थ्य, वैदिक सम्पदा इत्यादि नष्ट प्रायः हैं। इन दुष्परिणामों के साथ–२ भोगवादी संस्कृति को पनपने में इसका बड़ा हाथ है। साम्यवाद, पूंजीवाद और भोगवाद ने अनेक समस्याएं (आतंकवाद, भ्रष्टाचार, व्यभिचार, असहिष्णुता, बेरोजगार, गरीबी, भुखमरी इत्यादि) विज्ञान का दुरुपयोग कर निर्माण की हैं। मात्र भौतिकवाद अथवा मात्र अध्यात्मवाद से पूर्ण सुख, शान्ति और समृद्धि सम्भव नहीं, इस हेतु विज्ञान को भी सत्य धर्म से जुड़ना होगा।

आचार्य अग्निव्रत जी नैष्ठिक अपनी ''मेरा जीवन व्रत'' तथा ''सत्य धर्म तथा कल्याणकारी विज्ञान की ओर'' पुस्तकों में धर्म और विज्ञान के समन्वय की आवश्यकता प्रतिपादन करते हुए लिखते हैं कि **'जिस दिन विज्ञान सत्य धर्म को साथ लेकर अनुसंधान करेगा, तब**

सारा विश्व भोगवाद की स्पर्धा को विकास नाम से सम्बोधित न करके त्याग में संतुष्ट रहकर आवश्यक, उपयोगी तथा निरापद आविष्कार ही करेगा। इससे न तो प्राकृतिक संसाधनों की न्यूनता होगी और न ही कृत्रिम अभाव और सामाजिक असमानताजन्य, अशान्ति व असन्तोष पनपेगा। इस प्रकार के सुखद समाज को बनाने की भावना ऋषियों की सदैव से रही है। ऋषि दयानन्द जी तो परमाणु से लेकर परमेश्वर तक का यथार्थ ज्ञान व उससे अपना व दूसरों का उपकार करना ही विद्वानों का कर्तव्य बताते हैं।' यहां पर अभी तक मैंने वैदिक धर्म से अलग होने के कारण उत्पन्न हुए विभिन्न सम्प्रदायों, विचारधाराओं की क्या परिणामी अवस्था हो गई, उसका किंचिन्मात्र उल्लेख किया है। इन सबकी पृष्ठभूमि पर मेधावी लेखक आचार्य श्री अग्निव्रतजी ने सत्य सनातन वैदिक धर्म का दृष्टिकोण रखा है, साथ में मत-मतान्तर सम्प्रदायों का भी दृष्टिकोण समाज के सम्मुख प्रस्तुत करते हुए पाठकों को पूर्वाग्रह छोड़कर निर्णय लेने को कहा है कि **"बोलो, अब किधर जाओगे?"**

वैदिक वैज्ञानिक आचार्य श्री अग्निव्रतजी नैष्ठिक एक सिद्धहस्त लेखक, गहन चिन्तक, सुलझे विचारक और उच्च कोटि के वक्ता हैं। धर्म के सम्बंध में आपका दृष्टिकोण संकुचित न होकर यथार्थ और व्यापक है। विशुद्ध वैदिक ज्ञान-विज्ञान को पुनः उजागर करने हेतु आप कटिबद्ध हैं। आपने ऋग्वेदीय ब्राह्मण ग्रन्थ ऐतरेय ब्राह्मण का वैज्ञानिक भाष्य किया है। ऐसा भाष्य विश्व में प्रथम बार आचार्य जी ने ही किया है। इस भाष्य के द्वारा आधुनिक सैद्धान्तिक भौतिकी को एक क्रान्तिकारी दिशा मिल सकेगी, ऐसा मेरा विश्वास है। यह ग्रन्थ **"वेदविज्ञान-आलोकः"** नाम से चार भागों में कुल २८०० पृष्ठों में प्रकाशित हुआ है। विभिन्न आर्य पत्रिकाओं में आपके समीक्षात्मक और धार्मिक विषयों पर विविध पठनीय लेख प्रकाशित हुए हैं। आप श्री वैदिक स्वस्ति पन्था न्यास (वेद विज्ञान मन्दिर) के अध्यक्ष एवं आचार्य हैं। 'वेदविज्ञान-आलोकः' नामक विशालकाय ग्रन्थ के अतिरिक्त निम्नलिखित पुस्तकें भी आपके द्वारा प्रकाशित हैं-

१. मांसाहार : धर्म, अर्थ एवं विज्ञान के आलोक में

२. राष्ट्र अभ्युदय योजना (प्रथम सोपान)
३. चेतावनी : देश व धर्म संकट में है
४. मेरा जीवन व्रत
५. वेदार्थ समर्पणम्
६. सत्यार्थ प्रकाश - उभरते प्रश्न, गर्जते उत्तर
७. विज्ञान क्या है?

मुझे आशा ही नहीं बल्कि पूरा विश्वास है कि यह पुस्तक पाठकों को विवेक से विचार करने को बाध्य करेगी। जिस दिन विश्व भर के लोग पूर्ण निष्पक्ष होकर सत्य का ग्रहण और असत्य का त्याग करने का सत्साहस करेंगे, उस दिन सम्पूर्ण भूमण्डल पर एक सत्य धर्म का शासन होगा, एक ईश्वर की पूजा होगी। साम्प्रदायिक हिंसा, वर्ग संघर्ष, देश संघर्ष आदि समाप्त होकर सारा विश्व परमपिता परमात्मा का एक परिवार बनने की दिशा में अग्रसर होगा, सभी का कल्याण होगा।

इसी मंगलकामना के साथ

ओ३म्। इन्द्रं वर्धन्तु अप्तुरः। कृण्वन्तो विश्वमार्यम्। अपघ्नन्तो अराव्णः।। ऋग्वेद।।

(ग) पुरोवाक्

मेरे देशवासियो एवं संसार के मानवो!

हम सभी परमपिता परमात्मा की सन्तान होने से सदा से ही भाई के सम्बन्ध में बंधे हैं और उस पिता परमात्मा ने ऐसा ही विचार कर मानव का निर्माण किया। हम मानव परमात्मा की सर्वश्रेष्ठ परन्तु सबसे उत्तरदायी सन्तान हैं किन्तु हमारे घोर दुर्भाग्य से आज हमारे हृदय परस्पर घृणा, द्वेष, वैर, ईर्ष्या व हिंसा से ऐसे भर गये हैं कि हम मानव-मानव के बीच तो क्या, सहोदर भाई-बहनों तक में प्रेम नहीं रहा। देश, भाषा, सम्प्रदाय, कथित जातिवाद, निर्धन-धनी आदि अनेक वर्गों में मां मानवता खण्ड-खण्ड हो चुकी है। मानवता वा राष्ट्र के कई हितैषी महानुभाव अपने-अपने ढंग से सबको जोड़ने का प्रयत्न भी करते सुने वा देखे जाते हैं। परन्तु दवा करने के साथ-साथ रोग बढ़ता ही जा रहा है।

इस गम्भीर व जटिल परिस्थिति में मैंने सम्पूर्ण मानव जाति की एकता व कल्याण हेतु हृदय व मस्तिष्क को झकझोरने वाली इस पुस्तक को लिखना उचित समझा है। मैं निश्चितरूपेण यह स्वीकारता हूँ कि जब हम सब परमपिता की सन्तान हैं, तब हममें परस्पर भेद होना ही नहीं चाहिये। मैंने विभिन्न सम्प्रदायों के आधार ग्रन्थों को देखा तथा अनेक राष्ट्र-चिन्तक कहे जाने विचारकों के विचारों को भी यदा कदा जानने का प्रयास किया है। तो मुझे प्रतीत हुआ कि मूल को भूलकर ही सब लोग परस्पर एक दूसरे के शत्रु बने हुये हैं। यद्यपि मैं वैदिक विज्ञान के उच्च स्तरीय अध्ययन व अनुसंधान के द्वारा आधुनिक विज्ञान को एक नयी दिशा देने के लिये कृतसंकल्प हूँ और मुझे इतर विषयों पर विचारने का कोई अवकाश नहीं मिलता परन्तु मैंने विचार किया कि अब तक मैंने अपने शोध कार्य का परिचय कराने के लिये जो भी साहित्य लिखा, वह केवल वेद व विज्ञान प्रेमियों के प्रति समर्पित था। मेरे पास कोई भी ऐसी पुस्तक नहीं थी, जिससे मैं अपने शोध कार्य को विश्व के अन्य भाइयों के सम्मुख भी प्रस्तुत कर सकूँ, साथ ही सम्पूर्ण मानव जाति को एकता का सन्देश दे सकूँ। अनेक बार विज्ञान

की गंभीर चर्चा में हम सामाजिक, पारिवारिक, राष्ट्रिय व वैश्विक समस्याओं को भूल ही जाते हैं और यह समाज भयंकर मार्ग पर चला जा रहा होता है, इधर हम वैज्ञानिक बने रहकर उधर से सर्वथा अनजान बने रहते हैं। विज्ञान के ऐसे अध्येता कम ही होते होते हैं, जो विज्ञान से बाहर भी नाना समस्याओं को अनुभव करके उनके समाधान के लिए चिन्तित भी रहते हैं। हमारे एक साथी व न्यासी आदरणीय प्रोफेसर वसन्त कुमार जी मदनसुरे ऐसे ही व्यक्ति हैं, जिन्हें इस राष्ट्र व विश्व की समस्याओं से सदैव पीड़ा रहती है। उन्होंने इस पुस्तक की सुन्दर व महत्वपूर्ण भूमिका भी लिखी है, उसमें उन्होंने अपनी पीड़ा को दर्शाया भी है। एतदर्थ मैं उनका भी आभार व धन्यवाद व्यक्त करता हूँ।

इस पुस्तक का प्रथम संस्करण सन् २०११ में मैंने प्रो. वसन्त जी मदनसुरे तत्कालीन शोधसहायक तथा प्रिय नितेश शर्मा के आग्रह पर प्राकृतिक चिकित्सालय में रहते हुए लिखा था। अब यह इसका द्वितीय संस्करण कुछ संशोधनों के साथ तैयार किया है। इस कार्य में मैं अपने सभी संरक्षकों व न्यासियों का हार्दिक धन्यवाद व्यक्त करता हूँ, जिन्होंने इसके द्वितीय संस्करण को तैयार करने के लिए आग्रह किया व उन दानदाताओं को, जिन्होंने साहित्य प्रकाशन हेतु आर्थिक सहयोग किया। इस पुस्तक के संपादक अपने सुयोग्य शिष्य प्रिय विशाल आर्य (उपाचार्य), जिन्होंने डिजाइनिंग का भी कार्य कुशलतापूर्वक संपन्न किया। स्टाफ में प्रिय सुमित शास्त्री, प्रिय विक्रमसिंह, प्रिय नेथीराम चौधरी, प्रिय पारस सोलंकी, प्रिय रघुवीर सिंह, प्रिय मूलदास जिन्होंने अपने-२ कार्य मनोयोगपूर्वक किये, को साशीष धन्यवाद देता हूँ।

अन्त में मैंने इस पुस्तक में जिन विद्वानों द्वारा लिखित, व्याख्यात वा सम्पादित वा प्रकाशित ग्रन्थों को उद्धृत किया है, उन सभी मान्य विद्वानों का मैं हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ। यदि कोई पाठक उस उद्धृत भाष्य, लेख आदि से सहमत न हो, तो उनसे निवेदन है कि उन उद्धृत लेखों वा विचारों के प्रति मैं उत्तरदायी नहीं हूँ बल्कि वे विद्वान् अथवा उन ग्रन्थों के प्रकाशक ही इसके उत्तरदायी हैं। हाँ, महर्षि दयानन्दजी सरस्वती वा आर्य विद्वानों के लेखों से असहमत पाठकों से

यह निवेदन अवश्य करूंगा कि वे उन-उन मूल ग्रन्थों को निष्पक्ष व शान्त हृदय होकर एक बार स्वयं पढ़ने का कष्ट करें।

अन्त में इतना निवेदन और भी है कि इस पुस्तक में मेरा विशेष कुछ नहीं है बल्कि जगद्धितैषी भगवत्पाद महर्षि दयानन्द की दृष्टि का ही परिणाम मात्र है। मैं तो उन्हीं की दृष्टि का अनुवर्ती होकर यह सब यत् किंचित लिखता रहता हूँ । उन्हीं की दृष्टि को आधार बनाकर समस्त विश्व के वैज्ञानिक जगत् में एक बहुत बड़ा क्रान्तिकारी कार्य करने के लिये दृढ़ संकल्पित हूँ। इस महत्तम कार्य में आप सबको सप्रेम सादर आमंत्रित करते हुये जानना चाहता हूँ ''बोलो! मेरे पाठक बोलो! आप किधर जाओगे?'' आपके उत्तर की आशा व प्रतीक्षा में-

आपका अपना ही

आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक

पूर्वपीठिका

(क) प्राचीन गौरव

मेरे प्यारे देशवासियो एवं पावन सनातन वैदिक धर्मावलम्बियो! ईश्वर की कृपा से हम एक महान् देश में जन्मे, पले एवं बढ़ रहे हैं तथा विश्ववारा वैदिक संस्कृति एवं वैदिक मानव धर्म के अप्रतिम ज्ञान-विज्ञान की शीतल छाया में अखिल विश्व को एक ही परमपिता परमात्मा का प्यारा परिवार मानकर सनातन काल से ही सम्पूर्ण भूमण्डल के प्राणियों के सुख व शान्ति की कामना करते हुए सत्य, न्याय, करुणा, प्रेम, सदाचार जैसे महान् मानवीय मूल्यों का पावन सन्देश देते चले आ रहे हैं। इसी कारण तो कभी भगवान मनु ने कहा था-

''एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन्पृथिव्यां सर्वमानवाः।।'' (मनु. २.७४)

हमने संसार के प्रथम राजा भगवान् मनु के पश्चात् महाप्रतापी महाराजा मान्धाता, महाराज अश्वपति, महाराज दिलीप, हरिश्चन्द्र, श्रीराम, से लेकर चक्रवर्ती भरत आदि भूमण्डलप्रसिद्ध राजाओं के त्रिविध तापविहीन अत्यन्त सुखी, समृद्ध ज्ञान विज्ञान के चरमोत्कर्ष को प्राप्त महान् राजव्यवस्थाओं को पढ़ा व सुना है। हमारा राष्ट्र चक्रवर्ती व जगद्गुरु के रूप में प्रसिद्ध रहा है। यद्यपि हमारा देश चक्रवर्ती था तथा भूमण्डल भर के सभी राष्ट्रों का संरक्षक था पुनरपि सभी राष्ट्र पूर्ण स्वतंत्र, सुखी, समृद्ध एवं सम्प्रभु थे। सर्वत्र, सर्वदा होने वाले यज्ञों के कारण इस भूमण्डल का पर्यावरण स्वस्थ सुरभित तथा सभी प्रकार की प्राकृतिक बाधाओं से मुक्त रहता था। रोग, शोक, भय, अज्ञान, अन्याय, अभाव एवं अधर्मादि दोषों से विमुक्त यह संसार हमारे देश के ही निर्देशन व संरक्षण में भ्रातृत्व व प्रेम के सूत्र में बंधा रहता था। संसार प्रसिद्ध श्रीराम राज्य का वर्णन करते हुये तभी तो भगवान् वाल्मीकिजी ने जो कहा था, उसे गोस्वामी तुलसीदास ने केवल दो पंक्ति में गागर में सागर भरते हुए कहा-

दैहिक, दैविक भौतिक तापा। रामराज नहिं काहू व्यापा।।
सब नर करत परस्पर प्रीती। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती।।
(रामचरितमानस)

अर्थात् उस काल में सम्पूर्ण दुःख दारिद्रय से मुक्त विश्व प्रेम के सूत्र में बंधा वेद पर पूर्णतया आरूढ़ था। यदि कहीं अवैदिकता, अधर्म, अन्याय का प्राबल्य होता था, तो हमारे धर्मरक्षक राजा दण्डनीति का आश्रय लेकर उसे दूर किया करते थे। सम्प्रदायों का कोई नामोनिशान नहीं था। कहीं कोई वर्गभेद, जातिभेद, भाषाभेद आदि नहीं था। **देव, मनुष्य, राक्षस, असुर, गन्धर्व, किन्नर, वानर, ऋक्ष, पक्षि, गृध, नाग, दैत्य, दानव आदि वर्ग मानव नामक प्राणी के समाज के ही अंग थे, जो उनकी राष्ट्रियता वा वंश आदि के आधार पर इन नामों से प्रसिद्ध हुये। आर्य, अनार्य, दस्यु नाम का कोई वर्ग विश्वभर में कहीं नहीं था, बल्कि ये तीनों गुणवाची शब्द थे।** यहाँ राक्षसी माता व मनुष्य ब्राह्मण पिता का एक पुत्र रावण अनार्य वा पापी कहलाया, तो उसी का अनुज विभीषण आर्य श्रेष्ठ कहाया। दैत्य प्रहलाद महान् आर्य हुआ, तो मन्थरा, शकुनि, दुर्योधन व धृतराष्ट्र जैसे मनुष्य अनार्यत्व के प्रतिरूप माने गये। हर अनार्य अर्थात् पापी दण्डनीय, तो हर आर्य (श्रेष्ठ) संरक्षणीय था। यहाँ जन्म नहीं बल्कि कर्म की पूजा थी। अपने पराये का भेद नहीं बल्कि विशुद्ध न्याय की व्यवस्था थी। सत्य एवं यथार्थ अहिंसा का साम्राज्य था, जो महाभारत युद्ध के कुछ काल पूर्व तक यथावत् चलता रहा। महाभारत के समय कर्म से अधिक जन्म को महत्व दिया जाने लगा। उस समय ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र वर्णों में कुछ-२ ऊँच-नीच का भाव आने लगा पुनरपि यह रोग व्यापक नहीं था। चारों वर्णों में परस्पर न केवल व्यवहारादि में एकता थी अपितु उनके मध्य वैवाहिक सम्बन्ध भी होते थे।

कुछ उदाहरण- श्रवण कुमार ब्राह्मण थे, जबकि उनके पिता वैश्य तथा माता शूद्रा थी।

शूद्रायामस्मि वैश्येन जातो नरवराधिप।
अज्ञानात्तु हतो यस्मात्क्षत्रियेण त्वया मुनिः।
तस्मात्त्वां नाविशत्याशु ब्रह्महत्या नराधिप।।

(वा. रामा. अयोध्याकाण्ड सर्ग ६३।५१, सर्ग ६४।५५ गीता प्रैस)

अर्थात् श्रवण ने राजा दशरथ से कहा– हे राजन्! मैं वैश्य से शूद्रा में पैदा हुआ हूँ। ।। ५१।।

श्रवण के पिता ने कहा– हे राजन्! चूँकि तुझ क्षत्रिय ने अज्ञान से श्रवण मुनि को मार दिया, इसलिए तुझे ब्रह्महत्या नहीं लगी। ।। ५५।।

महात्मा विदुर की पत्नी के पिता ब्राह्मण तथा माता शूद्रा थीं।
(महाभारत आदिपर्व के सम्भवपर्व अध्याय ११३, श्लोक १२ गीता प्रैस)

राजा धृतराष्ट्र की एक पत्नी वैश्यवर्ण की थी।
(देखें– उपर्युक्त अ. ११४)

श्रीराम के राजतिलक के समय सभी वर्णों को सादर आमन्त्रित किया गया था और सभी ससम्मान राजसभा में उपस्थित थे। धर्मराज युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय पतन होने पर भी शूद्रवर्ण में जन्मा परन्तु महान् धनुर्धर एकलव्य राजाओं की पंक्ति में विराजमान था। जब राजसूय यज्ञ में भगवान् श्रीकृष्ण की अग्रपूजा की घोषणा हुई, तब शिशुपाल ने उस यज्ञ में उपस्थित अनेक विशिष्ट पुरुषों के रहते श्रीकृष्ण की पूजा का विरोध किया था। उन विशिष्ट पुरुषों में एकलव्य की भी गणना करते हुए कहा था–

''नृपे च रुक्मिणि श्रेष्ठे एकलव्ये तथैव च।
शल्ये मद्राधिपे चैव कथं कृष्णस्त्वयार्चितः।।''

(महाभारत, सभापर्व, अर्घाभिहरण पर्व, अ. ३७ श्लोक १४)

कोई बताये कि यहाँ एक क्षत्रिय नरेश क्यों एकलव्य को विशिष्ट पुरुषों के रूप में सार्वजनिक रूप में गणना कर रहा था? यदि उसकाल में शूद्र को हेय माना जाता, तो ऐसा कैसे सम्भव था परन्तु पापी लोगों की कुटिलता व धूर्तता ने श्रीराम जैसे सर्वहितैषी के हाथों शूद्र शम्बूक की हत्या तथा गुरुवर द्रोणाचार्य द्वारा एकलव्य का अंगूठा दक्षिणा में मांगने के काल्पनिक प्रक्षेपों (मिलावट)से, जहाँ हमारे महापुरुषों को

बदनाम किया, वहीं सामाजिक वर्णव्यवस्था को कर्मणा से जन्मना बनाकर सर्वप्रिय शूद्र वर्ण पर अत्याचारों के कल्पित प्रसंग के चलते सामाजिक विघटन की नींव भी रख दी। विश्वपुरुष भगवान् मनु की मनुस्मृति में मनमाने प्रक्षेप करके इस मानव जाति को खण्ड–२ करने का कुटिल प्रयास हुआ, जिसका वर्णन हम यथा स्थान करेंगे। जरा विचारें कि वैदिक मनुप्रोक्त वर्ण व्यवस्था के कुछ क्षीण होने तथा जन्मना जातिव्यवस्था के विष का कुछ–२ अंकुरण होने के महाभारत काल में भी शूद्र को राजा के मंत्री बनने का अधिकार था। महाभारत शान्तिपर्व में राजधर्मानुशासन पर्व के ८५ वें अध्याय श्लोक ७–११ में महामति पितामह भीष्म ने धर्मराज युधिष्ठिर को उपदेश देते हुए मंत्रिमण्डल के आकार के विषय में कहा– राजा के मंत्रिमण्डल में ४ ब्राह्मण, ८ क्षत्रिय, २१ वैश्य, तीन शूद्र, एक सूत को सम्मिलित करें। ये वर्ण भी कर्मानुसार ही कहे हैं, न कि जन्मना जाति के आधार पर। तब कौन मूर्ख होगा, जो शूद्र (श्रमिक) के शोषण की कल्पना करेगा।

हां, धर्म–अधर्म, सत्यासत्य का संघर्ष सदैव होता रहा और होना भी चाहिये। विश्वभर के किसी भी देश का संविधान इस संघर्ष को अवैध वा अनावश्यक नहीं कह सकता और न कोई भी सभ्य समाज ही ऐसा कहेगा। अपना देश, साथ ही अन्य देश भी सुखी, समृद्ध, सशक्त व ज्ञान–विज्ञान से सम्पन्न थे। मनुष्य समाज के ही अंग दानव, असुर, राक्षसादि वर्गों में मांसाहार, मदिरापान व हिंसा आदि भयंकर दोष अवश्य थे, इस कारण देव व मनुष्य वर्गों का इन वर्गों से संघर्षण बना ही रहता था, पुनरपि उस समय के राक्षसादि वर्ग भी वर्तमान के जनसाधारण वा कुलीन व विकसित माने जाने वाले कथित धार्मिकों से सदाचारादि दृष्टि से श्रेष्ठ थे। राक्षसराज रावण, जिसके पुतले का दहन करके यह अभागी आर्य (हिन्दू) जाति अपने को धर्मात्मा मानने का ढोंग करती है, और जो मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम की तुलना में अति निकृष्ट व्यक्ति था, आज के कथित धर्माचार्यों, राजनेताओं व सामाजिक धुरन्धरों से भी श्रेष्ठ था। उस महाबली रावण ने विश्वसुन्दरी भगवती सीता जी का अपहरण करके भी उससे कभी कोई कुचेष्टा करने का प्रयास तक नहीं किया। वाल्मीकि रामायण के कुछ अध्येता इसे नलकूबर के शाप के भय का परिणाम कहेंगे। वस्तुतः यह महर्षि वाल्मीकि की रामायण में कुछ लोगों की प्रक्षिप्त कल्पना है। ऐसे लोग रावण में किसी

भी अच्छाई का होना स्वीकार करने को उद्यत नहीं है। वरदान व शापों की एक बड़ी विचित्र कल्पना अतिरंजित रूप में हमारे इतिहास को विकृत करने में एक बहुत बड़ा कारण रही है।

(ख) पतन का प्रारम्भ

दुर्भाग्य से इस देश व संसार के पतन की आधारशिलारूप महाभारत का युद्ध हुआ। महर्षि दयानन्द जी महाराज सत्यार्थप्रकाश के एकादश समुल्लास में लिखते हैं-

''ऐसे शिरोमणि देश को महाभारत के युद्ध ने ऐसा धक्का दिया कि अब तक भी अपनी पूर्व दशा में नहीं आया। क्योंकि जब भाई को भाई मारने लगे, तो नाश होने में क्या सन्देह?... जब बड़े-२ विद्वान् राजा महाराजा ऋषि-महर्षि लोग महाभारत युद्ध में बहुत से लोग मारे गये और बहुत से मर गये, तब विद्या और वेदोक्त धर्म का प्रचार नष्ट हो चला। ईर्ष्या, द्वेष, अभिमान आपस में करने लगे, जो बलवान् था वह देश को दबाकर राजा बन बैठा। वैसे ही सर्वत्र आर्यावर्त्त देश में खण्ड बण्ड राज्य हो गया, पुनः द्वीप द्वीपान्तर के राज्य की व्यवस्था कौन करे?...''

महर्षि के ये वचन देश की ही नहीं अपितु विश्व की राजनैतिक अव्यवस्था के कारण का स्पष्ट संकेत कर रहे हैं। उस भयानक युद्ध से देश की ब्रह्म शक्ति व क्षात्रशक्ति दोनों ही क्षीण होती चली गयीं। सत्य सनातन वैदिक धर्म उत्तरोत्तर क्षीण होता गया और शनैः-२ विभिन्न मत-मतान्तरों में विभक्त हो गया। इस कारण सम्पूर्ण विश्व के ऐक्य का आधार समाप्त होता चला गया। जहाँ अपने आर्यावर्त्त भारत देश में वेद के नाम पर अथवा उनकी प्रतिक्रियास्वरूप वेदविरोध में नित नवीन मतों सम्प्रदायों का जन्म हो रहा था, वहीं भूमण्डल के अन्य भागों में भी वेदभ्रष्ट हुये मानव समाज में भी नवीन-२ सम्प्रदाय उत्पन्न हो रहे थे। वेद के मर्मज्ञ विद्वानों के अभाव में वेदार्थ ज्ञान का लोप हो गया। प्राचीन महर्षि भगवन्तों ने वेद के व्याख्यान रूप ब्राह्मण ग्रन्थों में, जिन आख्यानों को प्रस्तुत किया, उन आख्यानों तथा वैदिक यौगिक पदों, अलंकारों के यथार्थ स्वरूप को नहीं समझने के कारण तत्कालीन

कथित वेदाध्येता संस्कृतज्ञों ने उन्हीं आख्यानों-अलंकारों को आधार बना कर अपने मन से विद्या-विज्ञान विरुद्ध एवं धर्मविरुद्ध दूषित काल्पनिक कहानियां गढ़ कर रामायण एवं महाभारत जैसे ऐतिहासिक महाकाव्यों में जोड़ दी गयीं। मनुस्मृति जैसे पावन मानव संविधान शास्त्र को मांसाहार, दुराचार, छूआछूत, नारीशोषण आदि अनेक जघन्य पापों का भण्डार बना दिया। इस दुष्काल में जहाँ कथित आचार्य लोग ऋषियों के ग्रन्थों में मनमाने दूषित प्रक्षेप कर रहे थे, वहीं महर्षि भगवत्पाद वेदव्यास जी के नाम से कल्पित कथित महापुराणों की रचना भी हो रही थी। इसके साथ ही अनेक उपपुराण कल्पित स्मृतियां व अनार्ष उपनिषद् भी रचे जा रहे थे। इन ग्रन्थों में यद्यपि वैदिक ज्ञान एवं मानव इतिहास के अनेक महत्वपूर्ण सूत्र विद्यमान थे, जो प्राचीन आर्ष साहित्य से लिये गये थे परन्तु इसके साथ ही अनेक अवैज्ञानिक चमत्कारों, वैदिकधर्मविरुद्ध पापपूर्ण कल्पनाओं, घटनाओं का भी दुःखद व घृणित समावेश किया जा रहा था। इन शिवपुराण, श्रीमद्भागवतादि कथित महापुराणों के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि इनमें से कोई भी ग्रन्थ महर्षि वेदव्यासजी महाराज जैसे पवित्रात्मा की रचना कदापि नहीं है। पुनरपि यह सिद्ध होता है कि इनके रचयिता भारतीय वैदिक परम्परा से परिचित विद्वान् आचार्य थे और सम्भवतः उन्होंने प्रारम्भ में अच्छा ही लिखा हो, परन्तु कुछ कालोपरान्त धूर्त लोगों, जो संस्कृतज्ञ तो थे परन्तु कामी, लोभी, क्रोधी, क्रूर आदि होने के कारण वैदिक पदों, आख्यानों वा अलंकारों में अपनी कामुकता, हिंसा आदि को अति कुटिल कल्पना से देखा और उसी दृष्टि से तिल का ताड़ बनाकर दूषित प्रक्षेप, जिस प्रकार आर्ष ग्रंन्थों में किये, उसी प्रकार इन अनार्ष पुराणों में भी कर दिये हैं। ऐसे करने वाले कौन हो सकते हैं, यह भी पृथक् अनुसंधान का विषय है। मेरे अनुमान से वेद एवं राष्ट्र के विरोधी धूर्तों ने संस्कृतज्ञ बनकर इनमें मिलावट की है, जिससे प्राचीन देवों, ऋषियों आदि को बदनाम किया जा सके। ब्रह्मवैवर्त्त, भविष्य आदि कुछ पुराण तो विशुद्ध धूर्तों की रचना प्रतीत होती हैं। वायु, ब्रह्माण्ड, मत्स्य आदि पुराणों में विद्याविज्ञान की चर्चा अधिक है। जो वेदधर्म सम्पूर्ण भूमण्डल में सृष्टि के आदिकाल से सनातन धर्म नाम से समस्त मानव जाति का धर्म था, उसके स्थान पर दुर्भाग्य से इन अश्लील व मूर्खता के भण्डार पुराणों से प्रसूत मिथ्या सम्प्रदाय ही सनातन धर्म के नाम से प्रसिद्ध होने लगे। ऐतरेय, शतपथ आदि, जो वैदिक व्याख्यान ग्रन्थ कभी पुराण

नाम से जाने जाते थे, उनको भुलाकर मध्यकालीन भागवत् आदि कुग्रन्थों को पुराण बताकर महर्षि वेदव्यास जी की रचना के रूप में मिथ्यारूप से प्रसिद्ध किया जाने लगा। वेद पढ़ने की परम्परा वेदपाठ तक सीमित रह गयी। पुनरपि समस्त **मानव जाति उन वेदपाठी ब्राह्मणों की चिर ऋणी रहेगी, जिन्होंने अनेक प्रकार के पाठों द्वारा परमपिता परमात्मा की अमर वेदवाणी को अपने कण्ठ में सुरक्षित रखकर वेदविरोधी दुष्ट शक्तियों से बचाये तो रखा।** यदि उन वेदपाठी ब्राह्मणों ने वेद ऋचाओं को कण्ठस्थ कर-करके अपने हृदय में सुरक्षित न रखा होता, तो सम्भवतः आज संसार को शुद्ध वेद उपलब्ध भी नहीं होते। परन्तु इसके साथ वेदभाष्य के नाम पर सायण, महीधर आदि अनेक आचार्यों ने वेद में भी अवैज्ञानिकता, मिथ्या कर्मकाण्ड, मांस-मदिरा-भक्षण, पशु-बलि, अति-अश्लीलता की सिद्धि करके सनातन वैदिक धर्म के नाम पर प्रचारित कर डाला। इन भाष्यकारों से पूर्व भी मद्य, मांस, मुद्रा, मछली व मैथुन इन पंच मकारों की पूजा धूर्त वाममार्गियों ने वैदिक धर्म के नाम पर अपने अश्लील तंत्र ग्रन्थों में कर दी। इस प्रकार लगभग महाभारत वा इससे कुछ पूर्व, जो वैदिक सनातन धर्म अपने सत्य, न्याय, ब्रह्मचर्य, करुणा, प्रेम, त्याग व महान् ज्ञान विज्ञान के लिए प्रसिद्ध था, वही क्रूर काल गति वा देश व विश्व के दुर्भाग्यवशात् अथवा हमारे पूर्वजों के प्रमाद-पाप के कारण मिथ्यात्व, अन्याय, क्रूरता, भेदभाव, घृणा, द्वेष, उन्मुक्त यौनाचार आदि का प्रबल पोषक बन गया। ऋषियों के काल में 'यज्ञ' शब्द न केवल अग्निहोत्र से अश्वमेध पर्यन्त महान् यज्ञों के लिए प्रचलित था, अपितु अनेक प्रकार के परोपकार के कार्यों, यन्त्र निर्माण आदि टैक्नोलोजी के लिये भी प्रयुक्त होता था, वह 'यज्ञ' शब्द केवल अग्निहोत्रादि कर्मकाण्ड के लिए ही सीमित हो गया। इसके साथ ही यह और भी दुःखद व दुर्भाग्यजनक था कि जो अग्निहोत्रादि यज्ञ गोघृत, मेवे, फल, अन्न, विभिन्न बुद्धिवर्धक, रोगनाशक, बलवर्धक एवं सुगन्धवर्धक सामग्री के होमने से पर्यावरण को स्वस्थ व सुरक्षित रखता था। जिससे प्राणि समुदाय व वनस्पति जगत् स्वस्थ वा निरोग होते थे, साथ ही अतिवृष्टि, अनावृष्टि, भूकम्पादि प्रकोप नहीं होते थे, वही यज्ञ मध्यकाल में रक्त, मांस, मज्जा आदि की आहुतियों से परिपूर्ण होकर पाप-पाखण्ड, दुर्गन्ध व रोगों का भण्डार बन गया। यज्ञमण्डप ने बूचड़खाने का रूप ले लिया। अहो! जिस परम पवित्र आर्यावर्त्त भूमि पर यज्ञशालाओं में महान् वेदद्रष्टा, जगद्धितैषी, महर्षि भगवन्त

वेदमंत्रोच्चार से सुन्दर पदार्थों की आहुतियां अग्नि में डालकर सकल संसार के कल्याण की यथार्थ कामना करते थे, वहीं दुर्भाग्यवश उन्हीं ऋषियों के अभागे वा पापी वंशज ब्राह्मणंमन्य लोग भारतीय वैदिक वेशभूषा व शिखा-सूत्र को धारण करके हाथ में तलवारें लेकर पशुओं का खून बहाकर यज्ञ में उसकी आहुतियां देकर और केवल पशु ही नहीं अपितु, मानव की भी बलि चढ़ाकर, उस मृत प्राणी के स्वर्ग के साथ उसके परिजनों के स्वर्ग की मिथ्या कल्पना करके जल्लाद का रूप धारण करते थे। ये नरपिशाच न केवल जल्लाद के रूप होते थे, अपितु अश्वमेधादि यज्ञ में घोड़े के साथ मानव नारी का यौन संयोग कराने के जघन्य व अश्लील कुकृत्य करके अपने को धन्य मानने की धूर्तता भी करते थे। महीधर जैसे वेदभाष्य के संकेत, जिन्हें हम एक-दो संकेत से ही आगे दर्शाने का प्रयास करेंगे, के अनुसार तो यज्ञमण्डप उन्मुक्त यौनाचार के घृणित केन्द्र बने होते थे। ऐसे अन्धकाल में इन सब घोर पाप, जो वैदिक धर्म का आवरण ओढ़े हुये थे, की प्रतिक्रिया स्वरूप दो प्रकार के विचारों वा सम्प्रदायों का उदय हुआ। इनमें **एक प्रकार था चारवाक, जो धर्म के नाम पर प्रचलित पापों के कारण धर्म, ईश्वर, आत्मा व कर्मफलव्यवस्था को नकार कर 'खाओ पीओ और मौज करो' का प्रचार करते हुए उपर्युक्त दुष्टधर्मात्माओं का कठोर खण्डन कर रहा था, तो दूसरी ओर महात्मा बुद्ध एवं महावीर स्वामी जैसे महान् पवित्रात्माओं का भारतभूमि पर आगमन हुआ। परन्तु वेदविद्या के यथार्थ स्वरूप के अभाव वा न्यूनता के कारण, विशुद्ध वैदिक सनातन आदर्श व विज्ञान के संयुक्तरूप धर्म को नहीं समझने के कारण अपने-२ पवित्र मनोभावों के आधार पर पृथक-२ मार्ग प्रारम्भ किया।** सत्य व अहिंसादि के नाम पर चले ये मत भी धीरे-२ उनके अनुयायियों द्वारा असत्य, अन्याय, अवैज्ञानिकता और प्रतिशोध के मार्ग पर चलकर वैदिक साहित्य के विध्वंसक बन गये। मानो वे लोग सिरदर्द दूर करने के लिए सिर ही काटने में अपने को धन्य समझने लगे। मैं समझता हूँ कि हिंसक व दुराचारी बने कथित वैदिक धर्म के विध्वंस के अतिरिक्त उन पवित्रात्मा मतावलम्बियों परन्तु वेदानभिज्ञ आचार्यों के पास अन्य कोई विकल्प भी नहीं था। यह प्यारे राष्ट्र व धर्म का दुर्भाग्य ही था। ऐसी दुःखद परिस्थिति में **एक अत्यन्त प्रतिभासम्पन्न महापुरुष भगवान् शंकराचार्य का आविर्भाव इस धरा पर हुआ। उन्होंने वैदिक सत्य सनातन धर्म का ध्वज लेकर समस्त आर्यावर्त्त भारत देश की सांस्कृतिक एकता**

का महान् प्रयास किया। बौद्ध व जैन मत के कारण जो वैदिक मत का विरोध किया जा रहा था, उसको धराशायी करने में वे सफल रहे। बौद्ध व जैन मत से प्रारम्भ हुई पतनकारी मूर्तिपूजा को भी कुछ विराम लगा परन्तु किसी षड़यन्त्र के कारण अल्प आयु में ही संसार को त्याग कर वे न तो वेदार्थ के नाम से आयी भयंकर व घृणित विकृति को दूर करने में सफल ही हो सके और न वेदों तक पहुंचकर वे उसके वा अन्य आर्ष ग्रन्थों के ज्ञान विज्ञान का प्रकाश ही इस देश में कर सके। उनके इस लोक से जाने के उपरान्त उनके अनुयायी भी अन्य महापुरुषों के अनुयायियों की भाँति अपने आदर्श पुरुष के मनोभाव के प्रतिकूल ही चलकर स्वयं को ब्रह्म मानकर स्वधर्म, परिवारधर्म, राष्ट्रधर्म को भूलकर मिथ्या वैरागी बनने लगे। **जैन व बौद्ध मतावलम्बी मिथ्या अहिंसावादी बन कायर हो गये, वहीं ये कथित अद्वैतवादी संसार को ही मिथ्या मानकर सभी धर्म व कर्त्तव्यों को तिरस्कृत करने रूप पाप से ग्रस्त हो गये, ऐसी दशा में देश व धर्म की रक्षा कौन करता?**

आर्य अर्थात् श्रेष्ठ मानवों के देश भारत में सृष्टि-रचयिता एवं वेदप्रणेता एक परमपिता परमात्मा की पूजा के स्थान पर परस्पर अन्तर्विरोधों से भरे विभिन्न कल्पित देवी देवताओं की प्रतिमाओं की पूजा का मूर्खतापूर्ण प्रचलन प्रारम्भ हो गया। ईश्वर की सत्ता पर मौनभाव रखने वाले गोतम बुद्ध वा महावीर स्वामी के शिष्यों ने अपने-२ गुरुओं वा कथित तीर्थंकरों की प्रतिमाओं का पूजन प्रारम्भ कर दिया और जन सामान्य भी वीभत्स यज्ञादिक मिथ्या वैदिक पूजा पद्धति को त्यागकर बौद्ध-जैन मतों को स्वीकार करने लगा। ऐसी परिस्थितियों में वेद से पतित परन्तु वेद व सनातन धर्म का नाम लेने वाले नकली ब्राह्मण (जन्मना ब्राह्मण) उसी समय कथित पुराणादि दूषित ग्रन्थों की रचना कर ईश्वर के २४ अवतारों की कल्पना करके अपनी-२ पृथक् व वेदविरुद्ध परन्तु वैदिक आवरण वाली पूजा पद्धति का विकास करने लगे। इस प्रकार विश्व में मूर्त्तिपूजा रूपी बहुत बड़ी धार्मिक बुराई का उदय हुआ, जिससे परमात्मा की सच्ची पूजा का सर्वथा लोप हो गया। ब्रह्मा, विष्णु, शिव आदि, जो निराकार परमात्मा के गुणवाचक नाम थे तथा इस भूमण्डल में इन नामों वाले देव वर्ग, जो मनुष्य जाति का ही एक वर्ग था, के अति प्रसिद्ध राजा भी हुये। ये महान् योगी, वेदद्रष्टा, महावैज्ञानिक एवं परमयोद्धा थे, ऐसे पूज्य पुरुषों तथा श्रीराम, श्रीकृष्ण,

वानर वर्ग के महाबली हनुमान्, नारी वर्ग में देवी भगवती उमा जैसे महामानवों को ईश्वर बताकर उनकी कल्पित प्रतिमायें बनाकर पूजन का भी कैसा दुर्भाग्य प्रारम्भ हो गया! **बड़े शोक की बात है कि वेद-वेदांग तत्ववेत्ता महावीर हनुमान् को इस मूर्ख आर्य (हिन्दू) जाति ने चमत्कारी, चपल बन्दर नामक प्राणी बता दिया, परमनीतिशास्त्री जाम्बवान् को रीछ, वानप्रस्थाश्रमी पूर्व महाराजा आर्य जटायु को गिद्ध बताया गया। सच्चिदानंद निराकार ओंकार परमात्मा को भी सूअर, मछली, कछुआ आदि बताकर उनकी प्रतिमाओं का पूजन उस परमपिता परमात्मा का कैसा क्रूर उपहास है! अयि आर्य (हिन्दू) जाति! तेरे अतिरिक्त इस भूमण्डल पर कौन मूर्ख और पापी हुआ होगा, जो अपने पूज्य पूर्वज महामानवों को ही नहीं, अपितु सकल सृष्टि-कर्त्ता परमात्मा को भी पशु आदि का घृणित रूप देने का घोर अपराध करेगा!** अहो! एक साधारण व मूर्ख व्यक्ति के माता पिता को यदि कोई जानवर बता दे, तो वह मूर्ख व्यक्ति भी सहन नहीं कर सकेगा और अपने माता-पिता का अपमान करने वाले के प्राणहरण के लिए दौड़ पड़ेगा। परन्तु अपने को सनातन वेदमत का भक्त मानने वाली मूर्ख आर्य (हिन्दू) जाति! क्या परमपिता परमात्मा वा अपने पूर्व महापुरुषों का अपमान ही तेरे लिये भक्ति का विषय है? क्या इनका मूल्य तेरे माता-पिता वा तुझसे भी कम है? क्या इनकी निन्दा वा अपमान ही तेरा मुख्य कर्त्तव्य रह गया है? शोक है कि इस महापाप ने सम्पूर्ण आर्य (हिन्दू) जाति व इस आर्यावर्त देश का नाश तो कर दिया परन्तु इसको अब तक भी लाज नहीं हैं। अभी तक भी वही पाप प्रवाह चल रहा है। राक्षस, दैत्य, असुर, गन्धर्व, किन्नर, नाग आदि भी, जो मानव जाति के वर्ग विशेष थे, उन्हें भी चित्र विचित्र प्राणी के रूप में प्रचारित करके सम्पूर्ण इतिहास को ही अविद्याऽन्धकार के गहरे सागर में डुबोने का भारी पाप किया गया। यही कारण है कि **आज इस भारत देश का कथित बुद्धिजीवी मनुष्य भारतीय इतिहास का ही पक्का विरोधी बन गया है।** अयि! कथित सनातनधर्मी बन्धुओ! जरा विचारो कि क्या आपका मस्तिष्क सूर्य को निगलने वाले हनुमान्, सागरों को पीने वाले अगस्त्य, पृथिवी को उठाकर भागने वाले हिरण्याक्ष वा हिरण्यकश्यप, लाखों किमी लम्बे-चौड़े घृत, शहद, दूध आदि के महासागर मानने के लिए तैयार है? यदि हां, तो आप क्यों अपने बच्चों को विद्यालयों में भेजकर विज्ञान की शिक्षा

दिलाने का अपराध कर रहे हो? आप दो नावों में सवारी क्यों करना चाहते हैं? पूछो! अपने आत्मा से पूछो। क्या हो गया है, उसे?

मेरे प्यारे प्रबुद्ध पाठक! आप शंका करेंगे कि मैं पूर्व में लिख चुका हूँ कि आर्य, अनार्य, दस्यु नाम की कोई जाति वा वर्ग कभी नहीं हुआ, तो हिन्दू को आर्य जाति से क्यों सम्बोधित कर रहा हूँ? आपकी शंका यथार्थ है परन्तु मेरा निवेदन है कि **आर्य, अनार्य गुणवाची शब्द ही थे, जिसके बारे में विस्तार से आगे इसी पुस्तक में पढ़ेंगे। आर्य अर्थात् श्रेष्ठ मनुष्य विशेषतया रहने से यह देश आर्यावर्त्त कहलाया। धीरे-२ इस देश में रहने वाले मनुष्यों के लिये 'आर्य' शब्द राष्ट्रियता का वाचक हो गया।** दुर्भाग्यवशात् विदेशियों द्वारा प्रदत्त हीनतासूचक 'हिन्दू' नाम ही श्रेष्ठतासूचक 'आर्य' शब्द के स्थान पर प्रचलित हुआ। विगत कुछ वर्षों से अधिकांश आर्यों ने इस 'हिन्दू' शब्द पर ही गर्व करने का पागलपन प्रारम्भ कर दिया, जो अब भी अनवरत जारी है। चलें, यही दुर्भाग्य सही, इसी कारण मैं इस आर्यावर्त्त भारत देश के नागरिकों के लिये ही आर्य (हिन्दू) शब्द का प्रयोग कर रहा हूँ।

हां, तो मैं ईश्वर की विकृत पूजा की चर्चा कर रहा था। वैदिक काल में जिस अष्टांग योग वाली उपासना पद्धति हुआ करती थी। सत्य, अहिंसा, अस्तेय, ब्रह्मचर्य व अपरिग्रहादि जहाँ उपासना पद्धति के मूल आधार हुआ करते थे, वहीं पौराणिक अन्धकाल आने के पश्चात् अनेक पाप करते हुये मात्र चित्रों की पूजा वा गंगादि नदियों के स्नानमात्र से मुक्ति पाने की मिथ्या धारणा ने इस अभागी आर्य जाति को पाप के अधोगर्त में गिरा दिया। मात्र बाह्याडम्बर से परिपूर्ण नई-२ मिथ्या पूजा पद्धतियों का दुःखद विकास हो गया। व्यक्ति, परिवार, राष्ट्र व विश्व के सर्वांगीण विकास की भावनाओं से सम्पृक्त विशुद्ध वैदिक आध्यात्मिक चिन्तन के स्थान पर व्यक्ति से लेकर विश्व के कल्याण की समस्त अवधारणाओं को स्वप्नवत् मिथ्या मानते हुये समस्त उन्नतियों के बाधकरूप मिथ्या अध्यात्म (कथित अद्वैतवाद) का प्रारम्भ हुआ।

कर्म का स्थान जन्म ने ले लिया, जिसके कारण वेदप्रतिपादित भगवान् मनु प्रणीत विशुद्ध वैज्ञानिक वर्णव्यवस्था के स्थान पर मानव समाज को नष्ट भ्रष्ट कर देने वाली विघटनकारिणी जन्मना जाति व्यवस्था एवं एतज्जन्य भयंकर छूआछूत का उदय हुआ। इस पापिनी

जन्मना जाति व्यवस्था ने न केवल शूद्र (श्रमिक) वर्ग को प्रताड़ित किया, उनको पशुओं से भी बदतर जीवन जीने के लिए विवश करने जैसे घोर पातककर्म किये, अपितु अपाला, घोषा, मैत्रेयी, गार्गी, सीता, अनुसूया, सावित्री जैसी महती वेदविदुषी नारियों की वंशजा समस्त नारी जाति को वेद से बहिष्कृत करके ताड़ने योग्य बताने का पाप भी प्रारम्भ हुआ। **अहो! जिस पूज्या मातृशक्ति की कोख से कथित सनातनी विद्वानों का जन्म हुआ, वे अपनी उसी महती माता को सताने का पाप करने में स्वयं को वैदिकधर्मी मानने लगे। जिन भगवान् मनु ने कर्मणा शूद्र अर्थात् श्रमिक को समान अपराध होने पर भी सबसे न्यून दण्डनीय कहा, उन्हीं भगवान् मनु का नाम ले लेकर कथित पापी नकली ब्राह्मणों ने उसी शूद्र (श्रमिक) वर्ग को जन्मना मानकर उस पर भारी अत्याचार किए और उसे सर्वाधिक दण्डनीय बताया और कर्मणा ब्राह्मणों को सबसे न्यून दण्ड का विधान किया।** इस प्रकार की व्यवस्था को मनुस्मृति में जोड़ने के अपराध हुये, जिससे मनुस्मृति एक दूषित ग्रन्थ के रूप में कुख्यात हो गयी। वेद तथा सभी पूर्वज महापुरुषों को भी इन पापों में घृणित ढंग से फंसाया गया, इससे अधिक वेदना की बात और क्या हो सकती है? इन कारणों से हमारी वैदिक पावनी संस्कृति व धर्म संसार में निन्दा व अपयश के पात्र बन गये।

मेरे प्यारे पाठकगण! जहाँ हमारे देश में इस प्रकार के प्रत्यक्ष वेद विरोधी एवं वेदनामधारी परन्तु नितान्त दुष्टतायुक्त सम्प्रदाय जन्म ले रहे थे, वहीं भूमण्डल के अन्य भागों में भी पारसी, यहूदी, ईसाई व इस्लाम आदि का उदय हो रहा था। इन मतों के प्रवर्तकों ने भी अपने-२ क्षेत्र में जड़देवतावादादि दोषों की प्रतिक्रिया में अपने-२ मतों का आविष्कार किया। इन सम्प्रदायों में वैदिक ज्ञान के कुछ संकेत तो समाविष्ट थे परन्तु अविद्या, कहीं घोर हिंसा, मांसाहार, बहुविवाह का अत्यन्त प्राचुर्य था। ये सम्प्रदाय समस्त ज्ञान-विज्ञान के मूल स्त्रोत वेद एवं उसके उद्गम स्थल आर्य्यावर्त्त देश की घोर उपेक्षा पर भी आधृत थे।

विभिन्न विदेशी वेदविरोधी विशेषकर इस्लामी विचारधारा से प्रेरित एवं कुछ अन्य विचारवाले विदेशी आक्रान्ताओं ने हमारे देश व समाज के विघटन, पतन व दौर्बल्य को देखा और उसका लाभ उठाकर हमारे देश पर कई आक्रमण हुये। हमारे देश का सत्य सनातन वैदिक धर्म

मृतप्राय हो चुका था और उसी मृतधर्म के कारण हम आक्रान्ताओं के प्रहार से बच नहीं सके। कभी भगवान् वेदव्यास जी ने चेताया था-

"धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः"

जब हमारे देश के कथित धर्माचार्यों ने ही धर्म को खण्ड-२ कर मार डाला, तो भला देश व समाज कैसे बच सकता था? यद्यपि वे विदेशी आक्रान्ता भी परमपिता परमात्मा की प्रजा होने व उनके पूर्वज भी वैदिकधर्मी होने से हमारे स्वाभाविक भाई थे, परन्तु धर्म में भाई-भतीजावाद नहीं चलता। धर्मी-अधर्मी दोनों का संघर्ष होता ही है। अधर्म-अधर्म में भी संघर्ष होता है परन्तु धर्म का धर्म से कभी संघर्ष नहीं हो सकता। वे विदेशी भी हमारी भाँति धर्मभ्रष्ट हो चुके लोगों के धर्मभ्रष्ट वंशज थे। वे अपनी धर्मभ्रष्टता को ही अपना धर्म बताकर उसे संसार में फैलाने का प्रयास कर रहे थे वा वे सबको लूटकर अपने को सम्पन्न व सन्तुष्ट बनाने का प्रयास कर रहे थे और इन्हीं प्रयासों के अन्तर्गत वे देश देशान्तरों में सशस्त्र संगठन के साथ निकल पड़े। उनके धर्म में हिंसा व विस्तारवादी उग्रता का प्राधान्य था, तो हमारे देश के धर्मभ्रष्ट विचारों में हिंसा सीमित क्षेत्र वाली थी एवं विस्तारवादी सोच के स्थान पर मिथ्या, तो कहीं यथार्थ सन्तोष का बाहुल्य था। **जैन, बौद्ध की अहिंसा क्षात्रधर्म को तिलांजलि देकर मिथ्या भिक्षुकधर्म फैला रही थी, तो भगवान् शंकराचार्य के नादान भक्त परिवार, राष्ट्र, समाज व संसार को मिथ्या मानकर मिथ्या वैराग्य धारण कर स्वयं को ब्रह्म मान राष्ट्र, समाज वा परिवार के प्रति सभी धर्म व कर्त्तव्यों को भूलने का प्रचार कर रहे थे। उधर कुछ कथित सनातनधर्मी यज्ञों में पशुओं का खून बहाने में ही वीरत्व वा धर्म समझ उन निरपराध मूकप्राणियों के स्वर्ग व स्वयं के कल्पित अदृष्ट धर्म का पालन करने में मस्त थे। उस समय महान् योद्धा भगवान् शिव, विष्णु, ब्रह्मा, राम, कृष्ण, परशुराम, इन्द्र, हनुमान्, अर्जुन, भीम आदि का कोई ऐसा वीर वंशज दिखाई नहीं दे रहा था, जो दुष्ट आक्रान्ताओं का मान मर्दन करता।** उस समय वैदिक सद्धर्म के यथार्थ स्वरूप को समझने वाला कोई भी आचार्य सम्भवतः इस भूतल वा आर्यावर्त्त देश में विद्यमान नहीं था, जो यह बतलाता कि अन्याय और अत्याचार को सहना घोर अधर्म है। यदि सच्ची अहिंसा व यथार्थ अध्यात्म का कोई उपदेष्टा इस राष्ट्र में बचा

होता, तो हमारी प्यारी अभागी मातृभूमि लाखों-करोड़ों नर-मुण्डों वा मूक प्राणियों की हत्या व उनसे बहने वाले रक्त से सनी अपने दुर्भाग्य पर आंसू नहीं बहा रही होती। हमारा प्यारा वैदिक धर्म यों खून के आंसू नहीं बहा रहा होता। अहो! जिस देश के ब्राह्मण-ऋषि भगवान् श्रीराम को वनवास के समय पापियों के विनाश के लिये भौतिक अस्त्र-शस्त्रों का दान व शिक्षण देते थे, उन्हीं महर्षियों के मूर्ख वंशज गले में रुद्राक्ष, भाँति-२ तिलकादि आडम्बर एवं ईश्वरोपासना के स्थान पर अनेक चित्र-विचित्र पाषाण-मिट्टी के खिलौनों की पूजा करते हुये ''कोई नृप होय हमें क्या हानि'' का मूर्खता व कायरता पूर्ण उपदेश कर रहे थे। अयि! अभागी आर्य जाति! तेरे जिन पूर्वज वीर क्षत्रियों ने संसार में चक्रवर्ती शासन किया था, जिनके अस्त्रों से दिशायें कम्पायमान हो जाती थीं, उनके वंशज सम्राट् अशोक जैसे नृप अस्त्र-शस्त्रों को त्याग मिथ्या अहिंसा व वैराग्य की मृगतृष्णा में भटक रहे थे। तब उसका परिणाम क्या हुआ, यह आप सब जानते हैं। इस देश में नरपिशाच, गोहत्यारे, पापियों का सदियों तक शासन चलता रहा। इस मूर्ख व अभागी आर्य जाति के देव मन्दिरों में मिट्टी-पत्थर के खिलौनेरूप देवों ने कोई रक्षा नहीं की, जबकि इनके भक्त विदेशियों की मार खा-खाकर अपने-२ मिथ्या देवों को 'त्राहि माम्' कहकर पुकार रहे थे। वे जड़ देव क्या करते? उन्हें व उनके साथ संचित अपार सोना आदि खजाने लूटकर मंदिरों का विध्वंस किया गया। देश में गोहत्या का पाप प्रारम्भ हुआ।

अहो! कभी अमेरिका, यूरोप, अरब, रूस, चीन, पूर्वी देश, लंका सर्वत्र वैदिक धर्म की अमर ध्वजा फहराती, सबको विश्व मानवता का पावन सन्देश देती थी। भूमण्डल में सर्वत्र वेद मंत्रों की गूंज सुनायी देती व यज्ञों की सुरभि सबको सुवासित व स्वस्थ रखती थी। परन्तु काल की कुटिल गति देखो कि अपने इस प्यारे आर्यावर्त्त भारत देश के पवित्र हिमालयादि पर्वतों, पवित्र गंगादि नदियों व ऋषियों के तपोस्थल तीर्थों आदि सर्वत्र विदेशी विधर्मी अत्याचारों से त्रस्त मूक बनी आर्य हिन्दू जाति का हृदय विदारक आर्तनाद, तथा गौओं का करुण क्रन्दन सुनाई देने लगा। ऐसा प्रतीत होता था, मानो यह ईश्वर-पुत्र मानव अपने स्वरूप को ही भूल गया था। मानव शरीर धारण किये हुये भी मानवता को पैरों तले रौंदा जा रहा था। कोई भी सम्प्रदाय वा वर्ग

अपने मूल को समझने का प्रयास नहीं कर रहा था। **कुरान में लिखा है कि पूर्व में सभी मनुष्यों का मजहब एक ही था परन्तु जैसे-२ नबी आते गये वैसे-२ मजहब बढ़ते चले गये। तब कोई भी इस्लामी विद्वान् यह सोचने को उद्यत न तो तब था और न अब दिखाई देता है कि पूर्व में सब मनुष्यों का मजहब कौन सा था? भागवतादि पुराणों के साथ गीता, रामायण एवं महाभारत आदि आर्ष ग्रन्थों में वेद को ही सर्वाधिक प्रमाणिक एवं ईश्वरीय प्रणीत ज्ञान बताया गया था परन्तु कथित सनातनी विद्वान् न तो तब और न अब ही अपने-अपने आग्रहों को त्याग कर एक वेद को स्वीकार कर तदनुकूल वर्तने को उद्यत होकर मानव एकता का प्रयत्न करते हैं।** इसी प्रकार बौद्ध, जैन, ईसाई आदि सम्प्रदायों की हठधर्मिता चलती रही व चल रही है। परमपिता परमात्मा की अभागी सन्तान यह मानवजाति की यह कैसी दुरवस्था है! जो खण्ड-२ में बंटी हुई जर्जरीभूत हो गयी है। अनेकों महापुरुषों जैसे नानकदेव, कबीर साहेब, दादू, रविदास, ज्ञानेश्वर, नामदेव आदि अनेकों संत इस आर्यधरा पर मानव जाति को एकता व सदाचार का पाठ पढ़ाने आये परन्तु वेद का पूर्ण प्रकाश उनके पास भी न होने से अत्यन्त पवित्रात्मा वे संत भी इस मानव व आर्य (हिन्दू) जाति को एक न कर सके बल्कि अपने-२ नाम से एक नया पंथ और चला बैठे।

इस प्रकार कभी यह सुवर्ण भूमि, जगद्गुरु व चक्रवर्ती राष्ट्र कहाने वाला यह प्यारा भारतदेश पराधीन, निर्धन, दीन, हीन व अविद्याग्रस्त बन गया। कोई भी आशा की किरण कहीं भी दिखाई नहीं दे रही थी। इस्लामी आक्रान्ताओं के पश्चात् अंग्रेजी पराधीनता आ गयी। देश की जनता अत्यन्त त्रस्त थी परन्तु देश के कथित बुद्धिजीवियों व राजाओं ने अंग्रेजी शासकों व इसके पूर्व ईस्ट इण्डिया कम्पनी का मानो स्वागत ही किया। उन्हें अपना भाग्यविधाता मानकर उनकी प्रशस्ति में गीत लिखे जाने लगे। आर्ष वेदविद्या को पिछड़ेपन का प्रतीक माना जाने लगा। भारतीय संस्कृति व सभ्यता के जो कुछ अवशेष बचे थे, उन पर भी बौद्धिक प्रहार होने लगे। **वेदविद्याविहीन बन चुके इस देश के राजाओं व बुद्धिजीवियों ने अंग्रेजों की तकनीक के चकाचोंध से भ्रमित होकर उन्हें अपने पूर्वज ऋषियों से अधिक विद्वान्, वैज्ञानिक व सभ्य मान लिया। इस कारण इस देश का प्रबुद्ध वर्ग अंग्रेजों का बौद्धिक दास बन गया। यह बात हमें समझ लेनी चाहिए कि बौद्धिक दास**

व्यक्ति वा राष्ट्र कभी अपने स्वाभिमान की रक्षा नहीं कर सकता। उधर स्वाभिमानविहीन व्यक्ति वा राष्ट्र कभी अपने देश की स्वतन्त्रता व अखण्डता की रक्षा करने में समर्थ नहीं हो सकता। उस दुष्काल में अधिकांश विदेशी वेदभाष्यकार अपनी-२ स्वार्थ साधना के लिए अपने अनुसार वेदार्थ करने लगे। (इसके कुछ संकेत आगे देखें।) वस्तुतः मैं उनके इस कदम के लिए उन्हें पूर्ण दोषी भी नहीं मानता, क्योंकि मैक्समूलर आदि इन विदेशी वेदभाष्यकारों को सायण, महीधर जैसे भारतीय वेदभाष्यकारों के अविद्यामूलक भाष्य ही तो पढ़ने को मिले थे। इस प्रकार यत्र-तत्र सर्वत्र अखिल ब्रह्माण्ड के स्रष्टा परमपिता परमात्मा का सर्वश्रेष्ठ प्राणी यह मानव ही अपने परमपिता के पवित्र व सर्वोच्च ज्ञान विज्ञान को कुछ तो अपनी नादानी, तो कोई अविद्याजन्य स्वार्थपरता के वशीभूत हो नष्ट करने का प्रयत्न कर रहा था।

सामाजिक ताना बाना भी छिन्न-भिन्न हो रहा था। नारी व शूद्रवर्ग, जो केवल जन्मना ही हो गया था, पर भारी अत्याचार हो रहे थे। बालविवाह का भारी रोग फैल रहा था, विधवाओं की संख्या बढ़ रही थी। उन्हें हेय दृष्टि से देखा जाता था। कहीं-२ बलपूर्वक सती प्रथा प्रचलित थी। इस आर्य हिन्दू जाति को इस्लामी व ईसाइयत में दीक्षित करके उनकी राष्ट्रिय भावना को समाप्त करने का भारी उद्योग हो रहा था। जन साधारण ठग व अनपढ़ कथित ब्राह्मणों (जन्मना) व मिथ्या ज्योतिषियों का दास बना पंगु जीवन जी रहा था। दुःखी, निरक्षर व निर्धनों का कोई आश्रयदाता नहीं था। अधिकांश राजा पराधीन एवं भोगी विलासी हो गये थे, सुरा और सुन्दरी में फंसे प्रजा पालन से पूर्णतः विमुख होते जा रहे थे।

(ग) आशा की एक तेजस्वी परन्तु अल्पकालीन किरण

ऐसे विकटकाल में आज से लगभग १६३ वर्ष पूर्व मानव समाज व भारतदेश की डूबती नौका को पार लगाने के लिए परमपिता परमात्मा ने महर्षि दयानन्द जी सरस्वती महाराज जैसे महान् पवित्रात्मा को भेजा। महर्षि ब्रह्माजी से लेकर महर्षि जैमिनी पर्यन्त आर्ष वैदिक परम्परा की रक्षा के लिए, एक परमेश्वर की वास्तविक वैदिक उपासना का फिर से सन्देश देने के लिए, जन्मना जाति व्यवस्था व छूआछूत को ध्वस्त करके

भगवान् मनुप्रोक्त वेदानुमोदित कर्मणा यथार्थ वर्णव्यवस्था की स्थापना के लिये, गौ, विधवा व अनाथों की रक्षा के लिये, मातृशक्ति को पुनः सम्मान व प्रतिष्ठा प्रदान करने के लिए एवं आर्य्यावर्त्त की भूमि को विदेशी दासत्व से मुक्ति प्रदान करने के लिये ही भगवान् दयानन्द का आविर्भाव हुआ। उन्होंने न केवल भारतदेश अपितु विश्व मानवता के सम्पूर्ण दुःख दर्द को गहराई से देखा और उसके मूल कारण को भी जाना। उनकी दृष्टि में मूल कारण था- ईश्वर प्रणीत पवित्र वेदवाणी के यथार्थ वैज्ञानिक स्वरूप को भूल कर उसके स्वरूप को विकृत कर देना एवं उस विकृति की प्रतिक्रिया वा प्रतिशोध स्वरूप वैदिक ऋषि परम्परा के विरुद्ध नाना सम्प्रदायों एवं विचारों का जन्म लेना। तब महर्षिजी ने विचार किया कि स्वराज्य-क्रान्ति, नारी-दलित का उद्धार, गोरक्षा, मूर्तिपूजा व अवतारवाद रूपी सबसे बड़ी आध्यात्मिक बुराई को मिटाकर एक ईश्वर की महर्षि पतंजलि प्रणीत वेदानुमोदित अष्टांग योग-उपासना आदि महत्वपूर्ण कर्म करने तथा असत्य, अविद्या, पाखण्ड के जनक विभिन्न मतपन्थों को शास्त्रार्थ समर में ध्वस्त करने के साथ-२ वेद के पुरातन व सनातन आर्ष स्वरूप को संसार के समक्ष प्रस्तुत करने का महान् उद्योग करने हेतु **"वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है, वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है"**, ऐसा महान् घोष किया जाए एवं उन्होंने ऐसा किया भी। वस्तुतः यह घोष कोई उनका अपना नहीं था बल्कि सनातन काल से देव, ऋषि आदि भगवन्त मानते चले आ रहे थे, उसी को ही उन्होंने हजारों वर्ष पश्चात् जाग्रत किया। इस घोष को सुनकर तत्कालीन वेदाध्येताओं में एक भारी हलचल उत्पन्न हुयी। इस घोष को प्रत्यक्ष करने के लिये महर्षि ने चारों वेदों का सनातनी आर्ष परम्परा के अनुकूल भाष्य करने का उपक्रम किया। अपना वेदभाष्य प्रारम्भ करते समय उन्हें आशा थी कि वेदभाष्य पूर्ण होने पर सम्पूर्ण भूमण्डल में विद्या का सूर्यवत् महान् प्रकाश हो जायेगा, जिसको मिटाने का सामर्थ्य किसी का न होगा। इसके साथ ही उन्होंने यह भी कहा था कि चारों वेदों का विस्तृत भाष्य करने के लिये चार सौ वर्ष का समय चाहिए परन्तु दुर्भाग्य से ऐसा नहीं हो पाया। महर्षि को वेदभाष्य हेतु दस वर्ष का समय भी नहीं मिला। वे अपना वेदभाष्य (वह भी अति संक्षिप्त व सांकेतिक) आधा भी नहीं कर पाए कि मानवता के घोर शत्रुओं ने उन्हें घातक विष देकर संसार से विदा कर दिया। अयि! मेरी प्यारी मातृभूमि! तेरा भी क्या दुर्भाग्य रहा कि

जो भी तेरी रक्षा के लिये आया, उसे घातकों ने विष देकर मार डाला, फिर चाहे वे भगवत्पाद आद्य शंकराचार्य हों अथवा योगेश्वर भगवद्दयानन्दर्षि। यदि वे चारों वेद, ब्राह्मण ग्रन्थ, दर्शन, उपनिषद्, निरुक्त आदि आर्ष ग्रन्थों का विस्तृत भाष्य कर जाते, तो आज हमारे देश व विश्वमानवता की ऐसी दुर्दशा नहीं हो रही होती। वेद, जो संसार में सूर्य सम विद्या-विज्ञान व सद्धर्म का प्रकाश देने वाला होना था, वही स्वयं अनेक लांछनों, शंकाओं आदि के मध्य खड़ा निन्दा व उपहास का पात्र बन गया। महर्षि की प्रेरणा से आर्य समाज ने देश को अंग्रेजों से मुक्ति दिलाने में पूर्ण पुरुषार्थ किया और उसका फल भी मिला। आज देश में जो भी देशभक्ति के दावेदार बने दिखाई दे रहे हैं, उन संगठनों ने देश की स्वतन्त्रता के लिए क्या किया, यह वे स्वयं ही ईमानदारी से विचारें, जो आज आर्य समाज व ऋषि दयानन्द को देश अथवा हिन्दू जाति के लिए घातक मान रहे हैं। दुर्भाग्यवश देश की बागडोर आर्य संस्कृति से सर्वथा अनभिज्ञ विदेशी शिक्षाप्राप्त ईसाई व इस्लामी सभ्यता के पोषक लोगों के हाथ में आ गयी। संविधान बनाने वालों ने उन्हीं की नकल कर डाली तथा भारतीय शास्त्रों की उपेक्षा की। इस कारण अंग्रेज जाने के पश्चात् भी देश अंग्रेजी सभ्यता, भाषा व अंग्रेजी आचार-विचारों का दास बना रहा। आज भी न केवल देश अपितु इसको वेद एवं आर्ष सन्देश देने के महान् उत्तराधिकार को प्राप्त आर्य समाज भी मैकाले की शिक्षा व संस्कार के प्रबल व दुःखद प्रवाह में बहता जा रहा है। तब देश को स्वतंत्र हुआ कैसे मानें?

(घ) भारत की कथित प्रबुद्ध तरुणाई के द्वारा लॉर्ड मैकाले का वन्दन

अंग्रेजी शासन में यहाँ कुछ लोग ही अंग्रेज थे परन्तु उनके जाने के पश्चात् आज देश का हर युवा, बालक, बुद्धिजीवी पुरुष व महिला सभी काले अंग्रेज बनकर लॉर्ड मैकाले के दिवंगत आत्मा को मानो उत्साह दिलाते कह रहे हैं-

''हे लॉर्ड! आप संसार से चले गये, कोई बात नहीं परन्तु आप जो भारतीय पीढ़ी को मन से अंग्रेज बनाना चाहते थे, वह आपकी इच्छा शतप्रतिशत पूर्ण हो गयी है। हम सब भारतीय वास्तव में रंग के

काले ही सही परन्तु संस्कार शिक्षा से आपके पूर्णतः दास हैं और इस दासत्व को अपने प्राण रहते समाप्त नहीं होने देंगे। .....हे लॉर्ड! भाषा, वेशभूषा, आहार, विहार, शिक्षा, संस्कार सब आपके ही हैं। यहाँ तक कि मल-मूत्र त्याग करना भी हमने आपकी ही भाँति प्रारम्भ कर दिया है। हम धीरे-२ सम्प्रदाय भी आपका ही ग्रहण कर लेंगे अर्थात् ईसाई बन जायेंगे। ....अब इस देश का कोई भी युवा विशेषकर बुद्धिजीवी प्राचीन वैदिक धर्म एवं सभ्यता, भाषा, वेशभूषा, खान-पान आदि को पसन्द नहीं करता। जो कोई बूढ़े करते हैं, उनके घरों में पैदा होने वाले बच्चों वा युवकों में भी आपका आत्मा ही मानो अवतरित हो गया है......... हे लॉर्ड! आप ही सच्चे भारत भाग्य विधाता हो.. ...... आपकी कृपा से ही कभी जार्ज पंचम की चाटुकारी में लिखा गीत ''जन गण मन अधिनायक जय हे। भारत भाग्यविधाता'' आज हम काले अंग्रेजों का राष्ट्रिय गान बन गया है, जिसका कोई अपमान नहीं कर सकता.........**हमारे देश के कानून भी अधिकांश आपके शासन की ही देन हैं और जो भी नये कानून बन रहे हैं, वे भी आपकी छाया के नीचे ही बनते हैं। हमारे देश के विद्यालयों, गुरुकुलों, आश्रमों सबमें आपका ही आत्मा बोल रहा है**.........हे लॉर्ड! आपकी जय हो। आपने हमें रहने की सभ्यता सिखा दी अन्यथा हम मूर्ख व पाखण्डी ऋषियों के बंधन में फंसे पशु समान जीवन जी रहे होते।... ......हे हमारे भगवान् लॉर्ड मैकाले! आज आपके कृपाप्रसाद से यहाँ वेदों को मूर्खों की कहानियां वा साम्प्रदायिक पाखण्डी ग्रन्थ कहा जाता है.........यहाँ के एक बड़े राजनैतिक वर्ग ने इस देश के महान् माने जाने वाले राम आदि ऐतिहासिक पुरुषों के अस्तित्व को भी नकार दिया है। न केवल उसने अपितु कोई पढ़ा-लिखा व्यक्ति भी रामायण, महाभारत को उपन्यास के समान कल्पित कहानियां ही मान रहा है। हमारी पाठ्य पुस्तकों में भारत की आर्य (हिन्दू) जाति को विदेशी बताया जाता है तथा ऋषि-मुनियों को दुराचारी, लोभी, क्रूर, सुरापान करने वाले सिद्ध करके भारत का स्वाभिमान पूर्ण नष्ट है। यदि कोई सरकार इस पाठ्यक्रम में परिवर्तन करती है, तो विरोधी दल तत्काल ही उसे शिक्षा का भगवाकरण कहकर उसका घोर विरोध, यहाँ तक उपद्रव करने लग जाते हैं। हे लॉर्ड! आपकी प्रेरणा व प्रलोभन के वशीभूत मैक्समूलर ने अपने वेदभाष्य द्वारा भारत को विभाजित करने का जो आधार प्रदान किया था और जिसके कारण आर्य व अनार्यों के कल्पित युद्ध की

परिकल्पना प्रस्तुत की थी, उसी के आधार पर आपके अंग्रेज भाइयों ने आर्यों को विदेशी हमलावर बताया था, आज वह विचार एक विशाल वृक्ष बनकर सारे देश को खण्डित करने का पूर्ण पुरुषार्थ कर रहा है। भारत का प्रबुद्ध वर्ग ऐसा मन से स्वीकार कर रहा है और भारतीय शिक्षा में यही सिखाया जा रहा है। **हे लॉर्ड! आज बामसेफ, मूलनिवासी संघ जैसे कुछ संगठन आपकी छाया में ही पलते बढ़ते हुये देश के टुकड़े-२ करने की नीति के तहत कथित सवर्णों के विरुद्ध आपके मानस-पुत्रों की कृपा से पिछड़े व दलित कहाने वालों को भड़का कर ऐसे गृह-युद्ध की नींव रख रहे हैं, जहाँ तक शायद आपकी भी कल्पना नहीं गई होगी।** हे भारत भाग्य विधाता! आपके वा आपके भाइयों के सम्मुख गांधी ने जातीय आरक्षण को ठुकराकर राष्ट्रिय एकता को महत्त्व दिया था। आपके मानस पुत्र नेहरू भी जिसे मन से स्वीकार नहीं करते थे। स्वयं अपमान का घूंट पीते रहे डॉ. अम्बेडकर भी जिस आरक्षण को मात्र दस वर्ष तक ही चाहते थे, ताकि भारत एक रहे। परन्तु हे लॉर्ड! आपके मैक्समूलर आदि भाइयों की कृपा से फूट का ऐसा बीज बोया गया। **आपके मानस पुत्र भारतीय काले अंग्रेजों को गोरों से 'फूट डालो राज करो' का ऐसा मंत्र मिला कि इन्होंने गांधी, नेहरू व अम्बेडकर सबके नाम का जाप करते हुये भी उनकी भावनाओं की हत्या करके सम्पूर्ण देश को आरक्षण की कुटिल नीति में फंसाकर सहज में ही खण्ड-२ कर डाला। आपके भाइयों तथा डॉ. अम्बेडकर आदि ने तो केवल कथित दलित वर्ग को ही, वह भी केवल दस वर्ष तक आरक्षण की बात की थी परन्तु आज आपके मानस पुत्र नहीं बल्कि पोत्रों वा दोहित्रों ने अन्य अनेक वर्गों को भी आरक्षण का लालच देकर देश के आत्मा को क्षत विक्षत कर डाला है।** आज देश में कोई भी अपने को भारतीय मानने को तैयार नहीं है। हर व्यक्ति जाति व मजहब की आग में जल रहा व देश को जला रहा है। पूर्व में भी चन्द स्वार्थी नेताओं, राजाओं व पुजारियों ने अपने स्वार्थ के कारण देश को पराधीन बनाने के घृणित पाप किये थे परन्तु आज देश का हर नागरिक आरक्षण के स्वार्थ में देश के विनाश को प्रसन्नता से स्वीकार कर रहा है। उधर मध्यकाल से आयी छूआछूत व ऊँच नीच की कुत्सित मानसिकता को आज भी कथित सवर्ण वर्ग त्याग नहीं पा रहा है। रस्सी जलने पर भी ऐंठन वैसी ही है। उधर **आज देश के बड़े-२ शिक्षण संस्थानों में उच्चशिक्षा के छात्र भारत के टुकड़े के करने के सार्वजनिक**

नारे लगाते हैं, आतंकवादियों की मृत्यु पर शोक मनाते हैं, सेना पर पत्थरबाजी करते हैं। अनेक नेता इन छात्रों का साथ देते हैं तो कोई पाकिस्तान जाकर भारत के विरुद्ध विषवमन भी करते हैं, कहीं सेना का विरोध करने वालों को कुछ राजनेताओं व सरकारों का खुला संरक्षण भी होता है। कई राजनैतिक दल पाकिस्तान की ही भाषा बोलते हैं। विदेशी कम्पनीज़् का विरोध करने वाले दल वा संगठन आज सत्ता प्राप्त करके स्वदेशी का नाम लेना भी भूलकर भारत को विदेशी कम्पनीज़् का मानो उपनिवेश बना रहे हैं। वे ईस्ट इण्डिया कम्पनी का इतिहास भूल चुके हैं। अब स्वदेशी का नाम लेने वाला देश में कोई नहीं बचा है। हे लॉर्ड! ये विदेशी कम्पनीज़् भारत के ईसाईकरण में महती भूमिका सहजता से निभा सकती हैं और देश को पुनः पराधीन बनाने की नींव रख सकती हैं। हे लॉर्ड! आज इस देश में स्वदेश हित में अपना सर्वस्व बलिदान करने वालों को कोई भी महापुरुष नहीं मानता, बल्कि आज वे ही महापुरुष माने जा रहे हैं, जिन्होंने अंग्रेजों के विरुद्ध न युद्ध किया और न उसके प्रेरक बने, बल्कि विदेशों में सैर सपाटा करने किंवा पढ़ने वाले धर्माचार्य वा राजनेता ही आज महापुरुष हैं। यह बौद्धिक दासता यहाँ सर्वत्र व्याप्त हो चुकी है। इस कारण हे लॉर्ड! यदि कोई देश आज भारत पर आक्रमण करना चाहे, तो उसे किसी बड़े प्रतिरोध का सामना नहीं करना पड़ेगा। **यदि आक्रामक देश आपके विचारों को ढाल बनाकर, जातीय व साम्प्रदायिक मुद्दों को अस्त्र के रूप में प्रयोग करे, तो स्वयं भारतीय लोग आपस में खून बहाने को तैयार बैठे हैं। आप स्वर्ग से यह महाभारत देखते रहना। यह सब कुछ स्वतः कुछ काल पश्चात् होना ही है। क्योंकि देश के शासकों के मुंह फूट डालने से सत्ता प्राप्ति का खून लग चुका है।** हे लॉर्ड! वे इसे किसी भी मूल्य पर त्यागना नहीं चाहेंगे और यदि कोई नेता वा पीड़ित संगठन ऐसा सोचे भी, तो देश के अनेक जातीय व मजहबी वा स्वार्थी सांसद विधायक आदि नेता वा संगठन देश में अराजकता फैलाने के लिये तैयार बैठे हैं। हे लॉर्ड! राजनेता वा आपके मानस पुत्र बुद्धिजीवियों की बात तो दूर रही, आज देश के आध्यात्मिक गुरु कहाने वाले, राष्ट्रभक्ति का दम्भ भरने वाले संगठन भी आज आरक्षण, जातिवाद, छूआछूत आदि पर बोलने का साहस नहीं करते। वे भी अपने चेले बनाने वा धन, प्रतिष्ठा की चाह में इस भावी राष्ट्रिय विस्फोट पर मौन साधे, पाकिस्तान, चीन के खतरे, आतंकवाद, भ्रष्टाचार आदि के विरुद्ध केवल

भाषणबाजी तक ही सीमित हैं। उनका स्वयं का जीवन भी अनेक दोषों से दूषित है, पुनरपि वे भाषणबाजी में दक्ष हैं, उन्हें भारतीय सनातन धर्म, ऐतिहासिक व सांस्कृतिक धरोहर, वैदिक अध्यात्म का न तो कोई ज्ञान है और न वे इसे अर्जित करना चाहते हैं। उनकी दृष्टि भी नितांत भौतिकवादी व निजी स्वार्थ तक सीमित है। वे भगवे वस्त्रधारी देशभक्ति के नाटक करते हुये भी मन से आपके ही दास हैं, तभी तो उनके विद्यालयों, गुरुकुलों में भी आपकी ही शिक्षा पद्धति अबाधगति से हलाहल (विष) घोलती बढ़ रही है। आज कोई–कोई सुविज्ञ आर्य समाजी वा पौराणिक साधु भी ऋषियों व वेदों का नाम कम जबकि विदेशी विद्वानों तथा उनके पिछलग्गू तथा वेदविरोधी गांधी, नेहरू आदि का ही नाम ले लेकर राष्ट्रभक्ति की भावना को पुष्ट करने का प्रयास करते देखे जाते हैं। हे लॉर्ड! आपके प्रेरित प्रो. मैक्समूलर ने वैदिक शिक्षा व धर्म के समूल नाश का जो उद्योग किया था, उसको प्रबल चुनौती देने का जो कार्य एकमात्र महर्षि दयानन्द सरस्वती व उनके अनुवर्ती आर्य समाज ने प्रारम्भिक काल में किया था। जिन महर्षि दयानन्द सरस्वती के वेदभाष्य आदि को पढ़कर प्रो. मैक्समूलर स्वयं अपने जीवन की अन्तिम वेला में वेद तथा पुरातन भारतीय ज्ञान विज्ञान व आदर्श के प्रशंसक बन गये थे, उस समय ऐसी आशंका थी कि दयानन्द की वैचारिक आंधी हमारे पूज्य लॉर्ड साहब के वैचारिक महलों को ध्वस्त करके न केवल भारत अपितु सारे विश्व को आर्य वैदिक धर्म में दीक्षित कर देगी, ऐसी सम्भावना अमेरिकन विद्वान् ऐण्ड्र्यूजैक्सन ने भी व्यक्त की थी परन्तु हर्ष की बात है कि **दयानन्द को आर्य हिन्दू जाति ने ही विष देकर मार डाला और उनके अनुवर्ती आर्य समाज को न केवल आपके मानस पुत्रों ने ढंग से नहीं जीने दिया, अपितु समस्त हिन्दू, ईसाई, मुस्लिम आदि सभी ने मिलकर आर्य समाजियों को मिटाने में पूर्ण पुरुषार्थ किया।** यद्यपि आर्य समाजियों ने देश को स्वतंत्र तो करा लिया परन्तु सांस्कृतिक परतन्त्रता यथावत् रही। इसके साथ ही सौभाग्य की बात यह भी है कि आर्य समाजी भी परस्पर लड़ने में लग गये, जिससे वे अपना ही नाश कर बैठे। वे आज तो परस्पर भारी ईर्ष्या द्वेष से ग्रस्त हैं, जिससे आपकी सत्ता को हिलाने व भगाने को विवश करने वाला आर्य समाज का संगठन पूर्ण नष्ट है। वे नितान्त आचरण व वेदविद्या से शून्य हो गये हैं। है, न आपके लिये यह महती शुभ सूचना? साथ ही आपके आशीर्वाद से आपके भारतीय मानस पौत्रों व

दौहित्रों ने प्रो. मैक्समूलर के वेदविरोधी विचारों को ही महत्व दिया और उनकी वेद प्रशंसा को कोई जानता तक नहीं है। और महर्षि दयानन्द का अनुयायी आर्य समाज भी अब तक महर्षि दयानंद के विचारों को नहीं समझ पाया है और वह केवल नाम उनका ले रहा है परन्तु काम तो तेरा ही कर रहा है। वेद के ज्ञान विज्ञान को समझने की तो कोई कल्पना भी नहीं कर रहा है। अहो! कैसा सौभाग्य है, हम आपके काले मानस वंशजों का। आज सर्वत्र तेरी अंग्रेजी भाषा का ही साम्राज्य है। संस्कृत भाषा का तो प्रबुद्धवर्ग की ओर से कोई महत्व ही नहीं है। **जब कोई संस्कृत भाषा ही नहीं पढ़ेगा। हिन्दी भी भूल जायेगा, तब वैदिक धर्म व संस्कृति को कौन जानेगा? भारतीय ज्ञान विज्ञान को कौन खोजने की मूर्खता करेगा? कोई–२ मूर्ख ऐसा करेगा, तो उसे इस काले अंग्रेजी शासन में कौन पूछेगा? जब संस्कृतज्ञ कहाने वाले ही अंग्रेजी भाषा के दास होकर अपनी संतति को अंग्रेजी भाषा–वेशभूषा से सुसज्जित करेंगे, तब मां भारती की जय बोलने वाले यहाँ कहाँ बचेंगे?** सब ओर तो तेरा ही यश प्रकाशमान होगा। पाखण्डी ऋषि–मुनियों, देवी देवताओं का तो नामलेवा भी कोई नहीं बचेगा। हे हमारे मानस पिता–दादा पूज्य मैकाले जी! आज धार्मिक आयोजन भी साम्प्रदायिक व जातीय रंग में पूर्णरूपेण रंगे हुये हैं। मजहबों की संख्या सतत बढ़ने से वैदिक धर्म पूर्ण नष्ट है। आज जातीय देवताओं ने मध्यकालीन देवताओं को भी पीछे धकेल दिया है। ईश्वर को तो अब कोई पूछता ही नहीं है। इससे आर्य (हिन्दुओं) की फूट और भी भयंकर हो रही है। दिखावे के लिये ये जातीय गुरुओं के मंदिरों की प्राण प्रतिष्ठा में वेद मंत्रों का उच्चार भले ही करते हैं परन्तु वे अब वैदिक धर्म व परम्परा से इतनी दूर हो चले हैं कि अब ये शायद कभी राष्ट्रिय वा वैश्विक एकता जैसे विचारों के निकट तक भी नहीं आ सकेंगे। इन जातीय अन्धभक्तों में से कोई भी अपने जातीय देवता वा जातीय धर्मगुरु की यथार्थ समालोचना को भी किञ्चिदपि सहन नहीं कर सकता। आज तो मध्यकालीन वा कुछ पूर्व में पैदा वीर पुरुष वा संत भी जातिवाद के अंधकार में विलीन हो गये हैं। सारे भारतीय आदर्श मिट गये हैं। मेरे लॉर्ड! न केवल जाति व सम्प्रदायों में देश बंटा है, अपितु महिला–पुरुष, बाल–वृद्ध के नाम पर भी देश विभाजित है। महिला अधिकार व अभिव्यक्ति व कर्म की स्वतंत्रता के नाम पर सीता, सावित्री, अनुसूया एवं पद्मिनी जैसी पतिव्रताओं के नाम की जय करने वाली

भारतीय नारी आज देह प्रदर्शन व स्वेच्छाचारिता व श्रीराम, श्री लक्ष्मण व ब्रह्मचारी हनुमान्, भीष्म, अर्जुन पर अभिमान करने वाला पुरुष उन्मुक्त यौनाचार, समलैंगिकता की आग में ऐसा जल रहा है कि उसे कोई भी भारतीय आदर्श फूटी आँख भी नहीं सुहाता। आज तेरी कृपा से **देश के सभी कानून भारतीय अस्मिता को नष्ट करने के लिए ही बने हैं,** जिनमें माता-पुत्र, पिता-पुत्री, भाई-बहिन, गुरु-शिष्या, गुरु-शिष्य आदि कोई भी पारस्परिक सहमति से यौनाचार कर सकते हैं परन्तु संविधान इसे रोकने के स्थान पर बढ़ावा ही दे रहा है। सर्वत्र तेरी सभ्यता, जिसको कभी इस देश के लोग फिरंगी-कुसभ्यता कहते थे, की ही विजय पताका निर्विघ्न फहरा रही है। इस कारण यह देश अब भारत तो कहीं से भी नहीं रह गया है। और न सनातन धर्म के अवशेष ही नजर आते हैं। शाबाश! माई लॉर्ड। आपने चमत्कार कर दिया। इस कारण हर तरह से आपकी जय ही हो रही है। आप स्वर्ग में इस बात से अवश्य ही आनन्दित होंगे।..........धन्य हो हमारे पूज्य लॉर्ड साहब।''

(ङ) जलता, उजड़ता व सिसकता भारत

मेरे प्यारे देशवासियो एवं वैदिक सनातन धर्मावलम्बियो! आप मैकाले के प्रति इन व्यंग्यों से मुझ पर भी हँसेंगे। परन्तु मेरे बन्धुओ एवं बहिनो! यह दुःखद चित्र हंसने का नहीं अपितु नष्ट होते देश व धर्म के प्रति आंसू बहाने का है। साथ ही सोचने का है कि हम इन पापों में से किन्हीं पापों में लिप्त तो नहीं हैं? यदि हाँ, तो हम इनसे कैसे मुक्त हो सकते हैं? सोचो मेरे पाठकगण विचारो! क्या आपको प्रतीत होता है कि हमारा देश व धर्म जीवित है? क्या आपका हृदय एवं आपकी प्रबुद्ध सन्तान नास्तिकता की ओर नहीं बढ़ रही है? उस परिस्थिति में वेदविरोधी, इस्लामी, ईसाई, बौद्ध, कम्यूनिस्ट वा अन्य नास्तिक तथाकथित बुद्धिजीवियों के द्वारा वेद, आर्षग्रन्थ, वैदिक संस्कृति व सभ्यता तथा पुरातन भारतीय इतिहास पर हो रहे कटुप्रहारों को कैसे रोका जा सकता है? भला जो व्यक्ति स्वयं थर-२ कांप रहा हो, वह दूसरे को सम्बल कैसे दे सकता है? बड़े दुर्भाग्य की बात है कि ये सभी वेदविरोधी अथवा आर्य वा पौराणिक मतावलम्बी, जो स्वयं को सनातन वैदिक धर्मी मानते हैं, सभी ही उन्हीं वैदिक ऋषियों वा देवों

के अभागे वंशज हैं। तो कोई असुरों, राक्षसों, वानरों, ऋक्षों, नागों के वंशज हैं। परन्तु जैसा कि हम कह चुके हैं कि ये भी तो सब परस्पर भाई ही तो थे। सभी ही तो वेद मानने वाले थे, ऋषि सभी में होते थे। शोक है कि आज ये सभी मानव क्रूर काल की गति से वा अपने ही मध्यकालीन पूर्वजों के प्रमाद वा मूर्खता के कारण स्वयं को वेदविरोधी मानकर उस अपनी ही मूल संस्कृति तथा अपने गौरवमय इतिहास अर्थात् पूर्वजों पर ही आक्रमण करने में अपना गौरव समझ रहे हैं। उधर कुछ लोग अपना गौरव गान तो करते हैं परन्तु उनके पास अपने ही मूर्ख वा नादान आक्रान्ता भाइयों के आक्रमण का उत्तर देने का कोई सामर्थ्य नहीं हैं। इससे वे दुःखी और उदास होकर इन कथित नास्तिक बुद्धिजीवियों को गाली देने के अतिरिक्त कुछ भी करने में असमर्थ सिद्ध हो रहे हैं। **संसार के सभी सम्प्रदाय आज धर्म के नाम से प्रचलित होकर घोर अंधेरी गलियों में भटके हुये दूसरों को भी पथभ्रष्ट कर रहे हैं। कथित बुद्धिजीवी, कम्यूनिस्ट, नास्तिक आदि दूसरों को मूर्ख मानकर स्वयं में ही गर्वोन्मत्त परन्तु नित्तान्त भ्रमित हैं। उधर वर्तमान विज्ञान भी अपने लक्ष्यों को आज तक निर्धारित नहीं कर पाया है। उसकी बेरोक बढ़ती टैक्नोलॉजी एवं भोगवादी प्रवृति की प्रधानता ने विश्वभर को त्रस्त व अशान्त कर रखा है।** कथित विकास की अवधारणा ने पर्यावरण को नष्ट भ्रष्ट करके अनेक प्राकृतिक विभीषिकाओं को आमन्त्रित करके सम्पूर्ण प्राणिजाति को ही विनाश के कगार पर ला खड़ा किया है। ऐसे समय में सर्वत्र उपनिषद् का वाक्य चरितार्थ हो रहा है।

अविद्यायामन्तरे वर्त्तमानाः स्वयं धीराः पण्डितंमन्यमानाः।।
दन्द्रम्यमाणाः परियन्ति मूढा अन्धेनैव नीयमाना यथान्धाः।।
(कठ.उप.२.५)

अर्थात् मिथ्याज्ञान अर्थात् प्रेयोमार्ग, जो प्रारम्भ में मनमोहक प्रतीत होता है, ऐसे भोगवाद के बीच रहते हुये, फंसे हुये अपने को धीर वा ज्ञानी समझने वाले, कुटिल मार्ग पर चलने वाले अर्थात् छल कपट करने वाले नीच गति को प्राप्त होते हैं। ऐसे वे लोग परस्पर ऐसे दुःखद वातावरण का निर्माण कर देते हैं, मानो एक अन्धा दूसरे अन्धे को मार्ग दिखा रहा हो।

अहो! कैसा सुन्दर चित्रण आज से हजारों वर्षों पूर्व उपनिषत्कार ने किया? यदि ये उपनिषत्कार आज जीवित होते, तो वर्तमान की परिस्थिति का कैसा चित्रण करते?

आज हमारी शिक्षा प्रणाली, राजनैतिक व्यवस्था, सामाजिक ढांचा, परिवार वा व्यक्ति सभी ऐसे हो चले हैं, जिनको देखकर प्रतीत होता है कि या तो ये सभी कहीं विदेश वा दूसरे लोकों से आये हैं अथवा अंग्रेजों ने ही आकर इस देश का निर्माण किया है। ये दोनों ही विचार बड़े भयानक हैं। मेरे प्यारे पाठक गण! जरा विचारो कि इस संसार में कौन ऐसा अभागा व मूर्ख देश है, जो अपने पूर्वजों अर्थात् इतिहास को या तो गाली देता हो अथवा उनके अस्तित्व को अस्वीकार करता वा उसे साम्प्रदायिक मानता हो? जो अपने सनातन धर्म, संस्कृति वा सभ्यता की भरपेट निन्दा करता हो वा उसे साम्प्रदायिक कहकर अपमानित करता हो एवं दूसरे देशों के पूर्वजों, संस्कृति-सभ्यताओं की प्रशंसा करता हो? दूसरे देशों में जन्मे सम्प्रदायों एवं उनके सभी पापों को मानवतावादी कहता हो? जिस देश के मूर्ख नेता अपने ही देश के नागरिकों को वर्ग, समुदाय, भाषा, क्षेत्र, लिंग आदि के नाम पर बांट कर लड़ा मारने को ही सैक्यूलरिज्म वा समाजवाद का नाम देते हों, तो दूसरी ओर कथित धर्म के नाम पर अपने ही शूद्र भाइयों को अछूत समझकर उन्हें अभी भी हेय दृष्टि से देखा जाता हो। आदि....। मेरे प्यारे देशवासियो वा सनातनधर्मी पाठको! आप इन प्रश्नों का उत्तर जानना चाहते हैं, तो सुनें, **ऐसा अभागा, पापी, मूर्ख व कृतघ्न देश अपना यह भारत ही है, जो अब भारत नहीं, बल्कि इण्डिया बन गया है।** यह हमारा देश जल रहा है, टूट रहा है, सिसक रहा है परन्तु किसी कवि के शब्दों में-

"मेरा देश जल रहा कोई नहीं बचाने वाला।"

(1) मूलनिवासवादियों एवं भारतीय संस्कृति विरोधियों से निवेदन

मेरे प्रबुद्ध पाठकगण! अब मैं कुछ उन बिन्दुओं पर चर्चा करना चाहूँगा, जो देश में उठाये जा रहे हैं और जिन प्रश्नों से घायल यह देश हम सबको धिक्कार रहा है। वे बिन्दु हैं-

१. वेद केवल आर्यों (हिन्दुओं) की साम्प्रदायिक रचना है एवं वर्तमान के कथित ब्राह्मण, ठाकुर (राजपूत) एवं बनिये ही केवल आर्य (हिन्दू) हैं। पूर्व ऋषि, मुनि, देव सभी इन्हीं के पूर्वज थे, जो विदेशी लुटेरे थे। उन्होंने इस देश पर आक्रमण करके राक्षस, असुर, वानर, दानव आदि जो इस देश के मूल निवासी थे, को परास्त करके इस देश पर अधिकार कर लिया। वतर्मान में कथित पिछड़ा वर्ग, दलित, सभी वर्गों की महिलायें एवं धर्मान्तरित ईसाई, मुस्लिम, जैन, बौद्ध आदि राक्षसों असुरों, दैत्यों की सन्तान हैं तथा इस देश के मूलनिवासी ये ही हैं। वेद, शास्त्र, रामायण, महाभारत, गीता, उपनिषद् आदि विदेशी लुटेरे आर्यों (वर्तमान ब्राह्मण, ठाकुर, बनियां) के ही ग्रन्थ हैं। होली, दीपावली, रक्षाबन्धन, दशहरा, महाशिवरात्रि, श्रीकृष्णजन्माष्टमी, रामनवमी आदि विदेशी पर्व हैं। वेदादि शास्त्र मानवताविरोधी, राष्ट्रविध्वंसक, सामाजिक विघटनकर्त्ता, दलित-नारी आदि के शोषक, मांसाहार, मदिरापान, व्यभिचार, पशु-नरबलि आदि सभी पापों के पोषक हैं।

२. प्राचीन ऋषि-मुनि, देवी-देवता एवं अन्य राजा आदि घोर दुराचारी, मद्यपी, क्रोधी, लोभी एवं क्रूर स्वभाव वाले थे, जो अपनी माता, बहन, पुत्री आदि से भी दुराचार करने में लज्जा का अनुभव नहीं करते थे। श्रीरामादि क्षत्रिय राजा, जिन्हें कोई परमात्मा का अवतार कहता है, तो कोई मर्यादा पुरुषोत्तम कहता है, वे भी मद्यपी, मांसाहारी, नारी व दलितों पर अत्याचार करने वाले थे। योगेश्वर कहाने वाले श्रीकृष्ण अत्यन्त कामी, क्रूर, दुराचारी, छली-कपटी और चोर थे।

अयि! वेदभक्त कहाने वालो! सनातन धर्म की जय घोष करने वालो! महादेव, ब्रह्मा, विष्णु, राम, कृष्ण, हनुमान् आदि की पूजा करने

वालो! आर्य वा हिन्दू एवं भारत वा हिन्दुस्तान पर गर्व करने वालो! क्या आपका हृदय इन विचारों के तीक्ष्ण शूलों से कभी आहत होता है? क्या आपके मन-मस्तिष्क में इन विचारों का उत्तर देने की कोई क्षमता है? अथवा आप इस प्रकार की विचारधारा मानने वालों को विधर्मी, नास्तिक, पापी वा देशद्रोही जैसे अपशब्दों से सम्बोधित करके उनकी निन्दामात्र को ही अपना धर्म व कर्त्तव्य समझते हैं? मैं आपको निवेदन कर दूं कि ये विचार मेरे हृदय में शूल की भाँति सदैव चुभते रहते हैं। महर्षि दयानन्द जी सरस्वती का प्रत्येक सच्चा भक्त इन विचारों से गम्भीर रूप से आहत है परन्तु बड़े दुःख के साथ लिखना पड़ता है कि इस सब पापपूर्ण प्रचार के लिये केवल इनके पापी प्रचारक ही पूर्ण उत्तरदायी नहीं हैं। मैं इन्हें केवल प्रतिक्रियावादी एवं कुछ अंशों में ही उत्तरदायी मानता हूँ।

अयि! सनातनधर्मियो एवं देशभक्ति के नाम पर गीत संगीत-नृत्य व जयघोष मात्र करने वाले मेरे अभागे मित्रो! क्या आपने अपने कथित पुराणादि, धर्मशास्त्रों एवं रामायण, महाभारत जैसे ऐतिहासिक ग्रन्थों को पढ़ने का भी कभी प्रयास किया है? जिनके कारण ही हम सबको वेदादि सत्य धर्मशास्त्रों एवं अपने ही महापुरुष पूर्वजों की ऐसी क्रूर निन्दा सुनने को बाध्य होना पड़ रहा है।

मेरा आपसे आग्रह है कि आप जिन-२ शास्त्रों पर गर्व करते हैं, उन्हें एक बार स्वयं अवश्य पढ़ें। यदि आपके पास इतना समय नहीं हो, तो मेरे आगे उद्धृत वचनों को ध्यान से पूर्ण निष्पक्ष होकर पढ़ने का कष्ट करें।

अब मैं क्रमशः प्रत्येक विचारधारा पर अपनी समीक्षा लिखने का प्रयास करता हूँ।

१. यह कल्पना उन कथित विदेशी विद्वानों की है, जो इस देश में ईसाई विचारधारा की स्थापना करके अंग्रेजी राज्य को अखण्ड रखना चाहते थे। उन्होंने वेद एवं ब्राह्मण ग्रन्थों के अलंकारिक आख्यानों में मानवीय इतिहास समझने की भूल की और वेद में कथित आर्यों और अनार्यों का युद्ध मानकर ऐसी विघटनकारी कल्पनायें प्रस्तुत की।

इन्हीं विचारों के आधार पर हमारे देश में अनेक राष्ट्रविरोधी जातीय संगठन खड़े हो गये हैं, विदेशी प्रेरणा व धन के बल पर इस देश में आर्य-अनार्य, देव-दानव आदि के नाम का नया विवाद खड़ा कर रहे हैं। वे लोग आर्यों, देवों को विदेशी आक्रान्ता तथा अनार्यों, दस्युओं को इस देश का मूल निवासी बताते हैं। राक्षस, असुर, दानव, दैत्य, वानर, नाग आदि वंशों को भी मूल निवासी बताते हैं। इस विषय पर इस देश के अनेक कथित प्रबुद्ध अनेकविध साहित्य सृजन कर रहे हैं। ये साहित्य सर्जक इस देश में बड़े बुद्धिजीवी माने जाते हैं परन्तु हमारी दृष्टि में वे इस विषय में नितान्त अनाड़ी तथा विदेशी कथित विद्वानों के उच्छिष्टभोजी हैं, जिनके विचारों को आधार बनाकर अनेक विदेशी षड्यन्त्रों के पोषक भारत के दलित व कमजोर वर्गों के साथ कथित पिछड़े वर्ग के भोले भाले भाइयों को कथित सवर्णों के विरुद्ध भड़काकर भारत को भयंकर गृहयुद्ध की ओर ले जाने का प्रबल उद्योग कर रहे हैं। इनकी भाषा अत्यन्त आक्रामक और अनिष्ट है, वैसी ही जैसी की मध्यकालीन कथित ब्राह्मण वर्ग की कथित शूद्र वर्ग के विरुद्ध थी। इस कारण इन आक्रोशित नादान भाइयों को मैं दोषी भी नहीं मान सकता। पुनरपि सदियों पूर्व की बातें उखाड़ कर वर्तमान पीढ़ी के प्रति प्रतिशोध भड़काकर देश को गृहयुद्ध की ओर ले जाना कदापि न्याय वा बुद्धिमानी का काम नहीं है, बल्कि इससे सर्वनाश ही होगा। हाँ, दुःख तो इस बात का है कि सत्य, न्याय कहीं भी दिखायी नहीं देता। **अंग्रेज लोग जैसा विखण्डित भारत चाहते थे, उनका स्वप्न पूर्ण होता दिखायी दे रहा है। इन युद्धोन्मादग्रस्त किसी भी व्यक्ति वा वर्ग को यह ज्ञात नहीं कि भारतीय इतिहास इस बात का साक्षी है कि जिस किसी ने स्वदेश के किसी भी राजा आदि को नष्ट करने हेतु विदेशी शक्तियों का साथ दिया, वह व्यक्ति वा वर्ग अपने स्वदेशी शत्रु को मरवाकर स्वयं भी विदेशी क्षणिक स्वार्थी मित्रों के हाथों मारा गया और धीरे-२ देश पराधीन हो गया, जिसके कारण सम्पूर्ण प्रजा को ही अत्याचारों का सामना करना पड़ा।** शासक वर्ग को अत्याचारों का सामना अधिक करना स्वाभाविक था। इसी प्रकार इतिहास आज फिर अपनी पुनरावृत्ति करने की ओर अग्रसर है। इससे जिन्हें मारने व सताने का लक्ष्य है, वे तो मरेंगे ही, साथ ही जो भारतीय शासन को अपनी मुट्ठी में ही लेने का प्रयास कर रहे हैं, वे भी अन्ततः बच नहीं पायेंगे। इससे लाभ केवल विदेशी ताकतों को ही होगा और विदेशी ताकतों का षड्यन्त्र ही

यही है परन्तु ये नादान भाई, जो अपने को ही मूल निवासी कहते हैं, मतमदान्ध होकर किसी भी हितैषी की बात भी सुनना नहीं चाहते। मैं समझता हूँ कि इन नव प्रबुद्ध जनों को मेरी भी बातें न तो सत्य प्रतीत होंगी और न रुचिकर ही। आज सारे देश में **मैकाले की कुटिल शिक्षा का जो साम्राज्य है, उसी का यह परिणाम है कि आज न केवल ये नादान संगठन अपितु देश की दूषित व घृणित राजनीति से प्रेरित नितान्त मूर्खा शिक्षा नीति ही इस सब पाप की जड़ है** और उसका बीज तो वही है, जो मध्य काल में कथित पुराणादि अनार्ष ग्रन्थ तथा मनुस्मृति आदि आर्ष ग्रन्थों के प्रक्षेप हैं, जिनकी ओर महर्षि दयानन्द सरस्वती के अतिरिक्त किसी भी समाज सुधारक वा देशभक्त माने जाने वाले व्यक्ति का ध्यान नहीं गया और जिस महर्षि का ध्यान गया, उस ओर भारत के काले अंग्रेज शासकों, संविधान निर्माताओं वा परजीवी वा विदेशियों के उच्छिष्ठभोजी शिक्षाविदों का ध्यान नहीं गया, तब कौन इस देश को सन्मार्ग दिखाता? यहाँ तो **''हर शाख पै उल्लू बैठा है।''**

(क) ये विद्वान् हैं वा विदूषक?

मेरे प्रिय पाठक गण! किसी भी मानव का प्रथम कर्तव्य है कि हर काम सोच विचार कर ही करे, केवल परायी बुद्धि से नहीं बल्कि अपनी बुद्धि से भी सोचना चाहिए। आज भारत के अधिकांश कथित वेदवित्, जो वेदों में आर्य-अनार्यों का इतिहास ढूंढ़ते हैं तथा इसी आधार पर वे भारत के मूल निवास की परीक्षा करते हैं, वे बौद्धिक रूपेण विदेशी भाष्यकारों प्रो. मैक्समूलर आदि पर ही जीवित रहते हैं और कुछ कथित दलित नेता कहे जाने वाले डॉ. अम्बेडकर की ही बातों को बिना विचारे स्वीकार करते हैं। परन्तु इतनी सावधानी अवश्य वर्तते हैं कि प्रो. मैक्समूलर अथवा डॉ. अम्बेडकर की जो-२ बातें राष्ट्रिय एकता, अखण्डता व वेद वा मनु की प्रशंसा में कही गयी हैं, उन-उनको ये कथित प्रबुद्ध वा राजनेता स्वीकार नहीं करते हैं और जिन-२ बातों से इन प्रबुद्धों वा नेताओं के अपने स्वार्थ सिद्ध हो सकते हैं, उनको लेकर इन दोनों ही विद्वानों के प्रति पूर्ण श्रद्धा व भक्ति का प्रदर्शन करते हैं। अपने इसी पूर्वाग्रह, दुराग्रह वा अन्धे प्रतिशोधवश **मानवता के सच्चे प्रतिष्ठापक, स्वराज्य के प्रथम मंत्रदाता, शूद्र वर्ण के विशेष हितैषी, वेद के यथार्थ द्रष्टा, अंग्रेजी शासन में विदेशी राज्य व**

विदेशी सम्प्रदायों के प्रखर व निर्भीक समालोचक महर्षि दयानन्द सरस्वती को ''अंग्रेज शासकों का चापलूस, ईसाई संस्कृति के आचार विचार को पूरी वफादारी के साथ निभाने वाला, उपनिषदों, ब्राह्मणों व वेदान्त का विरोधी'' कहना बुद्धि के दिवालियापन के अतिरिक्त और क्या कहा जा सकता है? (देखें- **देवता, झूठे देवता, शूद्र और अछूत,** भाग-३, लेखक- स्वप्न कुमार विश्वास)

प्यारे पाठक गण! कुछ लोग विचारेंगे कि ये स्वप्न कुमार जी विश्वास जैसे लोग बड़े बुद्धिमान् व उच्च शिक्षित विद्वान् हैं, तो इनका कहना सत्य ही होगा। परन्तु जरा सोचिये उस अंग्रेजी क्रूर काल में जिस **ऋषि दयानन्द** ने उद्घोष किया था। **''कोई कितना करे स्वदेशी राज सर्वोपरि होता है।..भूमण्डल में आर्यावर्त्त देश के सदृश उत्तम कोई भी देश नहीं है। विदेशी हम पर कभी शासन न करें।''**

जो वीर संन्यासी ऐसी सिंह गर्जना करता था। क्या उस समय के किसी भी अन्य सुधारक ने ऐसा कहने का साहस किया? जिस ऋषि ने अपने ग्रंथ सत्यार्थ प्रकाश में ईसाई सम्प्रदाय के खण्डन में एक पूरा समुल्लास लिखा। क्या उस ऋषि को अंग्रेजों का चापलूस व ईसाई सम्प्रदाय का पोषक कहना घोर मूर्खता नहीं हैं? इससे सिद्ध होता है कि श्री स्वप्न कुमार जी ने ऋषि दयानन्द के साहित्य को देखा तक नहीं। ये महाशय कहते हैं कि आर्य समाज के दस नियम ईसाइयों से लिये गये हैं। वाह रे लाल भुजक्कड़ी बौद्धिक प्रतिभा के धनी मेरे मित्र! आपने तो चमत्कार कर दिया? आप ऐसे बुद्धिजीवी जिस संगठन में हों, वह भी कैसे किसी का भला सोच सकेगा ? और उसका स्वयं का भी भला कैसे होगा? आर्य समाज का तृतीय नियम है- **''वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।''** जरा पूछना, किसी ईसाई पादरी से कि वह वेद को सब सत्य विद्याओं का पुस्तक मानकर नित्य उसे पढ़ना परम धर्म मानता है कि नहीं? अपने भगवान् माइकल बामशाद, जो D.N.A. परीक्षण के चमत्कारी आविष्कारक हैं, से ही पूछ लेना कि आपके ईसाई देश अमेरिका में क्या चर्च वेद को ऐसा मानते हैं? मेरा निश्चित मत है कि इन महाशय को आर्य समाज के नियम याद तो क्या, इन्होंने पढ़े भी नहीं होंगे। हम इतना अवश्य कहना चाहते हैं कि आर्य समाज के

चौथे से लेकर दसवें नियम तक का संसार का कोई भी सभ्य व्यक्ति विरोध नहीं कर सकता, भले ही वह आस्तिक हो वा नास्तिक। इसके प्रथम व द्वितीय नियमों को संसार का कोई भी आस्तिक (ईश्वरवादी) ठुकरा नहीं सकता। केवल तृतीय नियम आर्य समाज का मूल है, जो इसका वैशिष्ट्य है परन्तु पता नहीं आपको क्या हो गया है? जिनको आर्य समाज के नियमों की जानकारी नहीं हो, वे इसी पुस्तक के अन्त में उन्हें ध्यान से पढ़ने का कष्ट करें। **''भारत के मूल निवासी और आर्य आक्रमण''** नामक पुस्तक के पृष्ठ ६० पर श्री स्वप्नकुमार जी **ऋग्वेद** के मंत्र (१.१०३.७) का अर्थ करते हुए लिखते है - ''इन्द्र को रात के अन्धकार में गोशालाओं से पगहा (रस्सी) खोलकर गौ चोरी करते देखा गया है।'' यह मंत्र है-

''तदिन्द्र प्रेव वीर्यं चकर्थ यत्ससन्तं वज्रेणाबोधयोऽहिम्।
अनु त्वा पत्नीर्हृषितं वयश्च विश्वे देवासो अमदन्ननु त्वा।।''

पाठक जरा ध्यान दें कि इस मंत्र में कहीं भी गौ, गौशाला अथवा रस्सी का नाम तक नहीं है। तब स्वप्न कुमार ने इन्द्र गाय की चोरी करते हुए कहां देखा? अब इस मंत्र का महर्षि दयानन्द कृत अर्थ देखिये-

हे (इन्द्र) सेनाध्यक्ष! आप (ससन्तम्) सोते हुए वा चिन्ता रहित (अहिम्) सर्प वा शत्रु को (यत्) जो (वज्रेण) तीक्ष्ण शस्त्र से (अबोधय) सचेत करते हो (तत्र) सो (वीर्यम्) अपने बल को (प्रेव) प्रकट सा (चकर्थ) करते हो (अनु) उसके पीछे (हृषितम्) उत्पन्न हुआ है आनन्द जिनको, उन (त्वा) आपको (पत्नी) आपके स्त्री जन और (वयः) ज्ञानवान् (विश्वे) समस्त (देवाश्च) विद्वान् जन की (त्वा) आपको (अन्वमदन्) अनुकूलता से प्रसन्न करते हैं।

क्या ये कथित लेखक मेरे इस भाष्य को समझने का प्रयास करेंगे? अब इस पर मैं अपना आधिदैविक व आध्यात्मिक भाष्य एवं सृष्टि में इस ऋचा के प्रभाव को दर्शाता हूँ-

तदिन्द्र प्रेव वीर्य्यं चकर्थ यत्ससन्तं वज्रेणाबोधयोऽहिम्।

अनु त्वा पत्नीर्हृषितं वयश्च विश्वे देवासो अमदन्ननु त्वा।।

(ऋ. १.१०३.७)

ऋषिः- अङ्गिरस कुत्सः। देवता- इन्द्रः। छन्द- त्रिष्टुप्।

तत् इन्द्र प्रेव (प्र+इव) वीर्य्यम् चकर्थ यत् ससन्तम् वज्रेण अबोधय अहिम् अनु त्वा पत्नीः हृषितम् वयः च विश्वे देवासः अमदन् त्वा

वह इन्द्र अर्थात् तीक्ष्ण विद्युत् तरंगें प्रकृष्ट बल व गति से युक्त एवं पदार्थों के उत्पादक प्राण अन्तरिक्ष के समान व्यापक होकर अपने बल व तेज को धारण करता है, जो अहि अर्थात् मेघरूप पदार्थ (ससन्तम्) सोए हुए अर्थात् निष्क्रिय हों, उन्हें अपने तीक्ष्ण बल-तेज के द्वारा सक्रिय कर देता है।

उस इन्द्रतत्व की रक्षिका अनेक प्रकार की रश्मिरूप पत्नियां, उत्तेजित अवस्था प्राप्त संयोज्य नाना रश्मियां वा कण, सभी प्रकार की प्राणादि रश्मियां किंवा विद्युत् चुम्बकीय तरंगें अनुकूलतापूर्वक उसका अनुगमन करती हैं अर्थात् उसे बल प्रदान करती रहती हैं।

छान्दस दैवत प्रभाव- तीव्र विद्युत् तरंगें समृद्ध होती हैं। इनका तेज व बल विशेष तीक्ष्ण होने लगता है।

{प्रेति वै रेतः सिच्यते (शत.ब्रा. १.४.१.६), प्रेति वै प्राण (शत.ब्रा. १.४.१.५), प्राणो वै प्र (ऐत.ब्रा. २.४०), अन्तरिक्षं वै प्राण (ऐत.ब्रा. २.४१)। अहिः = मेघनाम (निघं. १.१०), अही गोनाम (निरु. २.११), पत्नी धाय्या (गोपथ उ. ३.३१)। वयः = अन्ननाम (निघं. २.७), पशवो वै वयांसि (शत.ब्रा. ८.३.३.७)।}

ऋचा का प्रभाव- इसके प्रभाव से ब्रह्माण्ड किंवा सूर्य्यादि तारों के अन्दर नाना प्रकार की क्रियाएं तीव्र होने लगती हैं। नाना मेघरूप विशाल पदार्थ तीव्र रूप से सक्रिय होने लगते हैं। इसके अन्दर विभिन्न तेजस्वी कण एवं तरंगें अनुकूलतापूर्वक उत्तेजित होने लगती हैं।

आध्यात्मिक भाष्य- वह इन्द्ररूप परमात्मा हमारे आत्मिक व मानसिक बल को बढ़ाता है तथा अन्तःकरण की सर्प के समान कुटिल वृत्तियों को अपने पापनाशक गुणों के द्वारा नष्ट करता एवं प्रसुप्त सद्वृत्तियों को जगाता है। उस परमात्मा के सानिध्य से हमारे अन्दर विद्यमान विभिन्न दैवी शक्तियां व प्रवृत्तियां, नाना प्रकार के आध्यात्मिक तेज व उनकी धारक शक्तियां हमें अनुकूलता से परमानन्द की प्राप्ति में सहायक होती चली जाती हैं।

विश्वासजी! कहाँ इन्द्र को गाय चुराते हुए देख रहे हो? आप तो मेरे इस भाष्य को भी समझ सकें, तब भी मैं आपको बुद्धिमान् समझ लूंगा।

स्वप्न कुमार विश्वास, आर. के. आकोदिया जैसे परजीवी लेखकों ने लाल भुजक्कड़ जैसी कई कल्पनायें की हैं। जैसे- (१) **जैमिनी पूर्व मीमांसा** के सूत्र ३२ के अनुसार- वेद कर्त्तव्यों का साक्ष्य कैसे हो सकते हैं? जबकि उनमें ऐसे असंगत एवं अनर्गल बातें भरी पड़ी हैं। जैसे- कम्बल और खड़ाऊ पहने एक बूढ़ा द्वार पर खड़ा है और आशीष के गीत गा रहा है। ...... समर्पण को तत्पर एक ब्राह्मणी कहती है- ''हे राजन्, बता प्रतिपदा के दिन मैथुन का क्या अर्थ है अथवा क्या गऊओं ने इस बलि पर उत्सव मनाया?'' (**हिन्दू धर्म की बिडम्बनायें**- पृ.१०८ आर. के. आकोदिया)

पाठक गण कृपया ध्यान दे कि यह सूत्र है- ''कृते वा विनियोगः स्यात् कर्मणः सम्बंधात्।।'' (१.३२)। यह सूत्र वेद को पौरुषेय (मनुष्यकृत) बताने वाले मत के खण्डन में प्रयुक्त सूत्रों में से है। अर्थ- (वा) पूर्व पक्ष की निवृत्ति में अर्थात् दोष नहीं है (कृ-ते) कर्म में (विनियोगः) विशेष नियोग-सम्बन्ध होगा (कर्मणः) कर्म के साथ (सम्बंधात्) सम्बन्ध होने से। (मीमांसा-शाबर-भाष्य हिन्दी टीका- पं. युधिष्ठिर मीमांसक)

जिन पाठकों के थोड़ी भी बुद्धि और आंखें हैं, वे जरा बतायें कि इस सूत्र में कम्बल, खड़ाऊ, बूढ़ा, ब्राह्मणी, गौ, मैथुन आदि शब्द हैं, क्या? तब आकोदिया जी को कहां से दिखायी दे गये ? क्या आकोदिया जी की बुद्धि किसी की दासतावश तो यह नहीं लिखवा रही है?

(२) यही महाशय फिर इस पुस्तक में पृष्ठ १०७ पर लिखते हैं कि न्याय दर्शन के प्रणेता महर्षि गौतम वेद को प्रामाणिक नहीं मानते हैं क्योंकि उनमें मिथ्यावाद है। परन्तु हमें लगता है कि उन्होंने न्याय दर्शन को देखा भी नहीं। **न्याय दर्शन** के सूत्र

''मन्त्रायुर्वेदप्रामाण्यवच्च तत्प्रामाण्यमाप्तप्रामाण्यात्।।'' (२.१.६८)

(मन्त्रायुर्वेदप्रामाण्यवत्) मन्त्रप्रामाण्य, आयुर्वेदप्रामाण्य के समान (च) और (तत्प्रामाण्यम्) वेद का प्रमाण्य है (आप्तप्रामाण्यात्) आप्त प्रामाण्य से। यहाँ तो वेद का प्रामाण्य सिद्ध हो रहा है, महाशय! आप कहाँ भटक गये?

(३) भगवान् मनु को किसानों और शोषितों का नेता। अग्नि को बलासुर का पुत्र तथा मित्र और वरुण को भी भारत का मूल निवासी कहा है। देवताओं ने रिश्वत देकर इन भारतीयों को आपस में लड़ाया। तब देवराज इन्द्र ने इस देश पर आक्रमण कर दिया। यह लिखा है स्वप्न कुमार विश्वास ने। (देखें- **भारत के मूलनिवासी और आर्य आक्रमण,** पृष्ठ- ६१ व ६२)

पाठकगण! देखा, कितनी मनोरंजक बात है! **जरा सोचिये कि मनु मूल निवासी थे, तो उनको और उनकी मनुस्मृति को आज तक क्यों गाली दे रहे हैं?** प्रायः अनजान व्यक्ति भी जानता है कि मित्र, वरुण, अग्नि ये देव वर्ग के महापुरुष हुए हैं। परन्तु ये इन्हें असुर मान रहे हैं क्योंकि ये इनको मूल निवासी बताते हैं। ऐसे लेखकों के आदर्श हैं डॉ. भीमराव जी अम्बेडकर, कालमार्क्स, रमेशचन्द्र मजूमदार, मार्क्स के साथी एंगेल्स, कहीं-२ नेहरू, विवेकानन्द, टैगोर आदि को भी उद्धृत किया है। वास्तविकता यह है कि इनमें से कोई वेदादि शास्त्रों की वर्णमाला भी नहीं जानता। स्वामी विवेकानन्द उपनिषदों का कुछ ज्ञान रखते थे परन्तु वेद विषय में नितान्त अनभिज्ञ थे। ये लेखक डॉ. अम्बेडकर जी को ही सबसे अधिक उद्धृत करते हैं।

(ख) इनके आदर्शों की योग्यता

अब जरा डॉ. भीमराव जी अम्बेडकर की योग्यता पर भी विचार करें- डॉ. साहब स्वयं एक देशभक्त मनुष्य थे और प्रारम्भ में एक निष्पक्ष शोधकर्त्ता विद्वान् भी थे। इसलिए उन्होंने स्वीकार किया कि ''यदि यह कहा जाय कि मैं संस्कृत का पंडित नहीं, तो मैं मानने को तैयार हूँ। परन्तु संस्कृत का पंडित न होने से मैं इस विषय पर लिख क्यों नहीं सकता? संस्कृत का बहुत थोड़ा अंश है, जो अंग्रेजी भाषा में उपलब्ध नहीं है। इसलिए संस्कृत न जानना मुझे इस विषय पर लिखने का अनधिकारी नहीं ठहराया जा सकता। अंग्रेजी अनुवादों का पन्द्रह साल अध्ययन करने के बाद यह अधिकार मुझे अवश्य प्राप्त है।'' (**शूद्रों की खोज**, प्राक्कथन पृष्ठ-२ समता प्रकाशन नागपुर) और यह **''महर्षि मनु बनाम डॉ. अम्बेडकर''** नामक पुस्तक के पृष्ठ १६८ व २०२ से उद्धृत है, जिसके लेखक डॉ. सुरेन्द्र कुमार हैं। इसी में डॉ. सुरेन्द्रजी डॉ. अम्बेडकर को उद्धृत करते हैं।

''हिन्दू धर्मशास्त्र का मैं अधिकारी ज्ञाता नहीं हूँ।'' (**जाति भेद का उच्छेद**, पृष्ठ १०१, बहुजन कल्याण प्रकाशन, लखनऊ)

इन दो प्रमाणों से स्पष्ट है कि डॉ. अम्बेडकर जी को वैदिक अथवा भारतीय वाङ्मय का स्वयं कोई ज्ञान नहीं था। वे केवल विदेशी विद्वानों की अंग्रेजी टीकाओं को पढ़कर ही अपने विचार व्यक्त करते रहे। उन्हें उद्धृत करते हुए **''भारत के मूल निवासी और आर्य आक्रमण''** नामक पुस्तक में पृ. ६ व ७ पर श्री विश्वास लिखते हैं- ''जो वैदिक साहित्य, संस्कृत साहित्य या तात्कालिक साहित्य आधारित धर्म-संस्कृति के कठोर आलोचक रहे हैं, उनके विचारों एवं सिद्धान्तों को भले ही हम महत्व न देना चाहें किन्तु जर्मन भाषाविद् और संस्कृत के प्रकाण्ड पंडित मैक्समूलर के विचारों की तो उपेक्षा नहीं कर सकते। मैक्समूलर आर्यत्व के बलिष्ठतम उद्गाता और प्रचारक थे। वेद एवं संस्कृत साहित्य और भाषा के, वे प्रगल्भ स्तुतिकार थे।'' इससे क्या सिद्ध होता है कि डॉ. अम्बेडकर साहब प्रो. मैक्समूलर के अतिरिक्त अन्य विदेशी अथवा स्वदेशी वैदिक साहित्य के आलोचकों यथा- कालमार्क्स आदि को प्रामाणिक नहीं मानते थे। क्योंकि मैक्समूलर, जो संस्कृत के प्राध्यापक थे, की बात को वे पूर्ण प्रामाणिक मानते थे। तब सर्वप्रथम तो डॉ.

अम्बेडकर के अनुवर्ती विद्वानों को चाहिए कि वे मैक्समूलर के अतिरिक्त अन्य विदेशी या स्वदेशी वेदविरोधियों को अपने ग्रन्थों में उद्धृत न करें। मेरे प्रिय पाठकगण! आप समझते हैं कि आधुनिक तथाकथित दलित नेता व विद्वान् डॉ. भीमराव अम्बेडकर जी के ही पूर्ण अनुयायी हैं परन्तु ऐसा है, नहीं। जहाँ भी डॉ. साहब की बात इनको अनुकूल नहीं प्रतीत होती है, वहाँ ये डॉ. साहब को मूर्ख भी मानते हैं। **''भारत के मूल निवासी और आर्य आक्रमण''** नामक पुस्तक में पृ. १२१ व १२२ पर डॉ. अम्बेडकर जी के विचार, ''ज्यादातर आर्य पशु पालक, पशुपालन व कृषि के लिए इधर-उधर भटकते हुए इस देश में पहुँच गये और ऐसा करने के अतिरिक्त उनके पास कोई विकल्प भी नहीं था,'' को श्री विश्वास निर्मूल बताते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि डॉ. अम्बेडकर की अपेक्षा ये वर्तमान दलित लेखक अधिक बुद्धिमान् हैं और जिन प्रो. मैक्समूलर को डॉ. अम्बेडकर अपने लिए परम प्रमाण मानते हैं, उन मैक्समूलर ने अपने ग्रन्थ **"Biography of Words"** में लिखा है, जिसे हमने **''भारत के मूल निवासी और आर्य आक्रमण''** नामक पुस्तक के पृ. संख्या १२३ से उद्धृत किया है-

"There is no Aryan race in blood. Aryan is scientific language is utterly inapplicable to race."

अर्थात् आर्य नाम की कोई जाति नहीं है। इसको उद्धृत करते हुए श्री विश्वास ने प्रो. मैक्समूलर की इस बात को सिरे से नकार दिया है। परन्तु यह विश्वास कौन हैं, इसको विद्वत् समुदाय का कोई भी व्यक्ति नहीं जानता है। जबकि डॉ. अम्बेडकर और प्रो. मैक्समूलर को संसार के अनेक विद्वान् जानते हैं। और उनके विचारों के आधार पर ही सम्पूर्ण भारतवर्ष या विश्व में वेद वा आर्य संस्कृति के विरुद्ध वातावरण तैयार किया जा रहा है। उनकी (प्रो. मैक्समूलर की) योग्यता के विषय में महर्षि दयानन्द जी सरस्वती ने कहा है- ''जिस देश में बड़े-२ वृक्ष नहीं होते वहाँ अरण्ड ही बड़ा वृक्ष माना जाता है।''

(ग) पश्चिमी वेदानुसंधानकर्त्ताओं की भावना

अब हम स्वयं पहले पश्चिमी विद्वानों की भावना की परीक्षा करते हैं। इस विषय में स्वामी विद्यानन्दजी सरस्वती अपने ग्रन्थ **'भूमिका भास्कर'** में पृ. ७, ८ व ६ पर लिखते हैं-

भारतीय स्वाधीनता के प्रथम युद्ध की समाप्ति के दो वर्ष बाद इंग्लैण्ड के तत्कालीन प्रधानमंत्री लॉर्ड पामर्स्टन ने घोषणा की-

"It is not only our duty but in our own interest to promote the diffusion of Christianity as far as possible through out the length and breadth of India." **(Christianity and Government of India by Mahew, p. 194)**

अर्थात् 'यह हमारा कर्तव्य ही नहीं, अपितु हमारा अपना हित इसी में है कि भारतभर में ईसाइयत का प्रचार-प्रसार हो।'

इससे पूर्व ईस्ट इंडिया कम्पनी के बोर्ड ऑफ डायरेक्टर्स के चेयरमैन मिस्टर मेंगल्स ने ब्रिटिश पार्लियामेण्ट में कहा था-

"Providence has entrusted the extensive empire of India to England in order that the banner of Christ should wave triumphant from one end of India to the other. Everyone must exert all his strength that there may be no dilatoriness on any account in continuing in the country the grand work of making all Indians Christians."

अर्थात् 'विधाता ने हिन्दुस्तान का विशाल साम्राज्य इंग्लैण्ड के हाथों में इसलिए सौंपा है कि वह ईसामसीह का झण्डा इस देश के एक कोने से लेकर दूसरे कोने तक फहराये। प्रत्येक ईसाई का कर्त्तव्य है कि वह समस्त भारतीयों को अविलम्ब ईसाई बनाने के महान् कार्य में पूरी शक्ति के साथ जुट जाए।'

बम्बई के गवर्नर लॉर्ड री ने १८७६ में ईसाई मिशनरियों के शिष्टमण्डल को प्रिंस ऑफ वेल्स के सामने प्रस्तुत करते हुए कहा था– "They are doing in India more than all those civilians, soldiers, judges and governors your highness has met."

अर्थात् 'जितना काम आपके सिपाही, जज, गवर्नर और दूसरे अफसर कर रहे हैं, उससे कहीं अधिक ये मिशनरी कर रहे हैं।'
वेद के अनुसन्धान और अनुवाद कार्य में लगने का क्या उद्देश्य था, यह उसने अपनी पत्नी के नाम लिखे एक पत्र में स्पष्ट कर दिया–

"This edition of mine and the translation of the Veda will, hereafter, tell to a great extent on the fate of India. It is the root of their religion and to show them what the root is, I feel sure is the only way of uprooting all that has sprung from it during the last three thousand years." **(Life and letters of Frederick Maxmuller, Vol. I, Chap. XV, p. 34)**

अर्थात् 'मेरा यह संस्करण और वेद का अनुवाद भारत के भाग्य को दूर तक प्रभावित करेगा। यह उनके धर्म का मूल है और उन्हें यह दिखा देना कि वह मूल कैसा है, गत तीन हजार वर्षों में इससे उत्पन्न होने वाली सब बातों को समूल उखाड़ने का एकमात्र उपाय है।'

भारत–सचिव के नाम १६ दिसम्बर १८६८ को लिखे अपने पत्र में मैक्समूलर ने लिखा–

"The ancient religion of India is doomed. Now, if Christianity does not step in whose fault will it be?" (Ibid. Vol. I, Chap. XVI, p. 378)

अर्थात् 'भारत का प्राचीन धर्म नष्टप्राय है। अब यदि ईसाइयत उसका स्थान नहीं लेती, तो यह किसका दोष होगा?'

मैक्समूलर के प्रयासों की सराहना करते हुए उनके घनिष्ट मित्र ई. बी. पुसे ने अपने एक पत्र में लिखा–

"Your work will mark a new era in the efforts for the conversion of India."

अर्थात् 'आपका कार्य भारतीयों को ईसाई बनाने की दिशा में नवयुग लाने वाला होगा।'

विदेशियों ने जिस ध्येय को लक्ष्य में रखकर हमारे साहित्य में इतना घोर परिश्रम किया, उसका पता मोनियर विलियम्स द्वारा अपनी **'Sanskrit English Dictionary'** की भूमिका में लिखे इन शब्दों से लग जाता है–

"I must draw attention to the fact that I am only the second occupant of the Boden Chair and that its founder, Colonel Boden, stated most explicitly in his will (dated August 15, 1811 A.D.) that the special object of his munificent bequest was to promote the translation of scriptures into English, so as to enable his countrymen to proceed in the conversion of the natives of India to the Cristian religion."

भाव यह है कि 'मिस्टर बोडन के ट्रस्ट द्वारा संस्कृत के ग्रन्थों के अनुवाद का कार्य भारतीयों को ईसाई बनाने में अपने देश (इंग्लैण्ड) वासियों की सहायता करने के लिए हो रहा है।' यही मोनियर विलियम्स अपनी पुस्तक **'The Study of Sanskrit in relation to Missionary work in India'** (1861) में लिखते हैं–

"When the walls of the mighty fortress of Hinduism are encircled, undermined and finally stormed

by the soldiers of the cross, the victory of Christianity must be signal and complete."

भाव यह है कि मोनियर विलियम्स आदि पाश्चात्य विद्वानों का लक्ष्य हिन्दू धर्म को नष्ट करके भारत में ईसाइयत की पताका फहराने का था। यही उनके संस्कृत-प्रेम की पृष्ठभूमि थी। बोडन-पीठ पर नियुक्त होने वाले सबसे पहले विद्वान् प्रोफेसर विलसन थे। अपनी पुस्तक **'Religious and Philosophical systems of the Hindus'** के लिखने का उद्देश्य उन्होंने इन शब्दों में व्यक्त किया है- "These lectures were written to help candidates for a prize of £ 200 given by John muir a great Sanskrit scholar, for the best refutation of the Hindu religious system."

अर्थात् प्रोफेसर विलसन का सारा परिश्रम '२०० पौण्ड की खातिर हिन्दू धर्म के खण्डन के निमित्त निबन्ध लिखनेवाले विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करने के लिए था।' (ये सभी उद्धरण भूमिका भास्कर से साभार लिये गये हैं।)

(घ) पश्चिमी वैदिक स्कॉलरों की योग्यता की परीक्षा

अब हम पाश्चात्य वैदिक विद्वानों की योग्यता की परीक्षा करते हैं। पं. धर्मदेवजी विद्यामार्तण्ड अपने ग्रन्थ **"वेदों का यथार्थ स्वरूप"** में पृष्ठ २८ व २६ पर लिखते हैं-

इन धुरन्धर पाश्चात्य विद्वानों की (जिन्होंने कई-२ ग्रन्थ वैदिक साहित्य पर लिखने का साहस किया) संस्कृतविषयक योग्यता का पाठक निम्नलिखित उदाहरण से पता लगा सकते हैं, जिसका महात्मा नारायण स्वामी जी ने **'वैदिक रहस्य'** में विश्वसनीय साक्ष्य के आधार पर उल्लेख किया है।

“कई वर्ष हुए जब संस्कृत और अंग्रेजी के एक देशी विद्वान् गवर्नमेंट से छात्रवृत्ति पाकर संस्कृत के विशेष अध्ययन के लिए इंग्लैण्ड गये। संस्कृत के अध्यापक उस समय प्रो. मैक्डॉनल महोदय थे। उनकी जब प्रो. मैक्डॉनल से भेंट हुई, तो उन्होंने संस्कृत में बातचीत शुरू की, किन्तु मैक्डॉनल उनसे संस्कृत में बातचीत नहीं कर सके। उस समय प्रो. मैक्डॉनल ने अपने आने वाले शिष्य से कहा कि ‘यह मैं स्वीकार करता हूँ कि संस्कृत की आपकी जितनी योग्यता है, उतनी मेरी नहीं, किन्तु आप यहाँ संस्कृत साहित्य के अध्ययन के लिए नहीं भेजे गये हैं। यहाँ तो आप केवल इसलिए आये हैं कि पश्चिमी विद्वानों की अन्वेषण प्रणाली को आप सीख लें।”

इसे कहीं पक्षपातपूर्ण अत्युक्ति न समझा जाय, इसलिए हम (अर्थात् पं. धर्मदेवजी विद्यामार्तण्ड) इस विषय में अपना अनुभव भी पाश्चात्य विद्वानों की संस्कृत-योग्यता के सम्बन्ध में दे देना उचित समझते हैं। हमें दिल्ली और इससे पूर्व दक्षिण भारत में रहते हुए अनेक ऐसे पाश्चात्य विद्वानों से मिलने का अवसर प्राप्त हुआ, जो संस्कृत और वैदिक साहित्य के धुरन्धर माने जाते हैं। (उदाहरणार्थ- ऑक्सफोर्ड में संस्कृत विभाग के अध्यक्ष प्रो. टॉमस, पेरिस विश्वविद्यालय में भारतीय विद्या वा Indology के अध्यक्ष प्रो. रेनू, इटली के प्रो. तुच्ची इत्यादि) किन्तु इटली के प्रो. तुच्ची को छोड़कर, जो संस्कृत में अपने भाव को कुछ अंश तक, व्याकरणविषयक अशुद्धि करते हुए, प्रकट कर सकते थे, हमने किसी के अन्दर संस्कृत भाषण की योग्यता नहीं देखी। त्रिवेन्द्रम में सन् १९३७ में All India Oriental Conference (प्राच्य विद्या सम्मेलन) के अध्यक्ष प्रो. एफ. डब्ल्यू. टॉमस के पास जाकर मैंने संस्कृत में पूछा-

संस्कृतभाषायां भाषणस्याभ्यासो वर्तते किं श्रीमताम्?

अर्थात् ‘क्या आपको संस्कृत में बोलने का अभ्यास है’ तो उन्होंने अंग्रेजी में उत्तर देते हुए कहा-

ow I wish I could speak in Sanskrit fluently like you, but unfortunately, I have no practice.

अर्थात् मेरी कितनी इच्छा होती है कि मैं आपकी तरह संस्कृत में धाराप्रवाह रूप से बोल सकता, किन्तु दुर्भाग्यवश मुझे इसका अभ्यास नहीं। ऐसा ही उत्तर प्रो. रेनू ने दिल्ली में दिया और उनके भाषण के पश्चात् (जो दिल्ली यूनिवर्सिटी में संस्कृत साहित्य पर दिया गया था) जब मैंने पूछा कि क्या स्वामी दयानन्द जी के वेद भाष्यादि को पाश्चात्य संस्कृतज्ञ विद्वान् पढ़ते हैं? यदि हाँ, तो उनकी क्या सम्मति है? तो इसका उत्तर देते हुए प्रो. रेनू ने कहा कि वहां संस्कृतज्ञ विद्वान् भी मूल संस्कृत ग्रन्थों को समझने की प्रायः योग्यता नहीं रखते। यदि अंग्रेजी में उनका अनुवाद हो, तभी वे उसे पढ़ और समझ सकते हैं। इस कारण उन ग्रन्थों का वहां कुछ प्रचार नहीं हुआ। इस बात को कहते हुए हम पाश्चात्य विद्वान्, जो एक प्रकार की आलोचनात्मक दृष्टि से जो संस्कृत साहित्य का अध्ययन करते हैं और अनेक प्रकार की उपयुक्त सूचियां बनाने में जो परिश्रम करते हैं, उससे इन्कार नहीं कर रहे, किन्तु उनकी वेद और संस्कृत विषयक योग्यता पर निर्भर रहने में हमारे भारतीय विद्वानों ने भयंकर भूल की, हम इतना ही लिखना चाहते हैं। हम नहीं, अनेक सुप्रसिद्ध पाश्चात्य विद्वानों ने स्वयं इस बात को स्वीकार किया है। उदाहरणार्थ ट्रान्सवाल (प्रिटोरिया) के एक प्रसिद्ध विद्वान् फिट्ज ने अपने एक व्याख्यान में कहा था-

कुछ पश्चिमी विद्वानों ने वेदों के सम्बन्ध में कहा है। मुझे इन विद्वानों के कथन पर बिल्कुल विश्वास नहीं है क्योंकि इन पण्डितों का संस्कृत और वेद का ज्ञान नहीं के बराबर है। इस बात पर हम केवल दयानन्द के भाष्य को प्रामाणिक समझते हैं।

पुनः इसी ग्रन्थ में पृष्ठ ५६, ५७, ५६, ६० व ६२ पर लिखे कुछ विदेशी निष्पक्ष विद्वानों के वेदविषयक विचारों को हम संक्षेप में लिखते हैं।

प्रो. हीरेन् नामक ईसाई विद्वान् का वेदविषयक लेख

प्रो. हीरेन् (Prof. Heeren) नामक एक सुप्रसिद्ध विद्वान् ने वेदों के विषय में लिखा कि-

They (The Vedas) are without doubt the oldest works composed in Sanskrit. Even the most ancient Sanskrit writings allude to the Vedas as already existing. The Vedas stand alone in their solitary splendour standing as beacon of Divine Light for the onward march of Humanity. (**Historical Researches by prof. Heeren**, Vol. II, p. 127)

अर्थात् इसमें सन्देह नहीं कि वेद संस्कृत के प्राचीनतम ग्रन्थ हैं। उपलभ्यमान सबसे अधिक प्राचीन संस्कृत ग्रन्थों में भी उनकी विद्यमानता का स्पष्ट निर्देश पाया जाता है। वे मनुष्यमात्र की उन्नति के लिए अपनी अद्भुत शान में दिव्य प्रकाश-स्तम्भ का काम देते हैं।

नोबेल पुरस्कार विजेता मैटरलिंक का अभिप्राय

नोबेल पुरस्कार विजेता सुप्रसिद्ध दार्शनिक मैटरलिंक ने स्टाइनर् नामक विद्वान् के शब्दों में वेदों के महत्व को निम्नलिखित शब्दों में प्रकट किया-

'Only the gaze of the clairvoyant, directed upon the mysteries of the past, may reveal un-uttered wisdom which lies hidden behind these writings (The Vedas) P. 9. 'Whence did our pre-historic ancestors in their supposed terrible state of ignorance and abandonment, derive these extra-ordinary intuitions – that knowledge and assurance

which we ourselves are re-conquering.' (**The Great Secret by Maeterlinck**, P. 44)

भावार्थ- केवल सूक्ष्मदर्शी की अन्तर्दृष्टि ही है, जो वेदों में भरे सूक्ष्म ज्ञान को प्रकट कर सकती है। आश्चर्य यह है कि हमारे प्रागैतिहासिक काल के पूर्वजों ने, जिनके विषय में यह कल्पना की जाती है कि वे घोर अज्ञान की भयंकर अवस्था में थे, कहां से वह असाधारण अन्तर्ज्ञान प्राप्त कर लिया, जिसे हम फिर से प्राप्त करने का प्रयत्न कर रहे हैं?

अमेरिका के सुप्रसिद्ध विचारक थोरियो की सम्मति

थोरियो नामक अमेरिका के सुप्रसिद्ध विद्वान् ने वेदों के विषय में निम्न उद्गार प्रकट किये-

'What extracts from the Vedas I have read fall on me like the light of a higher and purer luminary which describes a loftier course through a purer stratum – free from particulars, simple, universal; the Vedas contain a sensible account of God.' (Quoted from Mother America, by Swami Omkar, p. 9)

भावार्थ- मैंने वेदों के जो उद्धरण पढ़े हैं, वे मुझ पर एक उच्च व पवित्र ज्योतिपुंज के प्रकाश की तरह पड़ते हैं, जो एक उत्कृष्ट मार्ग का वर्णन करता है।

रूस के विद्वान् बौलंगर की वेद में श्रद्धा

Sacred Books of the East Series के Russian Edition के सम्पादक मि. बौलंगर (Mr. Boulanger) ने प्रसिद्ध जर्मन विद्वान् प्रो. मैक्समूलर के वेदों के अटकलपच्चू अनुवाद (स्वयं प्रो. मैक्समूलर ने The Vedic Hymns में स्वीकार किया है कि- 'My translation of the Vedas is conjectural' अर्थात् 'वेदों का मेरा अनुवाद

अटकलपच्चू वा अनुमान पर आश्रित है') की कड़ी समालोचना करते हुए भूमिका में लिखा-

'What struck me in Maxmuller's translation was a lot of absurdities, obscene passages and a lot of what is not lucid.'

'As far as I can grasp the teaching of the Vedas, it is so sublime that I would look upon it as a crime on my part, if the Russian public becomes acquainted with it through the medium of a confused and distorted translation, thus not deriving for its soul that benefit which this teaching should give to the people.' (**Quoted here from Sadhu T. L. Vaswani's Torch**-bearer, P. 143)

अर्थात् प्रो. मैक्समूलर के अनुवाद में जिस बात से मुझे अत्यन्त आश्चर्य हुआ है वह यह है, कि उसमें बहुत सी बेहूदी, अश्लील और अस्पष्ट बातें हैं। जहां तक मैं वेदों की शिक्षा को समझ सकता हूँ, मुझे वह इतनी अधिक उच्च मालूम होती है कि रूसी जनता को एक गड़बड़ और भद्दे अनुवाद द्वारा उससे परिचय कराने को मैं बड़ा भारी अपराध मानता हूँ, क्योंकि इससे वह उस आत्मिक लाभ से वंचित रह जायेगी, जो वैदिक शिक्षा जनता को देती है।

मि. ब्राउन नामक अंग्रेज लेखक का मत

मि. डब्ल्यू. डी. ब्राउन (W.D. Brown) नामक एक अंग्रेज विद्वान् ने अपने Superiority of the Vedic Religion (वैदिक धर्म की श्रेष्ठता) नामक ग्रन्थ में वैदिक धर्म के विषय में जो लिखा है, वह स्वर्णाक्षरों में उल्लेख करने योग्य है। वे लिखते हैं-

'It (Vedic Religion) recognises but One God. It is a thoroughly scientific religion where religion and science meet hand in hand. Here theology is based upon science and philosophy.' (**The Superiority of the Vedic Religion** by W.D.Brown)

अर्थात् वैदिक धर्म केवल एक ईश्वर का प्रतिपादन करता है। यह एक पूर्णतया वैज्ञानिक धर्म है, जहां धर्म और विज्ञान हाथ में हाथ मिलाकर चलते हैं। धार्मिक सिद्धान्त यहां विज्ञान और तत्त्वज्ञान वा फिलॉसफी पर आश्रित हैं।

फ्रांसदेशीय श्री जैकोलियट् का महत्वपूर्ण वचन

श्री जैकोलियट् फ्रांस के एक बड़े प्रसिद्ध विद्वान् हुए हैं, जो चन्द्रनगर में कई वर्ष चीफ जस्टिस रहे थे और विविध मत-मतान्तरों के ग्रन्थों का अनुशीलन करते हुए उन्होंने एक अन्य ग्रन्थ लिखा था, जिसका अंग्रेजी अनुवाद **The Bible in India** नाम से प्रकाशित हुआ। इस पुस्तक में ईश्वरीय ज्ञान माने जाने वाले विविध मत-मतान्तरों के ग्रन्थों की सृष्ट्युत्पत्ति के विषय में वेदों के साथ तुलना करते हुए जैकोलियट महोदय ने बड़े आश्चर्य के साथ लिखा-

'Astonishing fact! The Hindu Revelation (Veda) is of all revelations the only one whose ideas are in perfect harmony with Modern Science, as it proclaims the slow and gradual formation of the world.' (**The Bible in India by Jacolliot,** Vol. II, Chapter 1)

अर्थात् कितनी आश्चर्यजनक सच्चाई है। हिन्दुओं का ईश्वरीय ज्ञान (वेद) ही, जो लोकों की मन्द और क्रमिक रचना बताता है, सब ईश्वरीय ज्ञानों में एक ऐसा है, जिसकी कल्पनाएं आधुनिक विज्ञान के साथ पूर्णरूप से मिलती हैं। (वेदों का यथार्थ स्वरूप से साभार)।

(ङ) आर्य-दस्यु-मीमांसा

आज आर्यों और दस्यु का विवाद खड़ा करके देश को विभाजित करने का षड़यन्त्र किया जा रहा है और यह विवाद भी वेद के आधार पर बताया जा रहा है और उस वेद को कोई समझता ही नहीं। अब हम उस वेद से ही यह देखने का प्रयास करेंगे कि आर्य व दस्यु का क्या अर्थ है?

(१) **ऋ. ०१।३३।०५** दस्युः = अयज्वानः = अयाजिक, यज्वाभिः स्पर्धमानाः, अव्रताः अर्थात् इस मंत्र में परोपकार आदि शुभ कर्मों को न करने वाला परोपकारी लोगों से स्पर्धा अथवा ईर्ष्या करने वाला एवं सत्य आदि व्रतों से दूर रहने वाला दस्यु कहलाता है।

(२) **ऋ. ०१।५१।०५** मायिनः = छली-कपटी, स्वधाभिः अधिषुप्तौ अजुह्वत, जो अन्न का अपने ही मुख में हवन करते हैं। पित्रुः = उपद्रव, अशान्ति फैलाने वाला अर्थात् इस मंत्र में जो छली-कपटी है, अन्न का अपने ही मुख मे हवन करता है अर्थात् किसी को भी दान नहीं देता, सब कुछ स्वार्थ भाव से ही सेवन करता है तथा जो उपद्रव व अशान्ति फैलाने वाला है, वह दस्यु कहलाता है।

(३) **ऋ.०१।५१।०१** दस्यवः = अपव्रताः, अनुव्रता = आर्याः

अर्थात् जो धर्म के विपरीत अर्थात् प्रतिकूल व्रतों को धारण करता है अर्थात् बुरे कार्य में संलग्न रहता है, वह दस्यु कहलाता है। इसके विपरीत जो धर्म के अनुकूल कार्य करता है अर्थात् अच्छे कार्य करता है, शुभ कर्मों को करता है, वह आर्य कहलाता है।

(४) **ऋ. ०१।१३०।८** आर्यः = यजमानः

अर्थात् श्रेष्ठ कार्यों को करने वाला।

(५) **ऋ. ०४।२६।०२** अहं भूमिमददाम् आर्याय = दाशुषे (दानशील के लिये)

इस मंत्र में दानशील व्यक्ति को आर्य कहा है, कंजूस को नहीं।

पाठक विचारें कि यहाँ इन प्रकरणों से आर्य व दस्यु जातिवाचक कैसे सिद्ध हो सकते हैं? भला, परोपकारी, दानी, सत्यवादी, चोर, डाकू, छली-कपटी, स्वार्थी, उपद्रवी भी किसी की जाति हो सकती है? परन्तु मतिभ्रष्ट परजीवी, बुद्धिजीवियों को कैसे समझाया जाये? यदि इन गुणों वालों को जाति मानते हो, तो स्वयं को मूल निवासी मानने वाले मेरे प्यारे भाइयो! क्या आप स्वयं तथा अपने पूर्वजों को दस्यु अर्थात् चोर, छली, कपटी, हिंसक, कंजूस, बताने में क्या गौरव अनुभव करोगे? और जिनको सवर्ण वा आर्य अर्थात् विदेशी कहते हो, उन्हें आप परोपकारी, दानी, सत्यवादी आदि गुणों से युक्त मानते हो? जरा अपने साथियों से तो पूछ लो कि वे इस बात को मानने के लिए तैयार भी हैं, क्या? अब आयें, वेद से इतर ग्रन्थों में आर्य व दस्यु (अनार्य) की परिभाषा देखें- **निरुक्तकार** महर्षि यास्क की दृष्टि में **''आर्य ईश्वर पुत्रः''** अर्थात् ईश्वरीय मर्यादाओं, व्यवस्थाओं की रक्षा करने वाला ही आर्य कहलाता है एवं दस्यु अर्थात् दस्यु दस्यतेः क्षयार्थात् उपदासयाति कर्माणि अर्थात् जिसके शुभकर्म क्षीण हो गये हैं, वह दस्यु कहलाता है।

कहिये (बोलो) महाशय! क्या यह भी एक जाति है? और क्या आप स्वयं को आर्य के स्थान पर दस्यु मानते हैं?

इतिहास में 'आर्य' शब्द

वाल्मिकीय रामायण-
कैकेयी के वरदान मांगने पर दशरथ कैकेयी से कहते हैं- ''हन्त अनार्ये!'' यहां कैकेयी को अनार्या कहकर धिक्कारा है। अब आप तो कहेंगे कि महिलायें तो सभी अनार्या हैं परन्तु आगे सुनो, महाराज दशरथ कहते हैं यदि मैं राम को वन भेज दूँ- ''अनार्य इति माम् ... .'' अर्थात् लोग मुझे अनार्य कहेंगे। जब कैकेयी चित्रकूट में पहुंचीं, तो श्रीराम उन्हें आर्या कहते हैं। अब बताइये दशरथ, कैकेयी आर्य थे वा अनार्य ? हम आपको धन्यवाद देते हैं कि आप गृध, वानर,

असुर, राक्षस, नाग, गन्धर्व आदि को मनुष्य मानते हैं और वास्तव में यह सत्य भी है। परन्तु दुर्भाग्य से आप इन्हें अनार्य जाति का स्वीकार करते हैं। सम्भवतया आप महर्षि वाल्मीकि को भी अनार्य मानते होंगे परन्तु वे महर्षि, सीताजी के मुख से जटायु को आर्य कहलवाते हैं और जटायु स्वयं को सनातन धर्म में स्थित क्षत्रिय स्वीकार करते हैं।

बालि की मृत्यु पर तारा बालि को 'आर्य पुत्र' व 'आर्य' कहकर सम्बोधित करती है परन्तु आपकी बुद्धि बालि को अनार्य कहती है।

सीताजी का अपहरण करके ले जाते समय राक्षसराज रावण श्रीराम को आर्य जाति का नहीं, बल्कि मनुष्य जाति का कहता है (क्योंकि आर्य और अनार्य नाम की कोई जाति थी ही नहीं)। आप वेदों को आर्यों का धर्मग्रन्थ मानते हैं, अनार्यों का नहीं। परन्तु आपके द्वारा कथित अनार्य राजा सुग्रीव का राज्याभिषेक वैदिक मंत्रों के साथ यज्ञ के द्वारा सम्पन्न होता है। आपकी दृष्टि में अनार्य हनुमान् से (हमारी दृष्टि में महान् आर्य) सीता अन्वेषण के लिए जाते समय महाराज सुग्रीव ने कहा- ''हे कपि! असुर, गन्धर्व, नाग, मनुष्य, देवता, समुद्र तथा पर्वतीय लोगों का तुम्हें ज्ञान है।'' अब विचारें कि यहां आर्य, अनार्य, दस्यु नाम की कोई जाति आयी ही नहीं। अशोक वाटिका में पतिवियुक्ता सीता स्वयं को धिक्कार करके अनार्या कहती हैं। हनुमान् जी ने रावण से कहा- 'देवता, असुर, मनुष्य, यक्ष, राक्षस, सर्प, विद्याधर, नाग, गन्धर्व, मृग, सिंह, किन्नर, पक्षी आदि में से कोई श्रीराम से लोहा नहीं ले सकता। यहां भी आर्य, अनार्य व दस्यु नाम की कोई जाति नहीं है। (जो पाठक इन जातियों में मनुष्य को भी एक अलग जाति के रूप में पढ़कर यह शंका करें कि देवता, राक्षस आदि मनुष्य नहीं हैं, उन्हें मेरी पुस्तक **''सत्यार्थ प्रकाश उभरते प्रश्न-गर्जते उत्तर''** पढ़नी चाहिए। महर्षि वाल्मीकि रावण को कुबेर का भाई तथा वेदशास्त्र का ज्ञाता कहते हैं और मन्दोदरी रावण को आर्यपुत्र कहती है। परन्तु आप रावण को अनार्य मूलनिवासी मानते हैं। इन सब बातों से सिद्ध होता है कि आप या तो नितान्त जड़ बुद्धि अथवा भारत को नष्ट करने के षड्यन्त्र के प्रणेताओं (जैसा कि हम इसी पुस्तक में पूर्व में सिद्ध कर चुके हैं) के परजीवी मात्र बनकर रह गये हैं। आपके पास अपनी बुद्धि नाम की कोई वस्तु नहीं है अथवा आप भी इस षड्यन्त्र के अंग बनकर किसी

स्वार्थवश भारत की भोली-भाली जनता को भ्रमित करने का अपराध कर रहे हैं।

(च) महर्षि मनु एवं डॉ. अम्बेडकर

आपने सर्वत्र भगवान् मनु को शूद्र व नारी विरोधी कहकर अनेक गालियां प्रदान की हैं। परन्तु आपने मनुस्मृति को विधिवत् अनुसंधान की दृष्टि से पढ़ा ही नहीं है। हम मानते हैं कि उसमें आधे से अधिक प्रक्षेप (मिलावट) बाद में हुए हैं और उन्हीं प्रक्षेपों के कारण मनुस्मृति बदनाम हुई। डॉ. अम्बेडकर जी ऋषियों के ग्रन्थों में प्रक्षेप की बात स्वीकार करते हैं। आप वर्तमान जाति व्यवस्था के लिए भगवान् मनु व उनकी वैदिक वर्ण व्यवस्था को उत्तरदायी ठहराते हैं परन्तु देखिये आपके डॉ. अम्बेडकर क्या कहते हैं- ''एक बात मैं आप लोगों को बताना चाहता हूँ कि मनु ने जाति के विधान का निर्माण नहीं किया, न वह ऐसा कर सकता था। जाति प्रथा मनु से पूर्व विद्यमान थी। वह तो उसका पोषक था।''

(उद्धृत- **महर्षि मनु बनाम डॉ. अम्बेडकर**, पृष्ठ २१४, लेखक- डॉ. सुरेन्द्र कुमार) (**अम्बेडकर वाङ्मय**, खण्ड १, पृष्ठ २६)

आप भगवान् मनु की वर्ण व्यवस्था को गाली देते हैं। परन्तु आपके डॉ. अम्बेडकर देखिये क्या कहते हैं- ''वर्ण व्यवस्था के अनुसार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र इन चारों वर्णों में शूद्र चौथा वर्ण है। यदि समाज केवल चार वर्णों में विभक्त मात्र रहता, तो चातुर्वर्ण्यव्यवस्था में कोई आपत्ति न होती।''

(**शूद्रों की खोज**, प्राक्कथन, पृ. १), (उद्धृत- **महर्षि मनु बनाम डॉ. अम्बेडकर**) (पृष्ठ २१६, लेखक - डॉ. सुरेन्द्रकुमार)।

''बौद्धपूर्व समय में चातुर्वर्ण्यव्यवस्था एक उदार व्यवस्था थी और उसमें गुंजाइश थी। चातुर्वर्ण्यव्यवस्था में जहां चार विभिन्न वर्गों के अस्तित्व को स्वीकार कर लिया गया था, वहां इन वर्गों में आपस में विवाह सम्बन्ध करने पर कोई निषेध नहीं था। किसी भी वर्ण का पुरुष विधिपूर्वक दूसरे वर्ण की स्त्री के साथ विवाह कर सकता था।''

(वही, खण्ड ७, पृष्ठ १७५), (उद्धृत - **महर्षि मनु बनाम डॉ. अम्बेडकर** पृष्ठ २१६, लेखक- डॉ. सुरेन्द्रकुमार)।

"शूद्र आर्य समुदाय के अभिन्न जन्मजात और सम्मानित सदस्य थे। यह बात यजुर्वेद में उल्लिखित एक स्तुति से पुष्ट होती है।" (वही, खण्ड ७, पृष्ठ ३२२)

"शूद्र आर्य समुदाय का सदस्य होता था और वह उसका सम्मानित अंग था।" (वही, खण्ड ७, पृष्ठ ३२२)

"मैं मानता हूँ कि स्वामी दयानन्द व कुछ अन्य लोगों ने वर्ण के वैदिक सिद्धान्त की जो व्याख्या की है, बुद्धिमत्तापूर्ण है और घृणास्पद नहीं है।" (वही, खण्ड १, पृष्ठ ११६)

"वेद में वर्ण की धारणा का सारांश यह है कि व्यक्ति वह पेशा अपनाए, जो उसकी स्वाभाविक योग्यता के लिए उपयुक्त हो। वह वैदिक वर्णव्यवस्था केवल योग्यता को मान्यता देती हैं। वर्ण के बारे में महात्मा गांधी के विचार न केवल वैदिक वर्ण को मूर्खतापूर्ण बनाते हैं, बल्कि घृणास्पद भी बनाते हैं। .... वर्ण और जाति दो अलग-२ धारणाएं हैं।" (वही, खण्ड १, पृष्ठ ११६)

(ये सभी उद्धृत- **महर्षि मनु बनाम डॉ. अम्बेडकर**, पृष्ठ २१६ व २१७ से लेखक- डॉ. सुरेन्द्र कुमार)

मैं समस्त वर्णव्यवस्था विरोधी परन्तु डॉ. अम्बेडकर जी के भक्त महानुभावों से जानना चाहूँगा कि क्या वे डॉ. साहब के इन विचारों का खण्डन करेंगे और यदि वे कहें कि डॉ. अम्बेडकर जी ने बाद में अपने विचारों को बदला भी था और न केवल बदला अपितु मनुस्मृति को जलाकर बौद्ध मत में अपने लाखों अनुयायियों के साथ दीक्षित भी हुए थे। इस विषय में हमारा कहना है कि प्रारम्भ में तो डॉ. अम्बेडकर एक शोधकर्ता विद्वान् के रूप में अपने विचार लिखते रहे परन्तु जब वे एक नेता के रूप में सामने आये, तो किसी भी अन्य राजनेता की भाँति वे सत्य को स्वीकार करने का साहस नहीं कर सके। दूसरा कारण यह है कि एक योग्य विद्वान् होते हुए भी उन्हें तत्कालीन विकृत हिन्दू

समाज की छूआछूत व्यवस्था का दंश सहना पड़ा और छूआछूत करने वाले थे, वे तथाकथित ब्राह्मण, जो भगवान् मनु के विचारों को बिल्कुल नहीं समझते थे, परन्तु स्वयं को भगवान् मनु का भक्त कहा करते थे। डॉ. अम्बेडकर स्वयं भी संस्कृत भाषा के विद्वान् न होने के कारण पाश्चात्य अंग्रेजी विद्वानों की टीकाओं पर निर्भर थे। इस कारण कुछ अपनी नादानी और कुछ प्रतिशोध के कारण वे मनु के घोर विरोधी हो गये। यह एक दुर्भाग्य की बात थी कि डॉ. अम्बेडकर जी आर्य समाज व महर्षि दयानन्द जी से भी परिचित थे।

आर्य समाज से प्रभावित होकर वे 'नमस्ते' शब्द को अभिवादन के रूप में कई वर्षों तक स्वीकार भी करते रहे। बड़ौदा नरेश, कोल्हापुर नरेश शाहूजी महाराज, जो स्वयं आर्य समाज से प्रभावित थे एवं उन्होंने ही डॉ. अम्बेडकर को पढ़ाने में विशेष सहयोग किया था। पुनरपि डॉ. अम्बेडकर आर्य समाज में दीक्षित न होकर बौद्ध मत में चले गये, यह एक कृतघ्नता भी थी और दुर्भाग्य भी। वे वेद के विरोधी बने, परन्तु बुद्ध के समर्थक। वे नहीं जानते थे और न वर्तमान बौद्ध लोग ही जानते हैं कि गोतम बुद्ध वेद एवं सच्चे ब्राह्मण के प्रशंसक भी थे, परन्तु वे वेद के योग्य विद्वान् नहीं थे। इस कारण उनके समय वेद के नाम पर पशु हिंसा आदि पापों को देखकर वे वेद व ईश्वर के प्रति मौन हो गये थे और उनके भक्तों ने बाद में वेदों का भारी विरोध करना प्रारम्भ किया था।

(छ) श्रीराम व श्रीकृष्ण आदि विषयक विचारों की समीक्षा

मेरे भोले भाइयो! आप मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम को शराबी, शूद्रहन्ता, नारी शोषक, मांसाहारी बतलाते हो परन्तु आपके कथित मूल निवासी माने जाने वाले मारीच ने कभी रावण से कहा था–

रामो विग्रहवान् धर्मः, साधुः सत्यपराक्रमः।
राजा सर्वलोकस्य ....(**वा. रामा.** अरण्य का. सर्ग ३७, श्लोक १३)

अर्थात् श्रीराम सदाचार धर्म की साक्षात् मूर्ति, सरल हृदय, सत्य पराक्रमी तथा सम्पूर्ण भूमण्डल के राजा हैं। इसके अतिरिक्त मारीच ने

श्रीराम के अन्य विशेषण भी दिये हैं– ''न च तीक्ष्णो हि भूतानां सर्वभूतहिते रतः'' श्लोक ६, अर्थात् वे किसी भी प्राणी के प्रति कठोर व्यवहार न करने वाले तथा सभी का हित करने वाले हैं। इसके साथ ही रावण को 'कामवृत्तो दुःशील पापमन्त्रितः' कहकर कामी, दुराचारी व पापियों से मन्त्रणा करने वाला कहा है। अब कहो कि आपसे भूल हो गयी अथवा मारीच अथवा महर्षि वाल्मीकि जी से?

मेरे मित्रो! हम डंके की चोट कहेंगे कि वाल्मीकि रामायण में सम्पूर्ण उत्तरकाण्ड तथा पूर्व के काण्डों में भी अनेक श्लोक धूर्तों के द्वारा बाद में मिलाये गये हैं। सीता वनवास व शम्बूक वध मध्यकालीन नारी व शूद्र से घृणा करने वाले पापियों की कल्पना है, जो महर्षि वाल्मीकि के माथे पर मढ़ी गयी है। जरा विचारें, जो श्रीराम वनवासिनी माता शबरी, जो ऋषियों द्वारा सम्मानित थी, का आतिथ्य ग्रहण करके उन्हें सम्मान प्रदान करते हैं, वे श्रीराम तपोधन शम्बूक का वध इस कारण कर देते हैं कि वह तपस्या कर रहा था, यह बात कोई भी बुद्धिमान् कैसे मान सकता है? इसी प्रकार सीता जी का वनवास कल्पित दुःखद कहानी के विषय में विज्ञजन विचार लेवें।

मेरे भोले भाइयो! आप योगेश्वर श्रीकृष्ण जी को सदाचारी पराक्रमी महापुरुष मानते हैं, इसके लिये हम आपकी पीठ थपथपाकर धन्यवाद देते हैं परन्तु आप कहते हैं कि वे आर्य नहीं थे, इसका अर्थ हुआ कि वे क्षत्रिय नहीं थे और न वेदों मानते थे, यह लालभुजक्कड़ी विचार किस मूर्ख के घर से चुराया? जरा विचारो कि राजा ययाति के वंशज यदु, जो चन्द्रवंशी क्षत्रिय थे, जिनके सम्बन्धी पाण्डव, शिशुपाल आदि सब आर्य क्षत्रिय और श्रीकृष्ण अनार्य हो गये? यह कथन आप जैसे बौद्धिक परजीवियों को ही शोभा देता है। तब वर्तमान के भाटी व जड़ेजा राजपूत, जो कृष्णवंशी हैं, को आप क्या मानेंगे? यह आप ही जानें। श्रीकृष्ण जी के चरित्र के विषय के विशेष जानकारी आगे इसी पुस्तक में पढ़ें। हाँ, इतना बतायें कि जो श्रीकृष्ण गीता में कायरता, नपुसंकता व मोह को अनार्यता का लक्षण मानकर मोहग्रस्त अर्जुन को अनार्य कहते हैं, तब क्या आप महामानव श्रीकृष्ण जी को कायर, नपुंसक व मोही कहेंगे? यदि हाँ, तो ऐसी अनार्यता आपको ही शोभनीय है। बुद्धिमानों को ऐसी अनार्यता स्वीकार नहीं। हे स्वयं को मूलनिवासी

मानने वालो! आप गोतम बुद्ध, महावीर को मूल निवासी मानते हो, परन्तु उनके पूर्वज पिता, दादा आदि को आर्य क्षत्रिय कहकर विदेशी मानते हो, यह कैसी मूर्खता है! सिक्खों को मूलनिवासी अनार्य कहते हो परन्तु उनके गुरु ग्रन्थ साहब ने वेद को ईश्वरकृत मानकर प्रशंसा की है। तब आपकी दृष्टि में अनार्य सिक्ख भाइयों के पवित्र ग्रन्थ में वेद की प्रशंसा कहां से आ गई? और इस मत के प्रवर्तक गुरु नानक देव जी स्वयं एक वेदी परिवार में जन्मे थे।

(नोट- बौद्ध, जैन, सिक्ख आदि के विषय में विशेष जानकारी आगे इसी ग्रन्थ में पढ़ने का कष्ट करें।)

(ज) कथित DNA परीक्षण के परिणाम की मीमांसा

प्रश्न- आपकी अब तक की गयी बौद्धिक कसरत सर्वथा निष्फल है, हम डॉ. अम्बेडकर, मैक्समूलर आदि किसी को नहीं मानते। हम केवल वर्तमान विज्ञान को मानते हैं, जिसके आधार पर आर्यों को विदेशी (ब्राह्मण, राजपूत व बनिया) एवं SC, ST, OBC तथा धर्मान्तरित अल्पसंख्यक को मूल निवासी मानते हैं। हमारे बामसेफ संगठन के राष्ट्रिय व अन्तर्राष्ट्रिय अध्यक्ष माननीय वामन मेश्राम का कहना है- ''मूलनिवासी यह शब्द कैसे बना? २००१ में टाइम्स ऑफ इंडिया में एक खबर छपी, अमेरिका के वाशिंगटन में उत्ताह विश्वविद्यालय है। उस विश्वविद्यालय के बॉयोटेक्नोलॉजी डिपार्टमेण्ट का विभागाध्यक्ष (Head of the department) है माईकल बामशाद। उसने बॉयोटेक्नोलॉजी डिपार्टमेण्ट के आधार पर प्रोजेक्ट बनाया और वो प्रोजेक्ट भारत की प्रजा के विश्लेषण के लिए बनाया। उसने यहां के विभिन्न क्षेत्रों के अलग वर्गों के लोगों के DNA का उपयोग करके यह विश्लेषण किया, तो उस DNA के आधार पर सिद्ध हुआ कि ब्राह्मण, क्षत्रिय व वैश्य इनका DNA विदेशी लोगों से मिलता है और अनुसूचित जाति, जन जाति एवं अन्य पिछड़ी जातियाँ (Other Back Ward Classes) और इनसे धर्मपरिवर्तित लोगों का DNA एक जैसा है अर्थात् यहाँ के मूलनिवासियों का है, जो एक आश्चर्यजनक बात DNA के आधार पर उन्होंने बताई कि ब्राह्मणों के घरों में जो महिलायें हैं, उनका DNA भी भारत के मूल निवासियों के DNA के साथ मिलता

है, जो SC, ST, OBC की महिलाओं के DNA और ब्राह्मणों के घरों में जो महिलायें हैं, उनका DNA एक जैसा है। इससे यह प्रमाणित हो गया कि ये जो ब्राह्मण हमारे देश में दिखायी देता है, यह आक्रमणकारी है और जो आक्रमणकारी होता है, वो आक्रमण करने के मकसद से आता है, वो अपने साथ महिलाओं को नहीं लाता है और इस वजह से वो महिलाओं को नहीं लाया और जो लोग यहां स्थायी हो गये, उन स्थायी होने वाले लोगों ने अपने वंशवृद्धि अथवा प्रजनन के लिए यहाँ की महिलाओं का उपयोग किया। इस वजह से ब्राह्मणों के घरों में जो महिलायें है, वो मूल निवासी महिलायें हैं। यह आश्चर्यजनक संशोधन, जो वैज्ञानिक तथ्य पर आधारित है, उसे उन्होंने प्रमाणित किया और जो दूसरी महत्वपूर्ण बात उन्होंने प्रमाणित की कि ब्राह्मणों ने जाति-व्यवस्था का निर्माण करने के लिए महिलाओं का इस्तेमाल किया और यही वजह है कि जब ब्राह्मणों ने वर्णव्यवस्था बनाई, तो अपनी माँ, बहन, बेटी को भी उसने शूद्र घोषित किया।" (**बहुजनों का बहुजन भारत**, पृष्ठ ६१ व ६२)

इसमें भी यह स्मरणीय है कि विदेशी लोगों से ब्राह्मणों का DNA सबसे अधिक मिलता है, राजपूतों का अपेक्षाकृम कम और वैश्यों का सबसे कम, ऐसा इन लोगों का मानना है।

उत्तर- यहाँ तो आप लोगों को ऐसा प्रतीत हो रहा है कि मानो आपके हाथ इस अपूर्व खोज का ब्रह्मास्त्र लग गया, जिसके कारण न तो आपको डॉ. अम्बेडकर जी की जरूरत है और न किसी देशी वा विदेशी वेदविरोधी तथाकथित विद्वान् की आवश्यकता है। अपने DNA टेस्ट के ब्रह्मास्त्र से ही आप भारत में जाति विस्फोट करके टुकड़े-२ करने में समर्थ हो जायेंगे। अब आपके एकमात्र आदर्श अथवा भगवान् अमेरिका के बायोटेक्नोलॉजिस्ट माइकल बामशाद हो गये। इसलिए हम आपके इस आदर्श व इसकी खोज पर ही चर्चा करते हैं। हम माइकल बामशाद से ही सर्वप्रथम तो यह पूछना चाहते हैं कि भारत की प्रजा के **DNA** विश्लेषण के पीछे उनका उद्देश्य क्या था? किसी भी विदेशी व्यक्ति को दूसरे देश में जाकर जातीय विष घोलने का अधिकार किसने दिया? दूसरी बात हम लोग उन लोगों से पूछना चाहते हैं कि उन्होंने क्या अपना भी **DNA** टेस्ट किया? **जिस अमेरिका देश में लगभग दस करोड़**

अमेरिकन मूल निवासियों (रेड इंडियन) का कत्ल करके गोरे लोगों ने कब्जा किया, उस देश का माइकल बामशाद हमारे देश का DNA परीक्षण करके मूल निवासी की जाँच करता है। जिस देश ने अब तक ईराक, वियतनाम व जापान आदि अनेक देशों में अपने अहंकार के बल पर लाखों निर्दोष लोगों की हत्यायें की, उस देश का बामशाद आर्यों के कल्पित आक्रमण की कल्पना को सिद्ध करने हेतु हमारा DNA परीक्षण करता है? जिस कार्लमार्क्स के अनुयायी देशों सोवियत व चीन देश में कभी महिला को राष्ट्रपति नहीं बनाया, जहां नागरिकों के कोई अधिकार नहीं है, उस मार्क्स के अनुयायी हमारे देश में समाजवाद व नारी अधिकार के वकील बनने का प्रयास करते देखे जाते हैं? जिसमें (भारत में) महिला राष्ट्रपति भी बनी और प्रधानमंत्री भी। वह सम्प्रदाय, जिसने कभी किसी महिला को पोप नहीं बनाया तो किसी ने मौलवी नहीं बनाया, बौद्धों ने दलाईलामा नहीं बनाया, वे सम्प्रदाय उन वैदिक धर्मियों को नारी अधिकार की शिक्षा देते हैं? जिस वैदिक धर्म में अपाला, घोषा, गार्गी जैसी ऋषिकाएं हुई हैं। सीता, सावित्री, भगवती उमा, लक्ष्मी जैसी देवियों की पूजा होती है (मैं मूर्तिपूजा की बात नहीं कर रहा, क्योंकि मूर्तिपूजा वेदविरुद्ध होने से हमें स्वीकार नहीं है) जिस वैदिक संस्कृति में पत्नी को अर्धांगिनी कहा गया है। उस संस्कृति एवं गौरवपूर्ण इतिहास को मानने वालों को संसार की कौन सी सभ्यता का भक्त हमें नारी अधिकार का पाठ पढ़ाने की योग्यता रखता है? कोई माई का लाल है? जो हमारे बराबर नारियों को सम्मान दिलाने का साहस करे? हाँ, यदि कोई पारिवारिक संचालन एवं धार्मिकता आदि छोड़कर स्वेच्छाचारिता और अंग प्रदर्शन को ही महिला अधिकार मानता हो, तो निश्चित ही हमारी संस्कृति ऐसा दुष्ट अधिकार नारी को ही नहीं बल्कि पुरुष को भी नहीं देती। हमारे यहां अधिकार और कर्तव्य मर्यादित हो करके साथ-२ चलते हैं। जिससे मर्यादित, सशक्त और संगठित समाज का निर्माण होता है, जो वैदिक काल में था परन्तु मध्यकालीन पापों के लिए वेदों अथवा ऋषियों को उत्तरदायी ठहराना या तो घोर नादानी है अथवा क्रूर पाप है। अब आपके DNA परीक्षण पर फिर आते हैं। अब तक जो कहा गया, वह तो केवल आपके प्रेरक और आदर्श माइकल बामशाद की भावनाओं का भंडाफोड़ करने के लिए किया है। आप और बामशाद दोनों ही भूल जाते हैं कि आपका यह रिसर्च आर्यों के गौरव को बढ़ाने वाला है, न कि उन्हें विदेशी सिद्ध

करने वाला। आपका यह ब्रह्मास्त्र आपके विचार को ही नष्ट करने वाला है। हम आपसे पूछते हैं कि आपका **DNA** आपके पिता जी से मिलता है कि नहीं? स्वभावतः आप उत्तर देंगे कि अवश्य मिलता है। तब, क्या मैं यह कह सकता हूँ कि आपके पिता आपकी सन्तान हैं? दूसरा प्रश्न मान लीजिये, आपके कुछ परिवार वाले अमेरिका में बस गये, तो उनका **DNA** आपके **DNA** से मिलेगा कि नहीं? यदि हाँ, तो क्या आपको यह कहा जाये कि आप अमेरिका से आकर बस गये हैं? यदि आप इसे स्वीकार नहीं करते, तो आपके पास स्वीकार न करने का कारण क्या है? और उसी कारण के आधार पर आप यह क्यों नहीं समझने का प्रयास करते कि कथित सवर्णों के पूर्वज विदेश से भारत में नहीं आये बल्कि भारत से सारी दुनिया में फैले हैं। वैदिक ब्राह्मण लोग (अर्थात् तपस्वी विद्वान्) विद्या और धर्म के प्रचार के लिए सारे भूमण्डल की यात्राएं करते थे, क्षत्रिय संसार की अव्यवस्थाओं के सुधार हेतु दिग्विजय यात्राओं पर जाते थे एवं वैश्य अर्थात् व्यापारी लोग अपने व्यापार के लिए यात्रा करते थे। उनमें से कुछ लोग विदेशों में ही बस गये। अनेक विदेशी उन्हीं की संन्तान हैं। तब **DNA** मिलेगा क्यों नहीं? आज भी बहुत सारे भारतीय विदेशों में जा करके व्यापार व नौकरी कर रहे हैं। अनेक श्रमिक भी बाहर जाकर बस गये हैं। उनका **DNA** भारत में रहने वाले उनके परिवार जनों से क्यों नहीं मिलेगा? इनमें किसे मूलनिवासी कहोगे, परिवार वालों को या बाहर बसने वाले लोगों को? अथवा इस सच्चाई को स्वीकार करोगे कि दोनों ही भारतीय मूल के हैं। पूर्व काल में शूद्र अर्थात् श्रमिक वर्ग विदेशों में नहीं गया, क्योंकि भारत में गरीबी नहीं थी। इस कारण वे यहाँ ही पूर्ण सुखी थे। तब इनका **DNA** कैसे मिलेगा? दूसरी बात यह भी है कि माइकल बामशाद जैसे व्यक्ति ने कथित **DNA** सर्वेक्षण दक्षिण भारत के १ या २ गाँवों में ही क्यों करवाया? उत्तर भारत में क्यों नहीं करवाया? जहाँ के कथित पिछड़े व दलित भाइयों के गोत्र (चौहान, परमार, गेहलोत, सोलंकी, देवड़ा, राठौड़ आदि) क्षत्रियों से मिलते हैं। जिनकी पौराणिक कुलदेवी व देवता भी उन्हीं-२ क्षत्रियों के कुलदेवी-देवताओं के समान हैं। **हमारा निश्चित मत है कि समान गोत्र वाले दलित भाइयों के पूर्वज राजपूत ही थे। जो इस्लामी अत्याचारों से पीड़ित और भयभीत होकर शूद्र का कर्म (श्रमिक) करने को विवश हुए।** दुर्भाग्य से वर्तमान क्षत्रिय कहलाने वाले भाई अपने अहंकार में

हमारी इस बात को स्वीकार करने को उद्यत नहीं होंगे और दलित भाई आरक्षण आदि लाभ प्राप्त करने के लोभ में ऐसा नहीं कहेंगे। यदि ये दोनों मिलने के लिए तैयार भी हों, तो आप जैसे समाजकंटक एवं राष्ट्रद्रोही अथवा जाति की राजनीति के सहारे सत्ता का स्वप्न देखने वाले राजनेता इन्हें एक होने नहीं देंगे।

(झ) आर्यों (प्राचीन भारतीयों) का परिभ्रमण व मूल निवास

प्रश्न– आप बार–२ सिद्ध कर रहे हैं कि आर्य नाम की कोई जाति कभी नहीं रही अपितु ये गुणवाचक नाम हैं, जो देव, मनुष्य, राक्षस, असुर, वानर, पक्षी, ऋक्ष, नाग, गन्धर्व आदि सभी में गुणवाची के रूप में ही प्रयुक्त हुआ है परन्तु 'आर्य' शब्द को अनेकत्र जातिसूचक के रूप में भी सुना व पढ़ा जाता है। मध्यकालीन भारत में भी यहां के निवासी अपने को हिन्दू न कहकर आर्य कहते थे।

उत्तर– आपका कथन कुछ अंशों में यथार्थ है। वस्तुतः वाल्मीकि रामायण, मनुस्मृति आदि प्राचीन ग्रन्थों में 'आर्य' शब्द गुणवाचक ही है। अयोध्या राज्य में रहने वालों को 'मनुष्य' नाम से ही जाना जाता था। लंका आदि के निवासी राक्षस, वर्तमान महाराष्ट्र आदि दक्षिण देश में रहने वाले 'वानर' एवं हिमालय आदि क्षेत्र में रहने वाले 'देव' कहाते थे। परन्तु वे सभी मनुष्य नामक प्राणी के ही वर्ग थे। आर्य नामक कोई वर्ग नहीं था। इस देश को, जिसकी सीमा हिमालय से दक्षिण समुद्री सीमा तथा पूर्व में वर्तमान अफगानिस्तान से लेकर पूर्वांचल राज्यों तक थी। इस सम्पूर्ण भूभाग के निवासी वैदिक मर्यादाओं में बंधे व श्रेष्ठ आचरण वाले विद्वान् हुआ करते थे, चाहे वे किसी वर्ग के क्यों न हों, इस कारण इस समस्त भूभाग को आर्यावर्त्त कहते थे। महाभारत काल तक ये ही वर्ग प्रचलित व सर्वविदित थे परन्तु उस समय आर्यावर्त्त देश में रहने वाले सभी नागरिकों को आर्य नाम से भी पुकारने की कुछ–२ परम्परा प्रारम्भ हो चुकी थी। ऐसा इस कारण कह रहा हूँ कि सम्भवतः महाभारत में एक बार 'आर्य' पद जातिवाचक शब्द के रूप में प्रयुक्त हुआ है। वस्तुतः यह जातिवाचक नहीं बल्कि जिस क्षेत्र के निवासी 'मनुष्य' कहाते थे उन्हें अथवा सम्पूर्ण आर्यावर्त्त के निवासियों की राष्ट्रियता 'आर्य' प्रसिद्ध होने लगी। जैसा कि आज भारतीय, रूसी, चीनी, जापानी, ब्रिटिश, जर्मन, अमरीकन आदि शब्द जाति नहीं बल्कि

राष्ट्रियता के सूचक हैं। वैसे ही आर्य भी प्रचलित हो गया। इस प्रकार **'आर्य' पद पूर्व में श्रेष्ठ, सदाचारी विद्वानों के लिए आदर सूचक था, वही कालान्तर में इस देश की राष्ट्रियता का सूचक भी प्रसिद्ध हो गया।** इसी श्रेष्ठता वा राष्ट्रियता दोनों ही सूचकों को दृष्टिगत रखकर आर्यों के भूमण्डल में भ्रमण की बात कही, सुनी वा पढ़ी जाती है। वैदिक धर्म से भ्रष्ट होकर ही आर्यों के अनेक बहिष्कृत रूप कांबोज, म्लेच्छ यवन, शक, द्रविड़, किरात आदि अनेक वर्ग उत्पन्न हो गये।

'वैदिक सम्पत्ति' के यशस्वी लेखक श्री पण्डित रघुनन्दन जी शर्मा पृष्ठ ३७३-७४ पर लिखते हैं-

''भारत में पश्चिम की ओर से अफरीदी, काबुली और बलूचियों के देश आते हैं। इन देशों में इस्लाम प्रचार के पूर्व आर्य (आर्यावर्त्त देश के नागरिक) ही निवास करते थे। यही पर गान्धार था, जहाँ की गान्धारी राजा धृतराष्ट्र की रानी थी। इसी के पास राजा गजसिंह का बसाया हुआ ग़ज़नी नगर अब तक विद्यमान है। महाभारत में लिखा है कि पाण्डवों ने सप्तगणों को जीता था। इन्हीं गणों ने आगे बढ़कर 'अपगण' राज्य स्थापित किया। जो आज अफग़ान कहा जाता है। काबुल की पठान जाति चन्द्रवंशी क्षत्रियों की सन्तान हैं। वे मैक्समूलर को उद्धृत करते हुए लिखते हैं-

It can now be proved even by geographical evidence that the Zoroastrian had been settled in India before they immigeated into Persia. (Chips from a Geoman, Workshop, P. 235) The Zoroastrians were a colony from Northern India. (Science of language)

अर्थात् यह बात भौगोलिक प्रमाणों से सिद्ध है कि पारसी लोग फारस में बसने से पूर्व भारत में बसे हुए थे। उत्तर भारत से जाकर ही पारसियों ने ईरान में उपनिवेश बसाया था।

प्रो. हीरेन को उद्धृत करते हुए लिखा है- The name of china is of Hindu origin and came to us from India. अर्थात् चीन शब्द हिन्दुओं का है।''

इस विषय में जो विशेष पढ़ना चाहें, वे **'वैदिक सम्पत्ति'** स्वयं पढ़ सकते हैं। इसी प्रकार सम्पूर्ण भूमण्डल में आर्य लोग आर्यावर्त्त अर्थात् भारत देश से ही जाकर बसे। महर्षि दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है कि सृष्टि की उत्पत्ति सर्वप्रथम तिब्बत व हिमालय में हुई। वहाँ से मनुष्य अथवा आर्य श्रेष्ठ लोग इस भू-भाग में आकर बस गये। उससे पहले इस देश व भू-भाग पर कोई भी मनुष्य नहीं रहता था अर्थात् आर्यों ने ही इस आर्यावर्त्त देश को बसाया है। अब हम आर्यों अर्थात् वैदिक धर्मियों को बाहर से आने के आपके विचार का दूसरे ढंग से खण्डन करते हैं।

१. यदि आर्य बाहर से आकर यहां बसे, तो उस समय व उनके आने से पूर्व इस देश का क्या नाम था? क्या आप बता सकते हैं? प्राचीन संस्कृत साहित्य में इस देश का प्राचीनतम नाम ब्रह्मावर्त्त एवं आर्यावर्त्त ही मिलता है। ये दोनों ही नाम आर्य वैदिकों से ही सम्बद्ध हैं। उसके बाद चन्द्रवंशी क्षत्रिय राजा भरत के नाम से भारत प्रसिद्ध हुआ। तत्पश्चात् हिन्दुस्तान नाम हुआ। तब आपके कथित असुरों व राक्षसों का देश भारत कब रहा था?

२. यह बात सर्वविदित है कि कोई भी वर्ग जब बहुत बड़ी विजय को प्राप्त करता है तो अपनी विजयगाथा का इतिहास अवश्य लिखता है। तब आपके अनुसार जब आक्रमणकारी आर्यों ने इस देश पर अधिकार किया, तो अपनी विजयगाथा का कोई इतिहास क्यों नहीं लिखा? यदि आप कहेंगे कि ऋग्वेदादि विजयगाथा के ही ग्रन्थ हैं, तो इसे हम पहले ही मिथ्या सिद्ध कर चुके हैं, जिसको चुनौती संसार में कोई भी नहीं दे सकता है। भाई-२ के युद्ध पर महाभारत जैसा ग्रन्थ लिखा गया। राम-रावण के युद्ध पर रामायण लिखा गया परन्तु किसी देश पर सम्पूर्ण अधिकार करने के पश्चात् भी कोई ग्रन्थ न लिखा जाये, यह कैसे सम्भव है?

३. आर्य अर्थात् इस देश के रहने वालों की किसी भी साम्राज्यवादी नीति का कोई उदाहरण नहीं मिलता। श्रीराम ने लंका और किष्किन्धा दोनों को जीत करके भी स्वयं राज्य नहीं लिया। श्रीकृष्ण अनेक दुष्ट राजाओं को परास्त करके भी किसी की एक वर्ग इंच भूमि के स्वामी नहीं बने। ऐसे वैदिक आर्य भला कैसे आक्रमणकारी हो सकते हैं?

४. इस्लामी आक्रान्ताओं ने भारत पर विजय प्राप्त करके भारत में बसकर भी अपने तीर्थ मक्का मदीना को आज तक भूलना तो दूर, उनकी श्रद्धा में लेशमात्र भी कमी नहीं आयी। वे आज भी मक्का मदीना में प्राण त्यागकर जन्नत की कामना करते हैं। भारत के ईसाई येरूशलम में जाने की कामना करते हैं। तब आर्यों का विरोधी कोई माई का लाल बताये कि आर्यों के कितने तीर्थ स्थल विदेशों में हैं, जहाँ मरने के लिए वे कामना करते हों। क्या ये अपने तीर्थ भी नष्ट करके आये थे?

आप कहते हैं कि वे अपनी स्त्रियों को विदेशों में ही छोड़ आये, तब क्या सदा के लिये उन्होंने पत्नि बच्चों को त्याग दिया? क्या वे यहां बस कर फिर उन्हें यहां नहीं ला सकते थे?

५. आप दक्षिण भारतीय तथाकथित द्रविड़ों को कथित अनार्यों के वंशज मानते हो, तो क्या आप बतायेंगे कि दक्षिण की भाषा में संस्कृत के इतने शब्द कैसे चले गये? अब हम आपसे पूछते हैं कि माइकल बामशाद तथा मैक्समूलर आदि विदेशी वेद भाष्यकार, जिनको आप अपना आदर्श मानते हैं। उनका DNA आर्यों से मिलता हैं कि नहीं? जब आर्य विदेशों से आये हैं, तो ये भी तो आर्य ही होंगे। तब आप इनसे मित्रता और भारत में अपने को आर्य कहने वालों से शत्रुता क्यों करते हैं? आप विदेशियों को आर्य कहते हैं, तो उनकी Science और Technology का उपयोग क्यों करते है? और भारतीय आर्य ज्ञान, विज्ञान का विरोध क्यों करते है? जिन असुर, राक्षस आदि को अपना पूर्वज मानते हैं, उनका धर्म व ज्ञान-विज्ञान का कोई ग्रन्थ आपके पास है, क्या? यदि नहीं, तो क्यों ज्ञान-विज्ञान के सारे केन्द्रों को नष्ट करने का आह्वान करते हैं?

अन्त में आपका आह्वान

मेरे भटकते हुए प्यारे भाइयो! आपके सामने दो मार्ग स्पष्ट है-

१. एक मार्ग यह, जो आपको सूझ रहा है। जिसमें आप अपने को अर्थात् SC, ST व OBC सबको असुरों व राक्षसों की सन्तान मानते हैं। अपने को वेद व ऋषि मुनि विरोधी कहते हैं। आप SC, ST व OBC के भाइयों को वैदिक पर्व (होली, दीपावली, दशहरा, महाशिवरात्रि, रक्षाबन्धन, रामनवमी, कृष्ण जन्माष्टमी) तथा वैदिक आर्य हिन्दू विधि से विवाहादि संस्कार त्यागने का संदेश देते हो तथा परोक्ष रूप से आप इन्हें गोमांस खाने का भी परामर्श देते हो। आपकी दृष्टि में गोमांस खाना कथित आदिवासियों (यह शब्द एक षड्यन्त्र के तहत प्रचलित किया गया है। वस्तुतः इन्हें वनवासी व पर्वतीय कहना चाहिए) की पहचान है। जरा यह भी बताएं कि आज जिन्हें आदिवासी कहा जाता है, यदि वह उनके भारत का आदिवासी होने का प्रमाण है, तब SC, ST व OBC आदि के लिए मूलनिवासी, जो आदिवासी का ही समानार्थक है, शब्द आप कहाँ से ले आये? आज आप अपने विदेशी प्रेरकों की प्रेरणा पर उन्हीं की कुटिल बुद्धि का आश्रय लेकर अपने ही भाई कथित सवर्णों के साथ खूनी संघर्ष का आह्वान करते हैं। हमारा अनुमान है कि आज के तथाकथित पिछड़े वर्ग में से अनेक बहादुर राष्ट्रभक्त व सनातन धर्म वा वेद के भक्त आपके षड्यन्त्र में नहीं फंसेंगे और कुछ फंसें अथवा नहीं फसें किन्तु इस देश के नागरिकों में वर्ग संघर्ष होकर जो भी मरेगा, वह भारत का मूलनिवासी ही होगा। इसे चाहे आप वा भारत की दुष्ट राजनीति, दलित, पिछड़ा वा सवर्ण कुछ भी क्यों न कहें? दोनों के मिटने अथवा दुर्बल होने के पश्चात् विदेशी ईसाई, इस्लाम अथवा कम्यूनिस्टों का इस देश पर साम्राज्य होगा। तब आपकी उत्तेजक भाषणबाजी, अहंकार और कथित सवर्णों का पागलपन भरा अभिमान दोनों ही नष्ट हो जायेंगे। साथ ही जातियों के नाम पर बाँटने वाले देशद्रोही राजनेता भी बच नहीं पायेंगे। यह मार्ग हिंसा, प्रतिशोध, घृणा, ईर्ष्या, भय और सर्वविध पराधीनता का मार्ग होगा।

२. दूसरा मार्ग विशुद्ध सत्य पर आधारित है, जिसमें धर्मात्मा लोग आर्य और पापी लोग अनार्य कहलाते हैं। जो जन्म से नहीं, कर्म से होते हैं, जहां आर्य का पुत्र अनार्य भी हो सकता है और अनार्य का पुत्र आर्य भी हो सकता है। जहाँ मांसाहारी, शराबी, चोर, डाकू, क्रूर लोग अनार्य कहलायेंगे और इसके विपरीत सज्जन लोग आर्य। जहाँ आर्य लोगों में कर्म के अनुसार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र चार वर्ग होंगे, जो गुणों और योग्यता के अनुसार परिवर्तनशील होंगे। विद्या में श्रेष्ठ ब्राह्मण कहलायेगा, विद्या के साथ बल, पराक्रम में श्रेष्ठ सदाचारी क्षत्रिय कहलायेगा, विद्या के साथ पशुपालन, कृषि, व्यापार में कुशल वैश्य कहलायेगा और सदाचारी, सेवाभावी परन्तु अविद्वान् श्रमिक शूद्र कहलायेगा। जिसमें पूर्ण समरसता, प्रेम और भाईचारा होगा, परस्पर वैवाहिक सम्बन्ध भी होंगे। किसी प्रकार का कोई भेदभाव नहीं होगा। **ब्राह्मण का बालक शूद्र और शूद्र का बालक ब्राह्मण भी हो सकेगा। जहाँ भगवान् मनु के विधानानुसार शूद्र अर्थात् श्रमिक वर्ग को समान अपराध होने पर भी सबसे न्यून दण्ड का विधान होगा, वैश्य अर्थात् व्यापारी, किसान व पशुपालक को शूद्र से दो गुना, क्षत्रिय अर्थात् पुलिस वा प्रशासनिक अधिकारी को शूद्र (श्रमिक) से तीन गुना, ब्राह्मण अर्थात् धर्मगुरु वा शिक्षक को शूद्र से चार से आठ गुना, मंत्री को शूद्र से एक सौ गुना तथा राजा अर्थात् राष्ट्रपति वा प्रधानमंत्री को श्रमिक से सवा सौ गुणा दण्ड का विधान होगा।** देश की गरीबी, अशिक्षा, बेरोजगारी व छूआछूत मिटाने का एक अनुपम उपाय होगा। (इसे जानने हेतु इसी पुस्तक के परिशिष्ट में पढ़ें, लेख- **आरक्षण, जातिवाद व निर्धनता का स्थायी समाधान**) भगवान् मनु के अनुसार प्राचीन काल से ही योग्यता व गुणों के आधार पर वर्ण परिवर्तन भी होते आये हैं, तब वर्तमान कथित ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यादि के कितने पूर्वज शूद्र रहे होंगे और वर्तमान कथित अनेक दलितों के पूर्वज कितनी बार ब्राह्मणादि वर्णों के रहे होंगे, यह कौन जानता है? परन्तु आज की कथित समाजवादी व्यवस्था अथवा कथित दलित नेताओं की सोच जन्मना जाति को ही मान्यता देकर दलितों को दलितपन से आगे बढ़ने ही नहीं देना चाहती। **दलित नेता जानते हैं कि यदि योग्यता के आधार पर आज वर्ण परिवर्तन होने लग जाये, तो उन्हें न तो दलित होने का सरकारी लाभ मिलेगा और न वे बेचारे गरीब दलितों को मूर्ख बनाकर अपनी राजनीति कर पायेंगे। इसी कारण वे मनु का विरोध करते हैं।** जहाँ सबको ज्ञान

विज्ञान व धर्म की शिक्षा मिलेगी। भारत के ईसाई व मुसलमानों को भी विदेशी कहकर ठुकराया नहीं जायेगा। परन्तु उनको मानवता व राष्ट्रभक्ति का पाठ अवश्य पढ़ाया जायेगा। उनको यह भी बताया जायेगा कि उनके पूर्वज भारतीय आर्य ही हैं। इतना ही नहीं मनुष्यमात्र को यह भी बताया जायेगा कि न केवल भारतीय, न केवल पृथिवीवासी अपितु ब्रह्माण्ड के सभी प्राणी एक ही परमपिता परमात्मा की सन्तान होने से भाई-२ हैं। इस कारण सबको परिवार की भाँति प्रेम से रहना चाहिए। आप जो ऋषि-मुनियों आर्यों की निन्दा कर रहे हैं, उन्हें यह भी बताया जायेगा कि ब्राह्मण से लेकर शूद्र तक चारों वर्ण आर्यों के ही तो भाग हैं, तब शूद्र अनार्य व असवर्ण कैसे हो गया?

अब हम पूछना चाहेंगे कि हे बुद्धि वाले मानवो! आप किधर जायेंगे? विनाश के मार्ग पर अथवा राष्ट्र व विश्व के कल्याण के मार्ग पर? प्रेम और भाईचारे के मार्ग पर अथवा हिंसा व प्रतिशोध के मार्ग पर? संगठन के मार्ग पर अथवा विघटन के मार्ग पर? निर्णय आप के हाथ में है कि आप कौन से मार्ग का चयन करते हैं?

(2) पौराणिक कथित सनातनधर्मियों से करुण निवेदन

पूर्वपीठिका के अन्त में दी गयी द्वितीय विचारधारा को मैं कोई दोष नहीं दे सकता हूँ। हाँ, उनकी भावना अवश्य कुछ अशुद्ध, प्रतिक्रियावादी एवं पूर्वाग्रह से ग्रस्त मान सकता हूँ। मेरे कथित सनातनी पाठको! जिन कथित पुराणों, उपपुराणों को आप अपना धर्मग्रन्थ मानकर शताब्दियों से अपने गले लगाये हैं, वे पुराण, जिनकी हम चर्चा पूर्व में यत्र-तत्र करते आये हैं तथा मनुस्मृति, वाल्मीकीय रामायण, महाभारत आदि आर्ष ग्रन्थों में जो-जो भ्रष्ट व घृणित प्रक्षेप किये हैं, वे ही घृणित प्रक्षेप इस विचारधारा के लिये पूर्णतः उत्तरदायी हैं। इसको स्पष्ट करने के लिये सर्वप्रथम कथित पुराणों, महापुराणों के कुछ उद्धरण देखें-

(१) पौराणिक मतानुसार सनातन धर्म का लक्षणः-

श्वेतकेतोः किल पुरा समक्षं मातरं पितुः। जग्राह ब्राह्मणः पाणौ गच्छाव इति चाब्रवीत्।।१२।।
ऋषिपुत्रस्ततः कोपं चकारामर्षचोदितः। मातरं तां तथा दृष्ट्वा नीयमानां बलादिव।।१३।।
क्रुद्धं तं तु पिता दृष्ट्वा श्वेतकेतुमवाच ह। मा तात कोपं कार्षीस्त्वमेष धर्मः सनातनः।।१४।। (महा. आदि. १२२।१२-१४)

(हमारे मत में धूर्तों द्वारा प्रक्षिप्त) अर्थ- एक समय श्वेतकेतु बैठा था। उसने देखा कि उसके पिता के सामने ही किसी ब्राह्मण ने उसकी माता का हाथ पकड़कर अपने साथ चलने को कहा। ब्राह्मण के द्वारा माता को इस प्रकार बलपूर्वक ले-जाते हुए देखकर ऋषिपुत्र श्वेतकेतु अमर्ष में भरकर अत्यन्त क्रुद्ध हुआ। तब अपने पुत्र को कुपित देखकर उसका पिता उद्दालक उससे बोला- हे पुत्र! क्रोध मत कर, यह तो सनातन धर्म है। यह उद्धरण **'पौराणिक पोप पर वैदिक तोप'** पृष्ठ सं. ४ से लिया गया है।

तस्य भावं समालोक्य त्रयो देवाः सनातनाः। अनसूयां तस्य पत्नीं समागम्य वचोऽब्रुवन्।।७०।।

लिंगहस्तः स्वयं रुद्रो विष्णुस्तद्रसवर्धनः। ब्रह्मा कामब्रह्मलोपः स्थितस्तस्या वशं गतः। रतिं देहि मदाघूर्णे नो चेत्प्राणांस्त्यजाम्यहम्।।७१।।

(भविष्य. प्रतिसर्गपर्व, खण्ड ४ अ. १७। ७०-७१)

उस अत्रिमुनि के भाव को देखकर सनातनधर्म के तीनों देवता उनकी स्त्री अनसूया के पास आकर कहने लगे। लिंग को हाथ में लेकर महादेवजी, उसके रस को बढ़ाते हुए विष्णु और कामवश होकर वेद का लोप किये हुए ब्रह्माजी-तीनों उसके वश में होकर बैठे और बोले- हे काम से मस्त आँखोंवाली! यौवन का दान दे, नहीं तो हम तीनों यहीं प्राण त्याग देंगे।

मेरे कथित सनातनी भाइयो! यह रहा आपका सनातन धर्म।

(२) आर्य वैदिक मतानुसार सनातन धर्म का लक्षण-

(क) "जिसका स्वरूप ईश्वर की आज्ञा का यथावत् पालन और पक्षपात-रहित न्याय सर्वहित करना है। जो कि प्रत्यक्षादि प्रमाणों से सुपरीक्षित और वेदोक्त होने से सब मनुष्यों के लिए यही एक धर्म मानने योग्य है, उसको धर्म कहते हैं।"

(**आर्य्योद्देश्यरत्नमाला**- महर्षि दयानन्द सरस्वती)

(ख) **आर्जवं धर्ममित्याहुरधर्मो जिह्म उच्यते।**

{**महाभारत**, अनु.पर्व। दानधर्म पर्व, अध्याय १४२, श्लोक ३० (दाक्षिणात्य पाठ)}

अर्थात् भगवान् शिव भगवती उमा से कहते हैं- ''सरलता ही धर्म है और कुटिलता ही अधर्म है।''

(ग) **यतोऽभ्युदय निःश्रेयस सिद्धिः स धर्मः। (वैशेषिक दर्शन** १.१)

अर्थात् जिससे लोक व परलोक दोनों की उन्नतियों की सिद्धि हो, वह धर्म है।

(घ) **महाभारत** में भीष्म पितामह के मत में धर्म-

यः स्यात्प्रभवसंयुक्तः स धर्म इति निश्चयः।
यः स्याद्धारणसंयुक्तः स धर्म इति निश्चयः।
यः स्यादहिंसासम्पृक्तः स धर्म इति निश्चयः।
(शान्तिपर्वणि राजधर्मानुशासनपर्व, अ. १०६.१०-१२)

अर्थात् जिससे सबकी उन्नति, पालन-पोषण हो तथा जो अहिंसा अर्थात् पूर्ण निर्वैरता, सबसे प्रीति परन्तु न्यायानुसार दण्ड होवे, निश्चित ही, वही धर्म है।

(ङ) **मनुस्मृति** में धर्म के लक्षण-

धृतिः क्षमा दमोस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्यासत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्।। (६.९२)

अर्थात् धैर्य, क्षमा, दम अर्थात् मन का नियन्त्रण, अस्तेय अर्थात् चोरी वा बेईमानी का त्याग, शौच अर्थात् बाहरी व आन्तरिक पवित्रता, इन्द्रियनिग्रह अर्थात् इन्द्रिय संयम, धी अर्थात् बुद्धि को बढ़ाने का प्रयास करना, विद्या अर्थात् पृथिवी से लेकर परमेश्वर तक के यथार्थ ज्ञान से अपना व दूसरों का उपकार करना तथा आत्मानुकूल वर्तना, सत्य वचन व कर्म का ही करना तथा क्रोध न करना आदि।

(३) पौराणिक देवों का चरित्र-

(क) भगवान् शिव का पौराणिक स्वरूप-

दारुवन कथा- दारु नामक वन में एक बार शिवजी पूर्णतः निर्वस्त्र हो अपने हाथ में अपना लिंग (मूत्रेन्द्रिय) धारण करके ऋषियों की पत्नियों के पास चले गये। इस अवस्था में उन्हें देखकर ऋषि पत्नियां अत्यन्त भयभीत, व्याकुल व हैरान हो गयीं। शिवजी के लिंग का आलिंगन करने लगीं, कई उसे हाथ में धारण करने लगीं और मग्न हो गयीं। इतने में ही ऋषि लोग आ गये और उस नंगे शिवजी को शाप दिया-

त्वया विरुद्धं क्रियते वेदमार्गविलोपि यत्।

ततस्त्वदीयं तल्लिंगं पततां पृथिवीतले।।१७।।
इत्युक्ते तु तदा तैश्च लिंगं च पतितं क्षणात्।
अवधूतस्य तस्याशु शिवस्याद्भुतरूपिणः।।१८।।
तल्लिंगं चाग्निवत्सर्वं यद्ददाह पुरः स्थितम्।
यत्र यत्र च तद्याति तत्र तत्र दहेत्पुनः।।१९।।
पाताले च गतं तच्च स्वर्गे चापि तथैव च।
भूमौ सर्वत्र तद्यातं न कुत्रापि स्थिरं हि तत्।।२०।।
(शिवपुराण, कोटिरुद्र संहिता ४ अ. १२)

अर्थ- तुम जो यह वेद के मार्ग को लोप करनेवाला विरुद्ध काम करते हो, इसलिए तुम्हारा यह लिंग पृथिवी पर गिर पड़े।। उनके इस प्रकार कहने पर उस अद्भुत रूपधारी, अवधूत शिव का लिंग उसी समय गिर पड़ा।। उस लिंग ने सब-कुछ जो आगे आया, अग्नि की भाँति जला दिया। जहाँ-२ वह जाता था, वहाँ-२ सब कुछ जला देता था।। वह पाताल में भी गया, वह स्वर्ग में भी गया, वह भूमि में सब जगह गया, किन्तु वह कहीं भी स्थिर नहीं हुआ।।

यह कथा अति अश्लील होने से सम्पूर्ण रूप से यहाँ नहीं दिया गया। इसके पश्चात् शिवपुराणकार ने कहा है कि सबको जलाते हुये शिव लिंग को शान्त करने के लिए सभी ऋषि मुनि व देव लोग ब्रह्माजी के पास गये और फिर उनसे तथा शिवजी से अनुनय करके अन्त में पार्वती ने उसे अपनी योनि में धारण किया, तब वह शान्त हुआ। आज शिव मन्दिरों में जिस शिवलिंग की पूजा की जाती है, यह वही शिव-पार्वती के जननांगों का ही वही रूप है।

(ख) भगवान् ब्रह्माजी द्वारा स्वपुत्रीगमन-

(२) **श्रीमद्भागवत** (स्कंध ३ अ. १२ श्लोक २८-२९-३०) में बताया है।

वाचं दुहितरं तन्वीं स्वयम्भूर्हरतीं मनः।
अकामां चकमे क्षत्तः सकाम इति नः श्रुतम्।।२८।।

तमधर्मे कृतमतिं विलोक्य पितरं सुताः।
मरीचिमुख्याः मुनयो विश्रम्भात्प्रत्यबोधयन्।।२९।।
नैतत्पूर्वैः कृतं त्वद्ये न करिष्यन्ति चापरे।
यत्त्वं दुहितरं गच्छेरनिगृह्यांगजं प्रभुः।।३०।।

ब्रह्माजी ने अपनी पुत्री सरस्वती के साथ रमण की इच्छा काम के वश में होकर की। पुत्र मरीचि आदि ऋषियों ने अपने पिता की बुद्धि देखकर उनको समझाया, ऐसा किसी ने नहीं किया और न कोई करेगा कि जो तुम अपने अंग से उत्पन्न हुई पुत्री को ग्रहण करते हो, यह ग्रहण करने योग्य नहीं हैं।

वस्तुतः ऐतरेय ब्राह्मण के एक आख्यान, जिसमें सृष्टिविज्ञान का एक गंभीर प्रसंग है, को न समझने से किसी कामी व निर्लज्ज संस्कृतज्ञ ने इस कथित पुराण में यह कथा इस प्रकार लिख दी है। वहाँ सायण आचार्य ने अपने ऐतरेय ब्राह्मण भाष्य में ऐसा ही घृणित वर्णन किया है। विद्वान् पाठक इस मेरा भाष्य 'वेदविज्ञान-आलोकः' में यह देख सकते हैं।

(ग) भगवान् विष्णु का जलन्धर दैत्य की पत्नि वृन्दा से छलपूर्वक व्यभिचार-

पद्मपुराण के अनुसार विष्णु ने जलन्धर दैत्य का रूप धारण करके वृन्दा से दीर्घकाल तक व्यभिचार किया। एक दिन वृन्दा को ज्ञात हुआ कि वह तो विष्णु है, न कि मेरा पति तो उसने को शाप दिया।

अहं मोहं यथा नीता त्वया माया तपस्विना।
तथा तव वधूं माया तपस्वी कोऽपि नेष्यति।।५५।।
(उत्तर ख. अ. १६ पृ.१२७३-१२७४)

और इसी शाप के कारण विष्णु ने राम के रूप में अवतार लिया और उसकी पत्नि सीता को तपस्वी के वेश में रावण हर ले गया। इसके पश्चात् वृन्दा ने शोक-घृणा वश शरीर त्याग दिया-

शोषयामास देहं स्वं विष्णु संगेन दूषितम्।
तपश्चचार साऽत्युग्रं निराहारा सखी समम्।।६३।।

(उत्तर ख. अ. १६ पृ.१२७३-१२७४)

(**आर्य सिद्धान्त सागर**- आ. वैद्यनाथ शास्त्री, पृ. २२४ से उद्धृत)

(घ) तीनों प्रमुख देवों का संयुक्त चरित्र चित्रण-

भविष्यपुराण (प्रतिसर्गपर्व, खण्ड ४, अ. १७) में लिखा है कि अत्रि ऋषि की पत्नि अनुसूयाजी तप कर रहीं थी। उनके पास शिव, ब्रह्मा और विष्णु तीनों देव पहुंचे और-

मोहितास्तत्र ते देवा गृहित्वा तां बलात्तदा।
मैथुनाय समुद्योगं चक्रुर्मायाविमोहिताः।।७३।।

अर्थ- उन तीनों देवों ने काम मोहित होकर उस तपस्विनी देवी को बल से पकड़ कर मैथुन का उद्योग किया।

इस प्रकार पौराणिक (वर्तमान में सनातन धर्मी कहाने वाले) मतानुसार ये तीनों देवता घोर दुराचारी, माता, बहिन, पुत्री को भी अपनी हवस का शिकार बनाने वाले निर्लज्ज हैं। शोक की बात यह है कि इस प्रकार के दुराचारी चरित्र को चित्रित करते हुये भी इन्हें परमात्मा मानकर पूजते हैं, इससे बड़ी दुर्भाग्य की बात क्या होगी?

वाल्मीकीय रामायण में देवराज इन्द्र द्वारा महर्षि गौतम की पत्नी अहल्या के साथ दुराचार। पुनः गौतम द्वारा इन्द्र को शाप देने की घृणित कथा है। इसे पाठक बालकाण्ड में देख सकते हैं। इस घटना को हम किसी दुष्ट द्वारा प्रक्षिप्त (मिलावट) मानते हैं। ऐसा हम सिद्ध भी कर सकते हैं। वास्तव में यह कथा किसी संस्कृतज्ञ परन्तु दुराचारी व्यक्ति ने जानबूझकर अथवा शतपथ ब्राह्मण में 'इन्द्र' का एक विशेषण

'अहल्याजार' पढ़कर सारी कथा कल्पना से गढ़ी थी। शत.ब्रा. में उपलब्ध केवल दो पदों के आधार पर ऐसी कथा कोई कामी दुष्ट पुरुष ने, जो अज्ञानी है अथवा भारतीय ऋषियों, देवियों व देवों को बदनाम करने के उद्देश्य से जानबूझकर गढ़ ली है। वस्तुतः इन्द्र का अर्थ सूर्य्य तथा अहल्या का अर्थ रात्रि है, क्योंकि यह अहन् अर्थात् दिन को अपने में लीन करने वाली होती है। इस अहल्यारूपी रात्रि को जीर्ण करने वाला होने से सूर्य्य ही इन्द्र है। शत. ब्रा. के इस कथन को न समझने के कारण शास्त्रों से अनभिज्ञ केवल संस्कृत भाषा का विद्वान् क्या-२ अनर्थ कर सकता है? इसे बताने के लिए यह उदाहरण पर्याप्त है।

(४) इन देवों का आर्ष वैदिक यथार्थ स्वरूप-

सृष्टि स्रष्टा होने से 'ब्रह्मा', सबका कल्याणकर्त्ता होने से 'शिव' तथा सर्वव्यापक होने से 'विष्णु' ये तीनों एक ही निराकार परब्रह्म के ही गौण नाम हैं। वेदों में इन्हीं अर्थों में इन पदों का वर्णन है। दूसरी ओर इतिहास में इन नामों के महापुरुष राजा भी हुये हैं, जो मनुष्य के ही एक वर्ग 'देव' के अन्तर्गत थे। इस विषय में आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्दजी का कथन है-

''विष्णु वैकुण्ठ के रहने वाले थे और वहीं उनकी राजधानी का नगर था। महादेव कैलाश के रहने वाले थे। कुबेर अलकापुरी के रहने वाले थे। यह सब इतिहास केदारखण्ड में लिखा हुआ है। हम स्वयं भी इन सब ओर घूमे हुए हैं .... काश्मीर से नेपाल तक हिमालय की जो ऊँची-२ चोटियां हैं, वहाँ देवता अर्थात् विद्वान् पुरुष रहते थे। गत समय में इस समय की तरह प्रायः बर्फ नहीं पड़ती थी..... देहली में इन्द्रप्रस्थ नामी स्थान था। वहाँ इन्द्र का राज्य था। पुष्कर और ब्रह्मावर्त्त में ब्रह्मा ने राज्य किया। काशी, उज्जैन और हरिद्वार आदि में महादेव जी का राज्य था।'' (**उपदेश मंजरी**-दशम उपदेश)

ये सब देव लोग बड़े वीर, योद्धा, वैज्ञानिक, इंजीनियर, परमयोगी एवं सर्वहितैषी थे। महादेव जी वीतराग परमयोगी होते हुये भी शासन चलाते थे। उनका पाशुपत अस्त्र अत्यन्त शक्तिशाली था, जिसका

निवारण अन्य किसी भी अस्त्र के द्वारा सम्भव नहीं था। ये अपनी धर्मपत्नि भगवती उमा के साथ प्रायः योग साधना में ही रत रहते थे। महादेव जी आदि के व्यक्तित्व के विषय में विस्तार से जानने हेतु महाभारत ग्रन्थ का अध्ययन करना चाहिए। **ये सभी देव पुरुष वस्तुतः इतने महान् थे, जिसकी कल्पना भी वर्तमान् जगत् का श्रेष्ठ से श्रेष्ठ कहाने वाला व्यक्ति भी नहीं कर सकता है। दुर्भाग्य से इन अप्रतिम भगवन्तों को न तो इनकी मूर्तियां पूजने वाले समझे और न आर्य समाजी। मूर्तिपूजकों ने तो पुराणादि के माध्यम से इन्हें कलंकित ही किया है,** हा! शोक! महर्षि ब्रह्मा चतुर्वेदविद् महान् वैज्ञानिक थे, जिनका ब्रह्मास्त्र संसार प्रसिद्ध था। ये महान् आध्यात्मिक पुरुष थे। विद्या की परम्परा प्रायः इन्हीं से प्रारम्भ हुई है। भगवान् विष्णु अति पराक्रमी वैज्ञानिक थे। इनका वैष्णास्त्र प्रसिद्ध था।

इनके दिव्यास्त्रों का वर्णन रामायण एवं महाभारत में मिलता है। ऐसे पूज्य पुरुषों की दुर्गति कथित पुराणों ने की है, तब वर्तमान की नास्तिक हुई देवों का विरोध करने वाली नादान पीढ़ी को क्या कहें ?

(५) ईर्ष्या, द्वेष व क्रोध से ग्रस्त पौराणिक (कथित सनातनी) देवता–

(क) ब्रह्मा व विष्णु का घोर युद्ध–

शिवपुराण विद्येश्वर संहिता, अध्याय ६ (चौखम्भा प्रकाशन– डॉ. ब्रह्मानन्द त्रिपाठी टीका) में इन दोनों के घोर युद्ध का वर्णन है। हम केवल एक ही श्लोक प्रमाणरूप प्रस्तुत कर रहे हैं–

इत्थं बभूव समरं ब्रह्मविष्ण्वोः परस्परम्।
ततो देवगणाः सर्वे विषण्णा भृशमाकुलाः।
ऊचुः परस्परं तात राजक्षोभे यथा द्विजाः।।१६।।

अर्थात् इस प्रकार ब्रह्मा तथा विष्णु का परस्पर घोर युद्ध हुआ। यह देखकर सभी देवता अत्यन्त विषादयुक्त एवं उसी प्रकार व्याकुल हो

गये, हे तात! जिस प्रकार राजाओं में परस्पर युद्ध होने पर ब्राह्मणों का मन दुःखित हो जाता है।

(ख) नृसिंह की शिवजी द्वारा दुर्गतिः-

इसी **शिवपुराण** की तृतीय शतरुद्रसंहिता के बारहवें अध्याय में शिवजी के द्वारा विष्णु के नृसिंह अवतार की दुर्गति तथा उसकी चमड़ी उतार कर शिवजी द्वारा धारण करने का वर्णन है। हम केवल प्रमाणार्थ कुछ ही श्लोक दे रहे हैं-

भिन्दन्नुरसि बाहुभ्यां निजग्राह हरो हरिम्।
ततो जगाम गगनं देवैः सह महर्षिभिः।।१४।।
सहसैवाभयाद्विष्णुं स हि श्येन इवोरगम्।
उत्क्षिप्योत्क्षिप्य सङ्गृह्य निपात्य च निपत्य च।।१५।।
उड्डीयोड्डीय भगवान्पक्षघातविमोहितम्।
हरिं हरस्तं वृषभं विवेशानन्त ईश्वरः।।१६।।
नृसिंहकृत्तिवसनस्तदाप्रभृति शंकरः।
तद्वक्त्रं मुण्डमालायां नायकत्वेन कल्पितम्।।३६।।

अर्थात् भुजाओं से हृदय को चीरते हुये शिवजी ने नृसिंह को पकड़ लिया। तब वे देवता तथा महर्षियों के साथ आकाश को चले गये।।१४।।

तब भैरव ने निर्भय होकर विष्णु को ऐसे पकड़ लिया, जैसे गरुड़ सर्प को पकड़ लेता है और उठा-पटक करता रहता है।।१५।।

शिवजी ने उड़-उड़कर पंखों की चोट से हरि को बेहोश कर डाला और शिवजी नन्दी के नीचे प्रवेश कर गये।।१६।।

तब से लेकर शिवजी नृसिंह के चर्म को धारण करते हैं और उनके मुख को मुण्डमाला में प्रमुख रूप से रखते हैं।।३६।।

(ग) शिवाज्ञा से भैरव ने ब्रह्मा का शिर काटा-

उसी **शिवपुराण** की प्रथम विद्येश्वर संहिता अ. ८ में शिवाज्ञा से भैरव द्वारा ब्रह्मा का पांचवां शिर काटने का वर्णन है।

वत्स योऽयं विधिः साक्षाज्जगतामाद्यदैवतम्।
नूनमर्चय खड्गं स्वं तिग्मेन जवसा परम्।।३।।
स वै गृहीत्वैककरेण केशं तत्पञ्चमं दृप्तमसत्यभाषिणम्।
छित्वा शिरो ह्यस्य निहन्तुमुद्यतः प्रकम्पयन्खड्गमतिस्फुटं करैः।।४।।

अर्थात् शिवजी ने (अपनी भौहों से उत्पन्न) भैरव को कहा, हे वत्स! यह जो संसार का आदि देव ब्रह्मा है, इसकी तेज धार वाली तलवार से शीघ्र पूजा (वध) करो।।३।। इतना सुनते ही भैरव ने ब्रह्माजी के केशों को एक हाथ से पकड़कर दूसरे हाथ में पकड़ी हुई तलवार से इनके उस असत्य भाषी पांचवें मुख को काटकर उन्हें भी मारने को उद्यत हुआ ।।४।।

(घ) पौराणिक वशिष्ठ व विश्वामित्र का युद्ध–

वाल्मिकीय रामायण में नन्दिनी गाय के कारण इन दोनों महर्षियों में घोर युद्ध की चर्चा की गयी है। इससे दोनों महर्षि क्रोधी व हिंसक सिद्ध होते हैं। हम निश्चितरूपेण कह सकते हैं कि ऐसा लेख महर्षि वाल्मीकि का नहीं, बल्कि किसी धूर्त की रचना है। शोक है कि किसी दुष्ट ने गौ की महिमा के मद में पागल होकर महर्षि वशिष्ठ जी एवं महर्षि विश्वामित्र जी जैसे महापुरुषों को बदनाम कर दिया, उन्हें क्रोधी, हिंसक व लोभी बना दिया। वस्तुतः बिना विद्या के ऐसे ही अनर्थ हुआ करते हैं।

(ङ) पुराणों द्वारा देवों के वैर विरोध, घृणा व द्वेष भरे प्रहार–

इन पुराणों में देवों को एक दूसरे के समक्ष नीचा सिद्ध करने, किसी देव के पूजकों को दूसरे देव के पूजकों के द्वारा घृणित, पापी

बताने जैसे परस्पर विवाद के अनेक स्थल हैं। हम विस्तार भय से उन्हें यहाँ नहीं दे रहे हैं।

(६) **भगवान् श्रीकृष्ण का पौराणिक चरित्र चित्रण–**

(क) कुब्जा–समागम– **श्रीमद्भागवत** पुराण दशम स्कन्ध अ. ४८ में कुब्जा दासी से श्रीकृष्ण के दुराचार का वर्णन है। उधर **ब्रह्मवैवर्त्त पुराण** कृष्ण जन्म खण्ड ४ अ. ७२ में इस दुराचार का अति अश्लील वर्णन है व दुराचार में कुब्जा के मर जाने का वर्णन है और इसे कुब्जा की मुक्ति होना कहा गया है। इस पुराण में अध्याय ११५, श्लोक ६२ में फिर लिखा–

"आगत्य मथुरां कुब्जां जघान मैथुनेन च"

अत्यन्त अश्लील होने से हम इसे स्पष्ट नहीं लिख सकते, पाठक चाहें, तो पुराण में देख सकते हैं।

(ख) ब्रह्मवैवर्त्तपुराण के अनुसार श्रीकृष्ण की कथित प्रेयसी राधा का परिचय एवं इन दोनों का दुराचार–

आविर्बभूव कन्यैका कृष्णस्य वामपार्श्वतः।।२५।।
तेन राधा समाख्याता पुराविद्भिर्द्विजोत्तम।।२६।।
(ब्रह्मवै. ब्रह्म. अ. ५)

वृषभानोश्च वैश्यस्य सा च कन्या बभूव ह।।३७।।
सार्धं रायणवैश्येन तत्सम्बन्धं चकार स।।३९।।
कृष्णमातुर्यशोदाया रायणस्तत्सहोदरः।
गोलोक गोपकृष्णांशः सम्बन्धात्कृष्णमातुलः।।४२।।
(ब्रह्मवै. प्रकृति अ.४९)

भावार्थ– कृष्ण के बायें पसवाड़े से एक कन्या पैदा हुई।।२५।।

उसका नाम विद्वान् द्विजों ने राधा रक्खा।।२६।।

वह राधा वृषभानु वैश्य की कन्या थी।।३७।।

उसने उसका सम्बन्ध रायाण वैश्य से कर दिया।।३६।।

कृष्ण की माता जो यशोदा थी, रायाण उसका भाई था। वह रायाण गोलोक में तो कृष्ण का अंश था, किन्तु सम्बन्ध से कृष्ण का मामा लगता था।।४२।।

इस पुराण में राधा से कृष्ण के दुराचार का अत्यन्त अश्लील वर्णन दिया है, जिसको लिखने में हमारी लेखनी समर्थ नहीं है। पाठक चाहें **ब्रह्मवैवर्त पुराण** कृष्ण जन्म खण्ड अध्याय १५ में पढ़ सकते हैं, पुनरपि कुछ श्लोक देना आवश्यक मानते हैं।

एतस्मिन्नन्तरे ब्रह्माऽऽजगाम पुरतो हरेः।।६२।।
तस्या हस्तं च श्रीकृष्णं ग्राहयामास तं विधिः।।१२७।।
प्रणम्य राधां कृष्णं च जगाम स्वालयं मुदा।।१४०।।
प्रणम्य श्रीहरिं भक्त्या जगाम शयनं हरेः।।१४२।।
कृष्णश्चर्विततताम्बूलं राधिकायै मुदा ददौ।।१४७।।
राधा चर्विततताम्बूलं ययाचे मधुसूदनः।।१४८।।
यः कामो ध्यायते नित्यं यस्यैकचरणाम्बुजम्।
बभूव तस्य स वशो राधासन्तोषकारणात्।।१५०।।
करे धृत्वा च तां कृष्णः स्थापयामास वक्षसि।
चकार शिथिलं वस्त्रं चुम्बनं च चतुर्विधम्।।१५२।।
बभूव रतियुद्धेन विच्छिन्ना क्षुद्रघण्टिका।
चुम्बनेनौष्ठरागश्च ह्याश्लेषेण च पत्रकम्।।१५३।।
पुलकांकितसर्वांगी बभूव नवसंगमात्।
मुर्च्छामवाप सा राधा बुबुधे न दिवानिशम्।।१५५।।

भावार्थ– इतने में ब्रह्मा कृष्ण के सामने आया।। ब्रह्मा ने राधा का हाथ कृष्ण के हाथ में पकड़ा दिया।। ब्रह्मा राधा तथा कृष्ण को प्रणाम करके अपने घर गया।। राधा कृष्ण को प्रणाम करके कृष्ण के पलंग पर गई।। कृष्ण ने चबाया हुआ पान राधा को दिया।। राधा से चबाया पान कृष्ण ने माँगा।। काम जिसके चरणों को स्मरण करता था; राधा के सन्तोषार्थ वह कृष्ण उसी काम के वश में हो गये।। कृष्ण ने हाथ से पकड़कर राधा को बगल में ले-लिया। उसके कपड़े ढीले कर दिये और चतुर्विध चुम्बन किया।। रतियुद्ध में एक घण्टा हो गया, चूमने से होंठों का रंग तथा लिपटने से पत्रावली नष्ट हो गई।। नये समागम से राधा रोमांचित हो गई। बस, राधा मूर्च्छित हो गई और दिन-रात होश में न आई।।

(ग) श्रीकृष्ण की रासलीला एवं महारास (भागवत पुराण की दृष्टि में)–

बाहुप्रसारपरिरम्भकरालकोरु नीवीस्तनालभननर्मनखाग्रपातैः।
क्ष्वेल्यावलोकहसितैर्व्रजसुन्दरीणा मुत्तम्भयन् रतिपतिं रमयाञ्चकार।।४६।।

(दशम स्कन्ध, अ. २९)

अर्थ- हाथ फैलाना, आलिंगन करना, गोपियों के हाथ दबाना, उनकी चोटी, जाँघ, नीवी और स्तन आदिका स्पर्श करना, विनोद करना, नखक्षत करना, विनोदपूर्ण चितवनसे देखना और मुस्काना-इन क्रियाओं के द्वारा गोपियों के दिव्य काम रसको, परमोज्ज्वल प्रेमभाव को उत्तेजित करते हुए भगवान् श्रीकृष्ण उन्हें क्रीडा द्वारा आनन्दित करने लगे।।४६।।

कस्याश्चिन्नाट्यविक्षिप्तकुण्डलत्विषमण्डितम्।
गण्डं गण्डे सन्दधत्या अदात्ताम्बूलचर्वितम्।।१३।।

(दशम स्कन्ध, अ. ३३)

एक गोपी नृत्य कर रही थी। नाचने के कारण उसके कुण्डल हिल रहे थे, उनकी छटासे उसके कपोल और भी चमक रहे थे। उसने अपने कपोलों को भगवान् श्रीकृष्ण के कपोल से सटा दिया और भगवान् ने उसके मुँह में अपना चबाया हुआ पान दे दिया।।१३।।

इसमें रासलीला व महारास का घृणित चित्रण है। उसे विस्तार से लिखना हम उचित नहीं मानते पुनरपि कुछ श्लोक व उनका हिन्दी अनुवाद देना पड़ा है।

(७) आर्य वैदिक विचारानुसार भगवत्पाद योगेश्वर श्रीकृष्ण का चरित्र–

धर्मराज युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में भीष्म पितामह द्वारा योगेश्वर भगवत्कृष्ण का चरित्र चित्रण–

वेदवेदांगविज्ञानं बलं चाभ्यधिकं तथा।
नृणां लोके हि कोऽन्योऽस्ति विशिष्टः केशवादृते।।
दानं दाक्ष्यं श्रुतं शौर्यं ह्रीः कीर्तिर्बुद्धिरुत्तमा।
सन्नतिः श्रीर्धृतिस्तुष्टिः पुष्टिश्च नियताच्युते।।

(**महाभारत**, सभापर्वणि अर्घाभिहरणपर्व, अ.३८, श्लोक १६,२० गीताप्रैस, गोरखपुर)

अर्थात् वेद, वेदांग के विज्ञान तथा सभी प्रकार के बल की दृष्टि से मनुष्य लोक में भगवत् श्रीकृष्ण के समान दूसरा कोई भी नहीं है। दान, दक्षता, वेदज्ञता, शूरवीरता, लज्जा, कीर्त्ति, उत्तम बुद्धि, विनय, श्री, धैर्य, तुष्टि (सन्तोष) एवं पुष्टि ये सभी सद्गुण भगवान् श्रीकृष्ण में नित्य विद्यमान हैं।

महाभारत में वर्णन है कि रुक्मिणी से विवाह के पश्चात् भगवान् श्रीकृष्ण उन्हें लेकर हिमालय पर्वत पर अखण्ड ब्रह्मचारी रहकर बारह वर्ष योग साधना की थी, उसके बाद सम्पूर्ण जीवन में एकमात्र पुत्र प्रद्युम्न को उत्पन्न किया था। उन्होंने जीवन में कभी भी मिथ्या भाषण जैसा पाप भी नहीं किया। तब अन्य पापों की तो कल्पना भी नहीं की जा सकती, इसी कारण महर्षि दयानन्दजी सरस्वती ने कहा था– **देखो! श्रीकृष्ण का इतिहास महाभारत में अत्युत्तम है। उनका गुण, कर्म, स्वभाव और चरित्र आप्त पुरुषों के सदृश है। जिसमें कोई अधर्म का आचरण**

श्रीकृष्णजी ने जन्म से मरणपर्यन्त बुरा काम कुछ किया हो, ऐसा नहीं लिखा और इस भागवत बनाने वाले ने अनुचित मनमाने दोष लगाये हैं। दूध, दही, मक्खन आदि की चोरी और कुब्जा दासी से समागम, परस्त्रियों से रासमण्डल क्रीड़ा आदि मिथ्या दोष श्रीकृष्णजी में लगाये हैं। इनको पढ़-पढ़ा, सुन-सुना के अन्य मतवाले श्रीकृष्णजी की बहुत सी निन्दा करते हैं। जो यह भागवत न होता, तो श्रीकृष्णजी के सदृश महात्माओं की झूठी निन्दा क्योंकर होती?

(**सत्यार्थप्रकाश**- एकादशसमुल्लास)

इस प्रकार हम भगवान् श्रीकृष्णजी महाराज को चोर, दुराचारी परमात्मा नहीं मान कर परम ईश्वरभक्त, योगेश्वर, महापराक्रमी, अद्वितीय जितेन्द्रिय, महावैज्ञानिक, परम वेदशास्त्रवेत्ता, सदासत्य धर्म पर आरूढ़ एवं मानवीय गुणों की उच्चता की पराकाष्ठा को प्राप्त महान् आप्त पुरुष मानते हैं, जो वैदिक सत्य सनातन धर्म तथा आर्य्यावर्त्त राष्ट्र के महान् संरक्षक, शान्ति व यथार्थ अहिंसा के प्रबल प्रणेता एवं समस्त मानव जाति के महत्तम आदर्श पुरुषोत्तम के रूप में विश्व इतिहास के शीर्ष स्थान पर सदैव विराजमान रहेंगे।

(८) गो मांस भक्षण के घोर पाप के समर्थक पुराण-

गोवध- ब्रह्मवैवर्त पुराण प्रकृतिखण्ड अध्याय ५४ महाराजा स्वायम्भुव की प्रशंसा में लिखा है कि-

ब्राह्मणानां त्रिकोटिश्च भोजयामास नित्यशः।।४६।।
पञ्चलक्षगवां मांसैः सुपक्वैघृतसंस्कृतैः।।५०।।

महाराजा स्वायम्भूव पांच लाख गौओं के घृतादि द्वारा अच्छे प्रकार पकाये हुए मांस से नित्य तीन करोड़ ब्राह्मणों को भोजन कराते थे। पाठक देखें पुराणों की यह पापलीला इतना तो औरंगजेब आदि कोई भी क्रूर विधर्मी राजा भी नहीं करता था।

ब्रह्मवैवर्त पुराण प्रकृतिखण्ड अ. ६१ श्लोक ८५ से ८८ तक मण्डलेश्वर महाराजा चैत्र की प्रशंसा में लिखा है कि-

पञ्चकोटिगवां मांसं सापूपं स्वन्नमेव च।।९८।।
एतेषां च नदीराशीर्भुञ्जते ब्राह्मणा मुने।।९९।।

उनके यहाँ पांच करोड़ गौओं का मांस ब्राह्मण लोग उसके यहां खाते थे। यह बड़े शोक की बात है कि **भारतीय शास्त्रों में ऐसी बातें पढ़कर ही विदेशी अथवा देशी विद्वान् ऋषि-मुनियों के विरोधी व राष्ट्रद्रोही बनकर हमारे वैदिक ब्राह्मणों को बदनाम कर रहे हैं और उन्हें नास्तिक, धर्मद्रोही व राष्ट्र विरोधी कहकर ही सन्तुष्ट हो जाते हैं। अहो! मेरे अभागे भारत! तूने जहाँ विश्व को महान् ज्ञान-विज्ञान व चरित्र की शिक्षा दी, वहीं ऐसे गोहत्यादि पापों को भी विश्व में प्रचारित किया है।**

(६) ब्राह्मण ग्रन्थों पर पौराणिक (कथित सनातनी) भाष्यकारों की क्रूर दृष्टि-

अब मैं कुछ प्रकरणों पर आचार्य सायण एवं डॉ. सुधाकर मालवीय के भाष्य एवं अपना व्याख्यान नमूना रूप में प्रस्तुत कर रहा हूँ ।

हिंसक वृत्ति का नमूना-

एकधाऽस्य त्वचमाच्छ्यतात् पुरा नाभ्या अपि शसो वपामुत्खिदतादन्तरेवोष्माणं वारयध्वादिति पशुष्वेव तत्प्राणान् दधाति।। इति। (२.६.३)

सायण भाष्य- एकधैकविधया विच्छेदराहित्येनास्य त्वचमाच्छ्यतात्समन्ताच्छिन्नां कुरुत। नाभ्या अपि शसश्छेदात् पूर्वमेव

वपामुत्खिदतादुद्धरत। ऊष्माणमुच्छ्वासमन्तरेव वारयध्वान्निवारयत पिहितास्यं संज्ञपयतेत्यर्थः। तद्भागपाठेन पशुष्वेव प्राणान् संपादयति।।

डॉ. मालवीय– इसकी सम्पूर्ण त्वचा को (विच्छेदरहित) चारों ओर से उचाड़ लो और नाभि काटने से पूर्व ही वपा अर्थात् अतड़ियों को निकाल लो। इसकी सांस को (मुंह बन्द करके) भीतर ही रोक लो (अर्थात् मुंह बन्द करके संज्ञपन करे) इस प्रकार होता उस (भाग) के पाठ से पशुओं में ही प्राणों को संपादित करता है।

श्येनमस्य वक्षः कृणुतात् प्रशसा बाहू, शला दोषणी, कश्यपेवांसाऽच्छिद्रे श्रोणी, कवषोरू स्रेकपर्णाऽष्ठोवन्ता षड्विंशतिरस्य वङ्क्रयस्ता अनुष्ठ्योच्च्यावयताद् गात्रं गात्रमस्यानूनं कृणुतादित्यङ्गान्येवास्य तद्गात्राणि प्रीणाति।। इति। (६.६)

सायण भाष्य– श्येनं श्येनाकृतिकमस्य पशोर्वक्षः कुरुत। बाहू प्रशसा प्रकृष्टच्छेदनौ कुरुत। दोषणी प्रकोष्ठौ शला कृणुताच्छलाकाकारौ कुरुत। उभावप्यंसौ कश्यपाकारौ कुरुत। श्रोणी उभे अप्यच्छिद्रे अनूने कुरुत। कवषोरू कवषाकारावूरू स्रेकपर्णा करवीरपत्राकारा– वष्ठीवन्तावूरू मूलयुक्तौ कुरुत। अस्य पशोर्वङ्क्रयो वक्राणि पार्श्वास्थीनि षड्विंशतिर्भवन्ति। ताः सर्वा अनुष्ठ्यानुक्रमेण स्वस्थानगतान्युच्च्यावयतोद्धरत। गात्रं गात्रं सर्वमप्यदनीयमङ्गमनूनं कृणुतादविकलं कुरुत। तद्भागपाठे तस्य पशोरङ्गान्येवावयव– रूपाण्येव गात्राणि प्रीणाति। गात्रशब्दः शरीरे तदवयवे च वर्तते। अतोऽत्रावयवविवक्षां द्योतयितुमङ्गानीति निर्देशः।।

डॉ. मालवीय– 'इसके वक्ष को श्येन (बाज) पक्षी की आकृति का कर दो। इसकी दोनों भुजाओं को प्रशस (कुल्हाड़ी) की आकृति का, इसके प्रकोष्ठों (पीछे के दोनों पैरों) को भाले की नोक की आकृति का, इसके कन्धों को कच्छपों की आकृति का, श्रोणी (कूल्हों) को छिद्र रहित, जाघों को कवष (ढाल या door leaves) के आकार का, दोनों घुटनों को स्रेक वृक्ष (करवीर या कनेर) के पत्तों के आकार का करो। इस पशु

की पसली की छब्बीस हड्डियाँ हैं उन्हें अनुक्रम से उनके अपने स्थान से निकाल लो। इस प्रकार इसके अंग अंग को पूरा रक्खो अर्थात् सभी अंगों को ऐसा निकाले कि वे परिपूर्ण रहें।'– इस प्रकार उस (भाग के पाठ) के द्वारा इस पशु के शरीर के अवयवरूपी अंङ्गों को सन्तुष्ट करता है।

ऊवध्यगोहं पार्थिवं खनतादित्याहौषधं वा ऊवध्यमियं वा औषधीनां प्रतिष्ठा, तदेनत्स्वायामेव प्रतिष्ठायामन्ततः प्रतिष्ठापयति।। इति। (६.६)

सायण भाष्य– ऊवध्यगोहं पुरीषगूहनस्थानं पार्थिवं खनतात्पृथिवीसंबन्धमेव खनत। अत्रोवध्यशब्दे नौशधमेवोच्यते, पुरीषस्य पशुभक्षितस्यौषधिविकारत्वात्। औषधीनां चेयमेव भूमिः प्रतिष्ठाऽऽश्रयः। तत्तथा सत्येनमूवध्यं स्वकीयायामेव प्रतिष्ठायां भूमिरूपायामन्ततः पशुविशसनान्ते प्रतिष्ठापयति।।

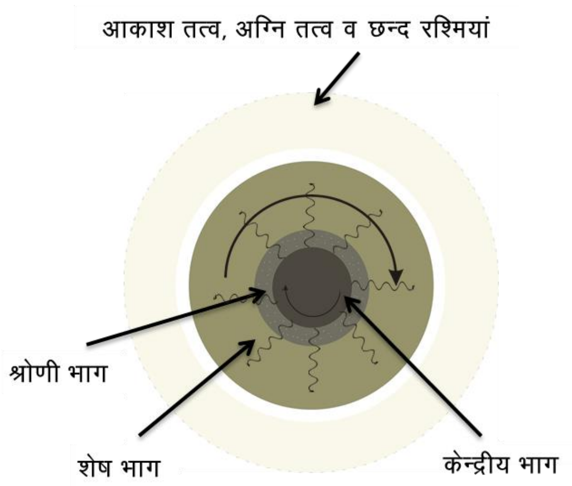
डॉ. मालवीय– इस मल को छिपाने के लिए भूमि (में गड्ढा) खोदो। (पशुभक्षित वनस्पति का विकार होने से) औषधि ही ऊवध्य (पुरीष) है और यह भूमि औषधियों का आश्रय स्थान है। इस प्रकार होता ऊवध्य को उस अपने भूमि रूप स्वकीय आश्रय में ही (पशु–मेध के) अन्त में प्रतिष्ठित कर देता है।

इस प्रकरण पर मेरा भाष्य देखें–

{त्वक् = तनोति विस्तृता भवतीति त्वक् (उ.को.२.६४), यस्त्वचति संवृणोति सः (वायुः) (म.द.य.भा.४.३०), आच्छादकः (तु.म.द.ऋ.भा. १.१२६.३)। नाभिः = मध्याकर्षणेन बन्धकम् (म.द.य.भा.२३.६१), आकर्षणेन बन्धनम् (म.द.ऋ.भा.१.१६४.३५), स्तम्भनं, स्थिरीकरणं, प्रबन्धनम् (म.द.य.भा.१७.८६), धारकमङ्गम् (म.द.य.भा.२३.५६), आधारः (प्रज्ञापिका विद्युत् – तु.म.द.य.भा.१३.४४), अथ त्रिष्टुप् नाभिरेव सा (जै.ब्रा.१.२५४)। वपा = वपन्ति याभिः क्रियाभिस्ताः (म.

द.य.भा.२१.३१), आत्मा वपा (कौ.ब्रा.१०.५), छिद्रम् (आप्टे कोष)। वक्षः = वक्षो भासोऽध्यूढमिदमपीतरद् वक्ष एतस्मादेवाध्यूढं काये (नि.४.१६), प्राप्तं वस्तु (म.द.ऋ.भा.१.१२४.४), (वक्ष रोषे संघाते च = संचित होना, शक्तिशली होना, वृद्धि को प्राप्त होना-आप्टे कोष)। श्येनः = प्रवृद्धवेगः (म.द.ऋ.भा.४.२६.६), श्येनः शंसनीयं गच्छति (नि.४.२४), श्येन आदित्यो भवति श्यायतेर् गतिकर्मणः (नि.१४.१३)। शलाः = (शल् = हिलाना, क्षुब्ध करना। शल् = जाना, तेज दौड़ना। दोषणी = (दुष वैकृत्ये), प्रकोष्ठौ (सायण भाष्य)। अंसौ = बाहुमूले (म.द.य.भा.२०.८)। कश्यपः = कश्यपो वै कूर्मः (श.७.५.१.५)। श्रोणी = श्रोणिः श्रोणतेर्गतिचलाकर्मणः, श्रोणिश्चलतीव गच्छतः (नि.४.३), जगती-छन्द आदित्यो देवता श्रोणी (श.१०.३.२.६)। कवषः = शब्दं कुर्वन् (म.द.य.भा.२६.५)। उरुः = बहुशक्तिः (म.द.ऋ.भा.२.१३.७)। उरु = व्यापकम् (म.द.ऋ.भा.३.५४.१६), बहुनाम (निघं.३.१)। स्रेक् = जाना, गतिशील होना (आप्टे कोष)। पर्णम् = पक्षम् (म.द.ऋ.भा.१.११६.१५), गायत्रो वै पर्णः (तै.ब्रा.३.२.१.१), सोमो वै पर्णः (श.६.५.५.१), ब्रह्म वै पर्णः (तै.ब्रा.३.२.१.१)। अष्ठिवन्तौ = (ष्ठिवु निरसने (स्वा.) धातोः शतृ. नञ् समासः), वङ्क्रीः = कुटिला गतीः (म.द.य.भा.२५.४१), यह वङ्क्रयः का छान्दस् रूप है। गात्रम् = गच्छति चेष्टतेऽनेनेति गात्रम् (उ.को.४.१७०)। ऊवध्यम् = वधितुं ताडितुमर्हम् (म.द.ऋ.भा.१.१६२.१०), ऊरू वध्ये येन तत् (रेतः = वीर्यम्) (म.द.य.भा.१९.८४)। गोहम् = संवरणीयं गृहम् (तु.म.द.ऋ.भा.४.२१.६)। ऊष्माणः = य ऊष्माणः स प्राणः (ऐ.आ.२.२.४), अन्तरिक्षस्य रूपम् ऊष्माणः (ऐ.आ.३.२.५)}

व्याख्यानम्- पूर्वोक्त प्रसंग को आगे बढ़ाते हुए कहते हैं कि जब दो कणों में संयोग होता है, तब उनके निकट आने पर दोनों कणों के परितः विद्यमान विभिन्न छन्द रश्मियां, सूत्रात्मा वायु एवं पूर्व वर्णित प्राणों का जो घेरा होता है, उसी में सर्वप्रथम भारी विक्षोभ होता है। वह घेरा ही किसी कण वा लोक का आच्छादक त्वचारूप होता है। दोनों के निकट आते ही वह आच्छादक घेरा एक बार में ही हट जाता है। वह आवरण हटने के पश्चात् उन कणों वा लोकों के केन्द्रीय भाग भी अति विक्षुब्ध होते हैं परन्तु उनके विक्षोभ से पूर्व कणों वा लोकों का सम्पूर्ण भाग, जो कि परस्पर विलीन होने वाले होते हैं, उनमें अति तीव्र भेदन क्रियाएं होने लगती हैं अर्थात् वह सम्पूर्ण भाग ही उथल-पुथल



से भर जाता है। मानो उन्हें विभिन्न बलों के द्वारा खोद दिया जाता है। उसके पश्चात् उन कणों वा लोकों के केन्द्रीय भाग में जो विद्युत् अग्नि आदि धारक और आकर्षक तत्त्व विद्यमान होते हैं, वे भी अपने स्थान से च्युत हो जाते हैं। ध्यातव्य है कि कणों वा लोकों के सम्पूर्ण भाग में जो उथल-पुथल होती है, वह ऊपर की दिशा में होती है। इस प्रक्रिया में उन कणों वा लोकों के मध्य भाग में नाभिरूप होकर जो त्रिष्टुप् प्राणादि विद्यमान होते हैं, वे भले ही अपने स्थान से हट जाते हैं परन्तु वे उन कणों वा लोकों के भीतर ही रोक दिये जाते हैं अर्थात् वे बाहर नहीं निकल पाते। इस प्रकार विशेष हलचलयुक्त प्रक्रिया, उन लोकों वा कणों के बाहरी भाग में ही होती है और उन कणों वा लोकों में विद्यमान विभिन्न प्राणादि पदार्थ यथावत् बने रहते हैं।।

जब दो कण वा लोक परस्पर निकट आते हैं, तब उन दोनों की ऊपरी एवं सम्मुख दिशाओं में विद्यमान पदार्थ अति तीव्र वेग से ऊपर की ओर उठता है। उस समय ऐसा प्रतीत होता है कि मानो उन कणों वा लोकों के अन्य निकटस्थ भागों का पदार्थ भी संचित होकर उसी दिशा में प्रबल वेग से बढ़ा आ रहा हो। यह क्रिया सहसा अति वेग और शक्ति के साथ सम्पन्न होती है। उन दोनों कणों के बाहुरूप वायु और विद्युत् और उनके भी कारणरूप प्राणापान व प्राणोदान एवं अति सूक्ष्म स्तर पर मन और वाक् तत्त्व अति प्रशंसनीयरूप से विशेष सक्रिय होते हैं। ध्यातव्य है कि किसी भी कण वा लोक के धारण और आकर्षण बल, जिन पर कि उनका अस्तित्त्व ही निर्भर होता है, इन वायु, विद्युत् आदि युग्मों से ही उत्पन्न होते हैं। कणों वा लोकों के

संयोग के समय यह बल अत्यन्त तीव्र हो जाता है। इस प्रक्रिया में उन कणों वा लोकों के केन्द्रों को मिलाने वाली रेखा के लम्बवत् भाग के निकट विद्यमान जो बाहरी भाग होते हैं, वे संयोग के समय क्षुब्ध होकर विकृत हो जाते हैं। यद्यपि उनकी विकृति पूर्व में मन्द हलचल से प्रारम्भ होती है, उसके पश्चात् तीव्र गति से होती है। उपर्युक्त वायु, विद्युत्, प्राणापान व प्राणोदान के मूल में कूर्म प्राण संयुक्त होता है। वह कूर्म प्राण ही मन और वाक् के अतिरिक्त अन्य तीनों युग्मों को प्रेरित करता है। **उधर चेतन सत्ता परमात्मा रूपी सर्वकर्त्ता कूर्म सभी शक्तियों को मूलरूपेण प्रेरित करता है। उसकी प्रेरणा सबसे अन्तिम प्रेरणा होती है, जिसके बिना इस सम्पूर्ण सृष्टि में किसी भी प्रकार का बल कार्य नहीं कर सकता।** विभिन्न कणों वा लोकों के केन्द्रीय भाग और शेष भाग को जोड़ने वाला क्षेत्र सतत चलायमान रहता है अर्थात् इसी भाग के ऊपर वे दोनों भाग परस्पर फिसलते रहते हैं। यह पद **'श्रोणृ संघाते'** धातु से निष्पन्न होता है, जिससे स्पष्ट होता है कि यह भाग कणों वा लोकों को परस्पर बांधे रखता है। वे इस भाग पर फिसलते हुए भी परस्पर कभी पृथक् नहीं हो पाते, बल्कि दृढ़ता से जुड़े रहते हैं। इस श्रोणि भाग में जगती छन्द रश्मियों की प्रधानता रहती है। क्षेत्र अछिद्र होता है। इसका तात्पर्य यह है कि **केन्द्रीय भाग और शेष भाग में पदार्थ के आवागमन के लिये निश्चित और स्पष्ट मार्ग नहीं होते, बल्कि पदार्थ रिसता हुआ प्रवाहित होता रहता है। इस प्रक्रिया में व्यापक स्तर पर ध्वनि उत्पन्न होती है अर्थात् तारों वा विभिन्न कणों के अन्दर इस श्रोणि भाग में पदार्थ के विसरण के समय सतत ध्वनि होती रहती है।** इसके दोनों ओर के भागों की गतियाँ अच्युत होती हैं अर्थात् वे दोनों भाग परस्पर निश्चित दूरी पर बंधे हुए, फिसलते हुए, इतस्ततः भ्रष्ट नहीं हो पाते हैं। संयोज्य कणों वा लोकों में छब्बीस प्रकार की कुटिल गतियाँ होती हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि **जब दो कणों वा लोकों में परस्पर संयोग होता है, तब उनके अन्दर विद्यमान विभिन्न प्राणादि पदार्थ तीव्र और विचित्र गतियाँ करने लगते हैं और वे गतियाँ ही छब्बीस प्रकार की होती हैं,** ऐसा ही यहाँ सकेत किया गया है। ये सभी गतियाँ वक्रीय ही होती हैं। इनमें से कोई भी सरल रेखीय गति नहीं होती है। उन सभी गतियों के सम्पन्न होने पर पुनः सभी गतिशील पदार्थ अपनी उन कुटिल व अस्थायी गतियों को विराम दे देते हैं और फिर उन लोकों वा कणों के सभी अंग पूर्ववत् साम्यावस्था को प्राप्त

करके एक अन्य नवीन पूर्ण कण वा लोक का रूप बन जाते हैं। इस प्रकार उन कणों वा लोकों का प्रत्येक भाग परस्पर एक-दूसरे को आकर्षित करके तृप्त व संतुलित कर लेते हैं।

विशेष– यहाँ हमने श्येन आदि विभिन्न शब्दों का पूर्णतः यौगिक अर्थ ग्रहण किया है। इस कारण विभिन्न कणों वा लोकों के परस्पर संयुक्त होने की प्रक्रिया में जो-जो भी धुंधली आकृतियाँ उभर सकती हैं, उस विषय पर किंचिदपि ध्यान नहीं दिया गया है। इस विषय पर गम्भीरता से विचार करने पर हमें ऐसा भी प्रतीत होता है कि विभिन्न कणों के संयोग की प्रक्रिया में उनके अन्दर विद्यमान विभिन्न सूक्ष्म कणों वा तरंगों तथा दो लोकों के परस्पर संयुक्त होने पर उसमें विद्यमान पदार्थ बिखरकर पुनः संतुलित अवस्था प्राप्त करने के समय कई आकृतियों का निर्माण कर सकता है और वे आकृति श्येन पक्षी, कुल्हाड़ी, भाले की नोंक, कछुआ, ढाल एवम् कनेर के पत्ते जैसी भी हो सकती हैं। कदाचित् इस दृष्टि से भी महर्षि ने इस सांकेतिक भाषा का प्रयोग किया प्रतीत होता है। पुनरपि यह निश्चित है कि इन पदों के यौगिक अर्थ लेकर हमने जो संयोग प्रक्रिया दर्शायी है, वह गम्भीर विज्ञान का परिचायक ही है। आकृतियों के प्रकरण को उसके साथ संयोजित अवश्य किया जा सकता है।।

इस उपर्युक्त प्रक्रिया में व्यापक स्तर पर बाधक बनने वाले पराक्रमी अप्रकाशित हिंसक विद्युद् वायु जिसको कि अनेकत्र दर्शाये अनुसार तेजस्वी विद्युद् वायु रूपी वज्र किरणों से नष्ट वा नियन्त्रित किया जाता है, कहाँ चला जाता है, इसका उत्तर देते हुए महर्षि कहते हैं- इन कणों और लोकों की संयोग प्रक्रिया के समय वह अप्रकाशित बाधक विद्युद्वायु उन दोनों के बीच से हट जाता है और उनके आस-पास विस्तृत आकाश तत्त्व, जो स्वयं उस समय विकृत हो जाता है, वही आकाश तत्त्व उस अप्रकाशित हिंसक विद्युद्वायु को ढक लेता है। इस प्रकार उसकी सामर्थ्य समाप्त हो जाती है और संयोग प्रक्रिया सहजतापूर्वक सम्पन्न हो जाती है। यह अप्रकाशित हिंसक विद्युद्वायु विभिन्न संयोजक शक्तियों को पी जाने अर्थात् नष्ट करने का सामर्थ्य रखता है। इस कारण यह विभिन्न संयोग प्रक्रियाओं को रोक सकता है। उस ऐसे अवरोधक पदार्थ को ग्रन्थ में अनेकत्र रोकने वा नष्ट

करने की चर्चा की गयी है, उसी विषय को यहाँ स्पष्ट करते हैं कि वह नियन्त्रित अप्रकाशित हिंसक विद्युद्वायु आकाश तत्त्व में फैलकर मानो विलीन वा दुर्बल हो जाता है। यह आकाश तत्त्व ही उस बाधक पदार्थ का आधार है। इस प्रकार उस पदार्थ को उसके आधारभूत आकाश तत्त्व में ही प्रतिष्ठित कर दिया जाता है। जहाँ-२ भी इस तत्त्व के नियन्त्रण वा विनाश की चर्चा है, वहाँ सर्वत्र ऐसा ही जानना चाहिए।।

ज्ञातव्य- इस खण्ड में वर्णित सभी कण्डिकाओं को आचार्य सायण ने **अध्रिगुप्रैष** कहा है। इससे संकेत मिलता है कि यहाँ वर्णित सभी क्रियाओं में ऊष्मा एवं विद्युत् की वृद्धि वा तीव्रता होती है।

वैज्ञानिक भाष्यसार- जब दो कण परस्पर संयुक्त होते हैं, तो सर्वप्रथम उनके परिधि भाग में विद्यमान फील्डस् वा प्राणादि तत्त्व आदि में भारी विक्षोभ होता है। उन कणों के परस्पर निकट आने पर वह घेरा तत्काल हट जाता है। उसके पश्चात् आयनों के अन्दर विद्यमान विभिन्न कक्षाओं में चक्रण करते इलेक्ट्रॉन्स आदि की कक्षाएं भी अव्यवस्थित और विक्षुब्ध हो जाती हैं। इसी प्रकार की प्रक्रिया दो लोकों के परस्पर टकराने अथवा गैलेक्सियों के परस्पर मिलने अथवा विभिन्न पिण्डों के संयुक्त होने के समय भी होती है। इसके पश्चात् संयोग प्रक्रिया का प्रभाव आयनों के नाभिक वा अन्य पिण्डों के केन्द्रीय भाग पर भी होता है और उनके केन्द्रीय भाग कुछ विचलित होकर अपने स्थान से कुछ हट जाते हैं, पुनरपि केन्द्रीय भाग में विद्यमान विद्युत् आवेश, आकर्षण बल, ऊष्मा आदि पदार्थ अति भीषण टक्कर के अतिरिक्त सामान्य सहज संयोग में बहिर्गमन नहीं कर पाते। कुछ समय में वे केन्द्रीय भाग विचलन मुक्त होकर स्थिरता को प्राप्त होते हैं। जब दो कण वा लोक निकट आते हैं, तो उनके सम्मुख भाग में विद्यमान **पदार्थ बहुत तीव्र गति से आकर्षित होकर एक-दूसरे की ओर दौड़ता है, इसके कारण सम्पूर्ण लोक वा कण की आकृति बदल जाती है। इस समय कणों वा लोकों के अन्दर विद्यमान अनेक प्रकार के बल प्रभावित और सक्रिय हो उठते हैं। इन बलों को परस्पर समन्वित रखने का कार्य एक चेतन परमात्म-सत्ता का होता है। विभिन्न Atoms के नाभिक और Atoms का शेष भाग, जिसमें इलेक्ट्रॉन चक्कर लगाते हैं, परस्पर असमान गति**

से घूर्णन करते हैं। इसी प्रकार विभिन्न लोकों के केन्द्रीय भाग एवं अन्य सम्पूर्ण भाग भी असमान गति से अपने अक्ष पर घूर्णन करते हैं। कणों वा लोकों के इन दोनों भागों के बीच में जो स्थान होता है, उसमें से सूक्ष्म पदार्थ और शक्तियाँ रिसती हुई एक-दूसरे में प्रवाहित होती है। इस प्रक्रिया में सतत ध्वनि भी उत्पन्न होती रहती है। जब दो कणों वा लोकों में मेल होता है, तब उनके प्रबल आकर्षण बल से उन कणों वा लोकों के अन्दर विद्यमान विभिन्न सूक्ष्म पदार्थों की उथल-पुथल में अनेक प्रकार की गतियाँ उत्पन्न होती हैं। वे सभी गतियाँ वक्रीय होती हैं। इनकी कुल संख्या यहाँ छब्बीस (२६) बतायी गयी है। परस्पर मिलन पूर्ण होने के पश्चात् एक नवीन कण वा लोक बनकर साम्यता को प्राप्त होता है। यहाँ ऐसा भी संकेत प्रतीत होता है कि इन कणों वा लोकों के मिलते समय कुछ अस्पष्ट आकृतियों का भी निर्माण होता है। **इस सम्पूर्ण प्रक्रिया में अथवा जहाँ कहीं भी डार्क एनर्जी को नियन्त्रित करने की चर्चा आती है, उस समय वह नष्ट वा नियन्त्रित डार्क एनर्जी कहाँ चली जाती है? इसके उत्तर में कहा गया है कि वह आकाश तत्त्व में विलीन होकर निष्प्रभावी हो जाती है और उस डार्क एनर्जी का निवास स्थान आकाश तत्त्व ही है, जिसमें वह गुप्त रूप से सदैव विद्यमान रहती है।।**

मूर्खता का उदाहरण :-

फिर सायण व इनके भक्त डॉ. मालवीय का भाष्य देखें-
(**ऐतरेय ब्रा. २.८.१** में)

पुरुषं वै देवाः पशुमालभन्त तस्मादालब्धान्मेध उदक्रामत्, सोऽश्वं प्राविशत् तस्मादश्वो मेध्योऽभवदथैनमुत्क्रान्तमेधमत्यार्जन्त स किंपुरुषोऽभवत्।। इति।

सायण भाष्य- पुरा कदाचिद्देवाः स्वकीये यज्ञे पुरुषं मनुष्यं पशुमालभन्त पशुं कृत्वा तेन पशुना यष्टुमुद्युक्ताः। तस्मादालब्धाद्यंष्टुमुद्युक्तान्मनुष्यपशोर्मेधो मेध्यो यज्ञयोग्यो हविर्भाग उदक्रामन्मनुष्यं परित्यज्यान्यत्रागच्छत्। गत्वा च स भागोऽश्वं प्राविशत्। यस्मादेवं तस्मादश्वो यज्ञयोग्योऽभवत्। अथ तदानीमुत्क्रान्तमेधं परित्यक्तहविर्भागमेनं मनुष्यं देवा अत्यार्जन्तातिशयेन वर्जितवन्तः।

तस्मिन्पशुत्वमपि नाकुर्वन्। देवैः स्वीकृत्य परित्यक्तः स मनुष्यः किंपुरुषः किंनरावान्तरजातीयः।।

डॉ. मालवीय– प्राचीन काल में देवों ने अपने यज्ञ में मनुष्य को पशु बनाकर आलम्भन किया। किन्तु उस आलम्भित (मनुष्य पशु) से मेध अर्थात् यज्ञ के योग्य हविःभाग निकल गया और वह अश्व में प्रविष्ट हो गया। इसीलिए अश्व यज्ञ के योग्य हुआ। तब निकले हुए हविःभाग वाले इस मनुष्य को देवों ने (यज्ञ पशु बनाने के लिए) अत्यन्त तिरस्कृत कर दिया। वह (देवों के द्वारा स्वीकृत किन्तु परित्यक्त मनुष्य ही) किंपुरुष अर्थात् किन्नर हो गए।

द्वितीयं पर्यायं दर्शयति–

तेऽश्वमालभन्त, सोऽश्वादालब्धादुदक्रामत्, स गां प्राविशत्, तस्माद् गौर्मेध्योऽभवद- थैनमुत्क्रान्तमेधमत्यार्जन्त स गौरमृगोऽभवत्।। इति।

सायण भाष्य– आलब्धादश्वान्मेधो यज्ञयोग्यभाग उत्क्रम्य गां प्राविशत्, स गौर्यज्ञयोग्य आसीत्। तदानीमयोग्यत्वेन त्यक्तः सोऽश्वो गौरमृगोऽभवद्, यस्य श्रृङ्गावपि लोमशौ भवतः।।

डॉ. मालवीय– उन्होंने अश्व को आलम्भन किया। किन्तु उस आलम्भित अश्व से यज्ञ योग्य हविःभाग निकल गया और वह गाय में प्रविष्ट हो गया। इसीलिए गाय यज्ञ योग्य हुई। तब निकले हुए हविभाग वाले इस (अश्व) को देवों ने अयोग्य जानकर उसे भी तिरस्कृत कर दिया। वह (देवों से पहले स्वीकृत किन्तु बाद में परित्यक्त) गौरमृग (नीलगाय) हो गई।

तृतीयं पर्यायं दर्शयति–

तेगामालभन्त, स गोरालब्धादुदक्रामत्, सोऽविं प्राविशत्, तस्मादविर्मेध्योऽभवदथैन- मुत्क्रान्तमेधमत्यार्जन्त, स गवयोऽभवत्, तेऽविमालभन्त सोऽवेरालब्धादुदक्रामत्, सोऽजं प्राविशत्, तस्मादजो मेध्योऽभवदथैनमुत्क्रान्तमेधमत्यार्जन्त, स उष्ट्रोऽभवत्।। इति।

सायण भाष्य– अजादयः प्रसिद्धाः। उष्ट्रो दीर्घग्रीवः।

डॉ. मालवीय– उन्होंने गाय का आलम्भन किया। किन्तु उस आलम्भित गौ से मेध निकल गया और वह भेड़ में प्रविष्ट हो गया। इसीलिए भेड़ मेध्य पशु हुआ। तब निकले हुए मेध वाले उस (गाय) को उन्होंने तिरस्कृत कर दिया। तब वह (गौ) गवय (बैल) हो गया। उन्होंने भेड़ का आलम्भन किया। किन्तु उस आलम्भित भेड़ से मेध निकल गया और वह बकरे में प्रविष्ट हो गया। इसीलिए बकरा मेध्य पशु हुआ। तब उस उत्क्रान्त मेध वाले (भेड़) को उन्होंने तिरस्कृत कर दिया। तब वह ऊँट हो गया।

अजं पुनरपि प्रशंसति–
सोऽजे ज्योक्तमामिवारमत तस्मादेष एतेषां पशुनां प्रयुक्तमो यदजः।। इति।

सायण भाष्य– स मेधाख्यो यज्ञयोग्यभागस्तस्मिन्नजे ज्योक्तमामिवातिशयेन चिरकालमेवारमत क्रीडितवांस्तस्माच्चिरकालमेव सद्भावाद्योऽयमजोऽस्ति स एष एतेषां पूर्वोक्तानां पशूनां मध्ये प्रयुक्ततमः शिष्टैरतिशयेन प्रयुक्तः।।

डॉ. मालवीय– उस बकरे में यज्ञ योग्य भाग बहुत दिनों तक रहा। अतः (चिरकाल तक रहने के कारण) जो यह अज है, वह इन (पूर्वोक्त) पशुओं के मध्य अत्यन्त प्रयुक्त हुआ।

उपर्युक्त दोनों प्रकरणों पर मेरा दृष्टिकोण–

{पुरुषः = इमे वै लोका पूरयमेव पुरुषो योऽयं (वायुः) पवते सोऽस्यां पुरि शेते तस्मात्पुरुषः (श.१३.६.२.१), प्राण एष स पुरि शेते स पुरि शेत इति। पुरिशयं सन्तं प्राणं पुरुष इत्याचक्षते (गो.पू.१.३९), स यत् पूर्वोऽस्मात् सर्वस्मात् सर्वान् पाप्मन औषत् तस्मात् पुरुषः (श.१४.४.२.२), पुरुषो वै यज्ञः (जै.उ.४.२.१), पुरुषो वै संवत्सरः (श.१२.२.४.१), पुरत्यग्रं गच्छतीति पुरुषः (उ.को.४.७५)। अश्वम् = व्याप्तुं शीलं (मेघम्) (म.द.य.भा.१३.४२), शुक्लवर्णं वाष्पाख्यम् (ऋ.भा.भू.

नौविमानादिविद्याविषयः - उद्धृत वै.को. -आ. राजवीर शास्त्री), अश्व इति महन्नाम (निघं.३.३), आशुगामी वायुरग्निर्वा (म.द.ऋ.भा.१.१६४.२), व्याप्तिशीलोऽग्निः (म.द.ऋ.भा.१.१६२.२२), अश्व इति किरणनाम, (निघं.१.५), अग्निर्वा अश्वः श्वेतः (श.३.६.२.५)। अति+अर्ज प्रतियत्ने = जाने देना, दूर करना (सं.धा.को.-पं. युधिष्ठिर मीमांसक)। किंपुरुषः = किंपुरुषो वै मयुः (श.७.५.२.३२), (मयुः = मिनोति सुशब्दं प्रक्षिपतीति मयुः - उ.को.१.७)। गौरः = गायति शब्दं करोतीति गौरः, अरुणे श्वेते पीते निर्मले च वाच्यलिङ्गः (उ.को.१.६५), गवतेऽव्यक्तं शब्दयतीति गौरः (उ.को.२.२६)। मृगः = मृगो मार्ष्टेर्गतिकर्मणः (नि.१.२०)। गवयः = गोसदृशः (तु.म.द.य.भा.१३.४६), गौरिवायो गमनं प्राप्तिर्वाऽस्येति गवयः, गो-अय-पदयोः समासः (वै.को.-आ.राजवीर शास्त्री)। अजः = क्षेपणशीलः (म.द.य.भा.२६.२३), प्रेरकः (म.द.ऋ.भा.३.४५.२), ब्रह्म वाऽअजः (श.६.४.४.१५), वाग्वाऽ अजः (श.७.५.२.२१), अजो ह्यग्नेरजनिष्ट शोकात् (मै.२.७.१७), एषा वा अग्नेः प्रिया तनुर्यदजा (तै.सं.५.१.६.२), तस्या (गायत्र्यै) अग्निस्तेजः प्रायच्छत्, सोऽजोऽभवत् (मै.१.६.४)। उष्ट्र = ओषति दहतीति उष्ट्रः (उ.को.४.१६३), (उष् = उष दाहे = जलना, हिंसा करना, जलाना, उपभोग करना, चोट पहुँचाना -आप्टे कोष)। शरभम् = शल्यकम् (म.द.य.भा.१३.५१), शृणातीति (उ.को.३.१२२), शल्+अभच् = शलभः = शलते गच्छतीति (उ.को.३.१२२) (हमारे मत में लकार को रेफ होकर शलभः का शरभः हुआ है। यहाँ 'शल चलनसंवरणयोः = जाना, चुभना, चलना, आच्छादित करना, ढकना। {व्रीहिः = व्रीहयः शक्वर्यः (जै.ब्रा.१.३३३), (शक्वरीः = शक्तिनिमित्ता गाः - म.द.य.भा.२१.२७), शक्वरी बाहुनाम (निघं.२.४), गोनाम (निघं.२.११), शक्वर्य ऋचः शक्नोतेः, तद् यद् आभिर्वृत्रमशकद् हन्तुं तच्छक्वरीणां शक्वरीत्वमिति विज्ञायते (नि.१.८), पशवः शक्वर्यः (तां.१३.१.३), आपो वै शक्वर्यः (जै.ब्रा.३.६२)। पशवः = पशवो वै हविष्मन्तः (श.१.४.१.६)। उद्+क्रम् = ऊपर होना, परे जाना, परे कदम रखना, उपेक्षा करना - आप्टे कोष}

व्याख्यानम्- अब महर्षि सृष्टि प्रक्रिया के प्रारम्भिक चरणों को क्रमबद्ध व्याख्यात करते हुए कहते हैं कि सर्वप्रथम मन एवं वाक् तत्त्व रूपी प्राथमिक देव पदार्थ समस्त अवकाश रूप आकाश में विद्यमान दिव्य वायु, जो कि प्राणापान आदि प्राथमिक प्राणों के रूप में उस समय

वर्तमान रहता है, को पशु रूप में देखते हैं। इसका आशय यह है कि **इस दिव्य वायु में सर्वप्रथम संगतीकरण की क्रिया प्रारम्भ होती है।** उस समय यह दिव्य वायु रूपी पुरुष अप्रकाशित हिंसक विद्युद् वायु आदि बाधक पदार्थों से मुक्त होता है किंवा ऐसे बाधक पदार्थ उस समय उत्पन्न ही नहीं हो पाते हैं अथवा उत्पन्न होते ही नष्ट हो जाते हैं। उस समय संगतीकरण की प्रक्रिया बिना किसी विघ्न बाधा के इस दिव्य वायु में सर्वतः प्रारम्भ हो जाती है। उसके पश्चात् संगतीकरण की प्रक्रिया इस दिव्य वायु से ऊपर उठकर आगे बढ़ने लगी अर्थात् इससे उत्पन्न स्थूलतर पदार्थ में भी यह क्रिया व्याप्त होने लगी। ध्यातव्य है कि प्रारम्भिक अवस्था में दिव्य वायु से स्थूल कोई पदार्थ विद्यमान ही नहीं था। तब संयोग प्रक्रिया स्थूल पदार्थों में कैसे व्याप्त हो गयी, इसके उत्तर में हमारा मत यह है कि स्थूल पदार्थ उस दिव्य वायु से ही उत्पन्न हुए। इन स्थूल पदार्थों का नाम **महर्षि ऐतरेय महीदास 'अश्व'** देते हैं। हमारी दृष्टि में **यहाँ 'अश्व' शब्द का अर्थ 'वाजी' अर्थात् छन्द रश्मियां होता है।** इसी कारण कहा है **"वाजिनो ह्यश्वाः" (श.५.१.४.१५) एवं "छन्दांसि वै वाजिनः" (मै.१.१०.६)। ये छन्द भी प्राजापत्य छन्द होते हैं,** इसलिए कहा है **"प्राजापत्यो वा अश्वः" (तै.सं.३.२.६.३; मै.४.४.८)।** इससे यह भी स्वयमेव स्पष्ट हो रहा है कि दैवी छन्द दिव्य वायु के अन्तर्गत ही समाहित होते हैं। दूसरे चरण की संयोग प्रक्रिया इन्हीं प्राजापत्य छन्द रश्मियों में होने लगती है। ये रश्मियां अत्यन्त व्यापक स्तर पर विद्यमान होती और अति आशुगामी भी होती हैं। इसमें संयोग प्रक्रिया उत्पन्न होने पर शेष दिव्य वायु कैसे स्वरूप वाला हो जाता है, इसके उत्तर में महर्षि कहते हैं कि वह **किंपुरुष = मयुः** के रूप में अवस्थित हो जाता है। इसका आशय यह है कि वह शेष **दिव्य वायु एक ऐसे पदार्थ में परिवर्तित हो जाता है, जो दूर तक फैला और मन्द-२ शब्द को उत्पन्न करने होता है अथवा जिसमें शब्द उत्पन्न वा प्रक्षिप्त होते हैं। हमारी दृष्टि में यही तत्त्व आकाश तत्त्व है, जिसका गुण शब्द बतलाया गया है।** यह शब्द गुण वाला आकाश तत्त्व संयोग-वियोग प्रक्रिया से कुछ दूर हो जाता है अथवा उसमें कम भाग लेता है। इस विषय में हमारा एक अन्य मत यह भी है कि यह **मयु (किंपुरुष) नाम का पदार्थ एक ऐसा पदार्थ है, जो अत्यन्त प्रक्षेपक क्षमता से युक्त एवं अत्यन्त व्यापनशील होता है, साथ ही यह सूक्ष्म ध्वनियां भी उत्पन्न करता रहता है। हमारी दृष्टि में यह पदार्थ ही सबसे सूक्ष्म**

एवं प्रारम्भिक असुर तत्त्व (अप्रकाशित हिंसक बाधक पदार्थ) कहलाता है। इसमें होने वाली प्रक्रियाएं अत्यन्त तीक्ष्ण होती हैं और इस पदार्थ में कभी भी किसी प्रजा का वास नहीं होता है।।

तदनन्तर वे मन और वाक् तत्त्व रूपी देव उन प्राजापत्य छन्द रश्मियों में सब ओर से व्याप्त हो गये और उनमें संगतीकरण की प्रक्रिया तेज होने लगी परन्तु कुछ काल पश्चात् संयोग प्रक्रिया उपर्युक्त प्राजापत्य छन्द रश्मियों से आगे बढ़कर उनसे उत्पन्न अन्य महद् रश्मियों अर्थात् बड़ी छन्द रश्मियों में व्याप्त हो जाती है। ये छन्द रश्मियाँ लघु छन्द रश्मियों से ही उत्पन्न होती हैं। ये रश्मियाँ अधिक तेजस्वी और बलवती होती हैं। इसी कारण कहा है– **'इन्द्रियं वै वीर्यं गावः' (श.५.४.३.१०), 'गावो वै शक्वर्यः' (जै.ब्रा.३.१०३), 'गौस्त्रिष्टुप्' (तै.सं.७.५.१.५), 'जगती छन्दस्तद् गौः प्रजापतिर्देवता' (मै.२.१३.१४)** इस प्रकार संयोग प्रक्रिया इन तीव्र छन्दों में सब ओर से व्याप्त हो जाती है अर्थात् ये परस्पर संयुक्त होने लगते हैं। इसके साथ ही पूर्वोक्त सूक्ष्म छन्द रश्मियां, जो स्थूल रश्मियों में परिवर्तित होने से शेष रह जाती हैं, वे **गौरमृग** में परिवर्तित हो जाती हैं। इसका तात्पर्य यह प्रतीत होता है कि **वे रश्मियां अरुण-पीत-श्वेत रंग वाली किरणों के विशाल मेघ के रूप में परिवर्तित हो जाती हैं। यह वर्ण निर्मल वा स्पष्ट होता है। प्रतीत होता है कि रूपवान् अग्नि तत्त्व की उत्पत्ति यहाँ हो जाती है। इनमें अव्यक्त ध्वनियां भी उत्पन्न होती रहती हैं।** ये रश्मियाँ इस ब्रह्माण्ड में सर्वत्र व्याप्त रहती हुई भी संयोगादि प्रक्रियाओं से अन्य पदार्थ की भाँति परिपूर्ण नहीं होती हैं अर्थात् इनमें वे क्रियाएं न्यूनतर होती हैं।।

{अविः = अविं पशुम् (प्रजापतिः पद्भयामेवासृजत – जै.ब्रा.१.६६), इयं (पृथिवी) वाऽअविरियꣳ हीमाः सर्वाः प्रजा अवति (श.६.१.२.३३), नासिकाभ्यामेवास्य (इन्द्रस्य) वीर्यमस्रवत् सोऽविः पशुरभवन्मेषः (श.१२.७.१.३), (नासिका = नासिका नसतेः – नि.६.१७; नसते गतिकर्मा – निघं.२.१४; नासिकेऽउ वै प्राणस्य पन्थाः – श.१२.६.१.१४; यथा वै नासिकैवं यूपः – श.४.२.१.२५)}

तदनन्तर वे मन एवं वाक् तत्त्व रूपी देव उपर्युक्त विभिन्न छन्द रश्मियों में सब ओर से व्याप्त हो गये और उनमें संगतीकरण की क्रिया

तीव्र होने लगी परन्तु कुछ कालोपरान्त वह संयोग प्रक्रिया उन छन्द रश्मियों से आगे बढ़कर उनसे उत्पन्न **'अवि'** नामक पदार्थ में विशेषरूपेण व्याप्त हो गयी। यहाँ **'अवि' का तात्पर्य उस व्यापक पदार्थ से है, जो अन्तरिक्ष में फैला रहता व जिसमें अपना प्रकाश नहीं होता है। इसके कण पूर्वोत्पन्न त्रिष्टुबादि छन्द रश्मियों से उत्पन्न इन्द्र तत्त्व अर्थात् तीव्र तेजस्वी विद्युद्वायु से उत्पन्न होते हैं।** उनकी उत्पत्ति की प्रक्रिया **महर्षि याज्ञवल्क्य** अपने **शतपथ ब्राह्मण** में उपर्युक्त उद्धरणों के माध्यम से बतलाते हुए कहते हैं- **जब विद्युद्वायु के अन्दर प्राणतत्त्व के प्रवाहित होने के मार्ग से कुछ तेजस्वी रश्मियाँ प्रवाहित होने लगती हैं, तब वे रश्मियां अप्रकाशित कणों के रूप में संघनित होने लगती हैं। जैमिनीय ब्राह्मण १.६८** के प्रमाण से यह प्रतीत होता है कि इन कणों का निर्माण प्रजापति अर्थात् विभिन्न छन्दरश्मियों के विभिन्न पदों के संयोग से होता है। उन पदों का संयोग उपर्युक्त इन्द्रतत्त्व से प्रवाहित तेजस्वी रश्मियों से ही होता है तथा उससे अप्रकाशित कणों की उत्पत्ति होती है। ये अप्रकाशित कण **'अवि'** इस कारण कहलाते हैं, क्योंकि ये विभिन्न छन्दादि रश्मियों, विभिन्न प्रकाशित तरंगों एवं अन्य अनेक प्राणादि रश्मियों को धारण करने वाले होते हैं तथा उनके कारण ही गति, आकर्षण बलादि से युक्त होते हैं। उधर जब मन, वाक् की संगतीकरण की प्रक्रिया जिन छन्द रश्मियों से दूर हो जाती है किंवा जो छन्द रश्मियां अप्रकाशित कणों में परिवर्तित नहीं हो पाती हैं, वे **'गवय'** में परिवर्तित हो जाती हैं। यहाँ **'गवय' पदार्थ भी गो पदार्थ के समान ही होता है अर्थात् वे रश्मियां छन्द रश्मियों के रूप में ही ब्रह्माण्ड में सर्वत्र प्राप्त वा व्याप्त रहकर अपना कार्य करती रहती हैं।**

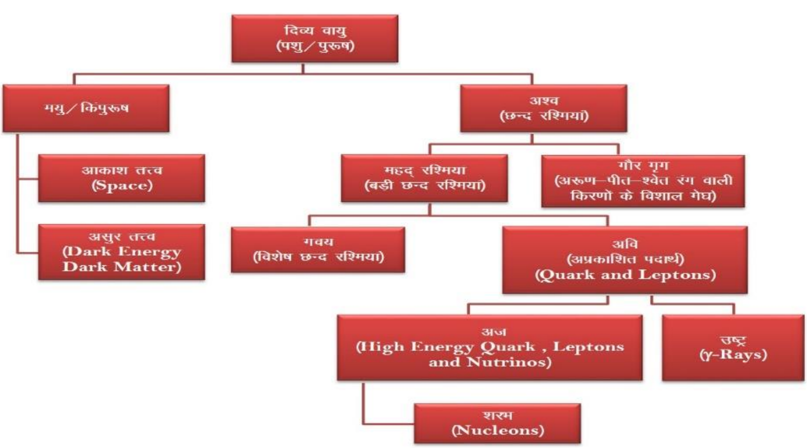
इसके पश्चात् मन एवं वाक् तत्त्व ने संगति प्रक्रिया को उन अप्रकाशित कणों के मध्य सब ओर से व्याप्त कर दिया परन्तु कुछ काल पश्चात् वह प्रक्रिया उन कणों से भी आगे बढ़कर उन्हीं से उत्पन्न **'अज'** नामक पदार्थ में व्याप्त हो गयी। इस **'अज'** पदार्थ के स्वरूप पर उपर्युक्त प्रमाणों को दृष्टिगत रखकर विचार करते हैं- **यह पदार्थ ज्वलनशील अग्नि से उत्पन्न होता है तथा इसमें ही अग्नि तत्त्व का विस्तार होता है। इससे प्रतीत हो रहा है कि तेजवर्धक गायत्री एवं त्रिष्टुप् आदि छन्द रश्मियों से इसकी उत्पत्ति होती है।** प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि फिर यहाँ अप्रकाशित कणों से इसकी उत्पत्ति क्यों बतायी

है? इसका कारण यह है कि विभिन्न अप्रकाशित कण विभिन्न छन्द रश्मियों के सघन रूप ही होते हैं, साथ ही वे विभिन्न छन्द रश्मियों से आवृत्त भी होते हैं। जब वे अप्रकाशित कण अग्नि तत्त्व के संयोग से देदीप्यमान हो जाते हैं। उस समय उनमें से यह **'अज'** नामक तेजस्वी पदार्थ उत्पन्न हो जाता है। यह पदार्थ तीव्र रूप से प्रक्षेपणशील भी होता है। इसी **'अज'** नामक पदार्थ में मन और वाक् तत्त्व की संगतीकरण-प्रक्रिया व्याप्त हो जाती है, जिससे उसके परमाणु विभिन्न संयोगों को उत्पन्न करके नाना पदार्थों में परिवर्तित होने लगते हैं। उधर जो अप्रकाशित कण संयोगादि प्रक्रियाओं से कुछ वंचित होकर **'अज'** नामक पदार्थ में परिवर्तित नहीं होते हैं, वे **उष्ट्र** रूप में परिवर्तित हो जाते हैं। यहाँ **उष्ट्र उस पदार्थ का नाम है, जो तीव्र दाहक होता है और जिसकी भेदन क्षमता भी अधिक होती है। इसके कारण यह पदार्थ सबको जलाता हुआ तोड़-फोड़ करता रहता है, परन्तु इसमें संयोग की प्रक्रिया न्यून होने के कारण अन्य पदार्थ से कुछ पृथक् सा रहता है।।**

इसके पश्चात् पूर्वोक्त **अज** नामक तेजस्वी पदार्थ में मन और वाक् तत्त्व के द्वारा संगतीकरण की प्रक्रिया लम्बे काल तक चलती रहती है। **ये पदार्थ ही तेजस्वी और क्षेपणशील होने के कारण सबसे अधिक संयोज्य गुणधर्मी हो जाते हैं। {ज्योक् = निरन्तरम् (म.द.ऋ.भा.१. १३६.६)}** यह पदार्थ अग्नि तत्त्व के साथ अधिक संगमनीय होने के कारण संयोगादि प्रक्रिया के लिये अधिक उपयुक्त रहता है।।

इस कारण मन और वाक् तत्त्व की संगतीकरण की प्रक्रिया इस **'अज'** नामक पदार्थ में सब ओर से व्याप्त हो जाती है परन्तु एक दीर्घकाल के पश्चात् यह प्रक्रिया उनसे भी आगे बढ़ जाती है। वह संगतीकरण प्रक्रिया इस पृथिवी अर्थात् सम्पूर्ण अन्तरिक्ष में विद्यमान प्रकाशित और अप्रकाशित कणों में व्याप्त हो गयी। उधर उपर्युक्त अज नामक पदार्थ, जिनमें कि संगतीकरण की प्रक्रिया मन्द हो गयी थी, **शरभ** नामक पदार्थ में परिवर्तित हो गये। यहाँ **शरभ उस पदार्थ का नाम है, जो ब्रह्माण्ड में सबको आच्छादित करता हुआ भेदक शक्ति से सम्पन्न सर्वत्र विचरता रहता है। यह पदार्थ संयोग-वियोग की प्रक्रिया की मन्दता के चलते सृजन कार्यों की मुख्य धारा से कुछ पृथक् ही रहता है।।**

वैज्ञानिक भाष्यसार– यहाँ सृष्टि प्रक्रिया के कुछ महत्वपूर्ण चरणों की चर्चा करते हुए कहते हैं कि सर्वप्रथम मन और वाक् तत्त्व प्राणापान आदि प्राथमिक प्राणों में संगतीकरण की प्रक्रिया प्रारम्भ करते हैं। उस समय संगतीकरण की प्रक्रिया में बाधक अप्रकाशित ऊर्जा आदि पदार्थों की उत्पत्ति नहीं हो पाती है, जिसके कारण संगतीकरण की प्रक्रिया निर्बाध और तीव्र गति से चलती है। उसके पश्चात् इस प्रक्रिया से ही विभिन्न सूक्ष्म छन्द रश्मियाँ उत्पन्न होती हैं और फिर मन और वाक् तत्त्व के द्वारा इन रश्मियों में संगतीकरण की प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है। उधर पूर्व पदार्थ के शेष भाग में जो संगतीकरण की प्रक्रिया अति मन्द वा बन्द पड़ जाती है, **वही पदार्थ आकाश तत्त्व एवं अप्रकाशित ऊर्जा आदि में परिवर्तित हो जाता है। यही सर्वप्रथम ध्वनि ऊर्जा की उत्पत्ति होती है। आकाश तत्त्व एवं डार्क एनर्जी व मैटर की भी यह प्रथम उत्पत्ति है।** उसके पश्चात् बड़ी एवं तीक्ष्ण छन्द रश्मियाँ उत्पन्न होती हैं और उनमें मन और वाक् तत्त्व के द्वारा संयोगादि प्रक्रिया होने लगती है। उधर कुछ सूक्ष्म छन्द रश्मियाँ संयोगादि प्रक्रिया की मन्दता की शिकार हो जाती हैं। उस समय **वे लाल, पीले और श्वेत रंगों के मिश्रित परन्तु स्पष्ट और स्वच्छ रूप वाली किरणों के विशाल मेघ के रूप में परिवर्तित हो जाती हैं। उनमें अव्यक्त ध्वनि तरंगें भी उत्पन्न होती रहती हैं।** उसके पश्चात् बड़ी छन्द रश्मियों से उत्पन्न **तेजस्वी विद्युत् के द्वारा अनेक पदार्थ कण उत्पन्न हो जाते हैं। ये पदार्थ कण विभिन्न विद्युत् चुम्बकीय तरंगों को अवशोषित और उत्सर्जित करने के सामर्थ्य से युक्त होते हैं।** हमारी दृष्टि में आधुनिक विज्ञान द्वारा **क्वार्क**



एवं **लैप्टॉन** आदि पदार्थ इसी श्रेणी के अन्तर्गत माने जा सकते हैं। उसके पश्चात् मन और वाक् तत्त्व के द्वारा इनमें संगतीकरण की प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है। उधर संगतीकरण की प्रक्रिया की मन्दता से प्रभावित कुछ बड़ी छन्द रश्मियाँ अपने उसी रूप में इस ब्रह्माण्ड में विचरण करती रहती हैं। उसके पश्चात् उन लैप्टॉन्स और क्वार्क आदि के परस्पर संगत होने से किंवा उनकी विभिन्न छन्द रश्मियों से संगति होने से वे कण अति तीव्र भेदक और क्षेपक शक्तिसम्पन्न हो जाते हैं। कदाचित् न्यूट्रिनो आदि एवं विभिन्न प्रकार की तीव्र ऊर्जा युक्त तरंगें भी इन्हीं से उत्पन्न होती हैं और कुछ लैप्टॉन्स, क्वार्क आदि अपने ही प्रतिकणों से मिलकर अति तीव्र ऊर्जा वाली गामा (γ) तरंगों को उत्पन्न करते हैं। इसके पश्चात् **तीव्र ऊर्जा वाले लैप्टॉन्स और क्वार्क्स लम्बे काल तक मन और वाक् तत्त्व की मूल प्रेरणा से परस्पर संगत होकर विभिन्न न्यूक्लिऑन्स का निर्माण करते रहते हैं।** उसके पश्चात् मन और वाक् तत्त्व के द्वारा संगतीकरण की प्रक्रिया इस ब्रह्माण्ड में विद्यमान समस्त न्यूक्लिऑन्स आदि पदार्थों में व्याप्त हो जाती है और उधर कुछ न्यूक्लिऑन्स इतनी तीव्र ऊर्जा से युक्त हो जाते हैं कि वे परस्पर संयोग ही नहीं कर पाते हैं। ऐसे तीव्र ऊर्जायुक्त न्यूक्लिऑन्स तीव्र भेदक क्षमतासम्पन्न होकर इस ब्रह्माण्ड में सर्वत्र विचरते रहते हैं।।

बुद्धिमालिन्य का नमूना–

अब एक और प्रमाण देखिये जिससे सायण वा उनके भक्तों की बुद्धिमलीनता का परिचय मिलता है–

सोमो वै राजा गन्धर्वेष्वासीतं देवाश्च ऋषयश्चाभ्यध्यायन् कथमयमस्मान् सोमो राजाऽऽ गच्छेदिति सा वागब्रवीत् स्त्रीकामा वै गन्धर्वा मयैव स्त्रिया भूतया पणध्वमिति नेति देवा अब्रुवन् कथं वयं त्वदृते स्यामेति साऽब्रवीत् क्रीणीतैव यर्हि वाव वो मयाऽर्थो भविता तर्ह्येव वोऽहं पुनरागन्ताऽस्मीति तथेति तया महानग्न्या भूतया सोमं राजानमक्रीणन्।।
(ऐत. ब्रा. २७.१.१)

सायण भाष्य– स्वानभ्राजेत्यादिनामधारिणो गन्धर्वा द्युलोके सोमस्य रक्षकाः। तच्च शाखान्तरे मन्त्रव्याख्यान ब्राह्मणे श्रूयते– 'स्वानभ्राजेत्याह।

एतेषाममुष्मिँलोके सोमरक्षन्’ इति। अथवा विश्वावसुप्रभृतयःसोमस्यापहन्तारो गन्धर्वाः। तदपि तत्रैव श्रुतम् ‘तं सोम माह्नियमाणं गन्धर्वो विश्वावसुः पर्यमुष्णात्स तिस्त्रो रात्रीः परिमुषितोऽसत्’ इति। तेषु गन्धर्वेषु यः सोम आसीत्तं सोमं मित्रादयो देवा वसिष्ठादि ऋषयश्च केन प्रकारेण सोमोऽस्मान् प्राप्नुयादिति विचारितवन्तः। तदानीं गन्धर्वहृदयाभिज्ञा वाग्देवी देवानब्रवीत् गन्धर्वाः सर्वेऽपि स्त्रीलम्पटा, अहं च स्त्रीभूत्वा तिष्ठाम्यतो मया पणध्वं सोममूल्यत्वेन मां गन्धर्वाणामग्रे कुरुतेति। ततो देवा अनङ्गीकृत्य त्वदृते त्वां वाचं विना वयं कथं स्याम मन्त्ररुपवाग्राहित्ये सति कर्मणामप्रवृत्तेः केन प्रकारेण वयं जीवामेति वाचमब्रुवन्। ततो वाग्देवानब्रवीत्। संदेहं मां कुरुतावश्यं मया मूल्येन क्रीणीत यदैव मया युष्माकं प्रयोजनं भविष्यति तदैवाहं पुनरपि युष्मान् प्राप्स्यामीति। ततो देवा अंगीकृत्य तया वाचा सोममक्रीणन्। कीदृश्या महानग्न्या। महती चासौ नग्नी च महानग्नी तया। रूपसंपत्तिविवक्षया महत्वमुच्यते। बाल्यविवक्षया नग्नत्वम्। भूतया तदानीमेव कुमारीरूपेण निष्पन्नया। तदेतच्छाखान्तरे स्पष्टमाम्नातम् – ‘ते देवा अब्रुवन् स्त्रीकामा वै गन्धर्वाः स्त्रिया निष्क्रीणामेति। ते वाचं स्त्रियमेकहायनीं कृत्वा तया निरक्रीणन्’ इति।

डॉ. सुधाकर मालवीय हिन्दी अनुवाद– सोम राजा गन्धर्वों के पास थे। देवताओं और ऋषियों ने विचार किया कि यह सोम राजा हम तक कैसे आवें। (क्योंकि द्युलोक में सोमरक्षक गन्धर्वों के पास रहते हैं। उनका स्वभाव जानने वाली) वाणी ने कहा कि गन्धर्व स्त्रियों को चाहते हैं। मैं स्त्री बन जाऊंगी। तब तुम (सोम के बदले) मुझे बेच देना। देवताओं ने कहा– नहीं, हम तुम्हारे बिना अर्थात् मन्त्ररूप वाणी के बिना कैसे रहेंगे? उसने (पुनः) कहा (सन्देह मत करो और) मुझे उनके हाथ बेच दो। यदि तुम चाहोगे तो मैं तुम्हारे पास पुनः लौट आऊंगी। उन्होंने ऐसा ही किया, और एक बहुत नग्न स्त्री अर्थात् कुमारी के रूप में उसे बेचकर सोम ले लिया।

मेरे सायण भक्त अपने को सनातनी कहाने वालो पौराणिक भाइयो! देखो, अपने आचार्य की मानसिकता और पाण्डित्य। गन्धर्व जाति जो पूज्य मानी जाती थी, उसे कामी बता दिया। इसी प्रकार आपके देव भी

अप्सराओं के साथ रसरंग में मस्त रहते हैं। वेदवाणी को स्त्री बना दिया और कन्या को बेचने का अपराध भी करा दिया साथ में वेद वाणी को विश्वासघातिनी सिद्ध किया। जरा बताओ, है कोई ऐसी बात जिससे आप किसी सच्चरित्र व्यक्ति को मुख दिखला सकते हो?

इस पर मेरा व्याख्यान-

{गन्धर्वः = सूत्रात्मा वायुः (म.द.य.भा.१७.३२), मनो ह गन्धर्वः (श. ६.४.१.१२)। नग्नम् = नञ्+ग्ना (ग्नाः वाङ्नाम - निघं.१.११; गमनादयः - नि.१०.४७)। ऋषयः = प्राणादयः पञ्च देवदत्तधनञ्जयौ च (म.द.य.भा.१७.७६), बलवन्तः प्राणाः (म.द.य.भा.१५.१३), गतिमन्तः (प्रथमजाः = वायवः) (म.द.य.भा.१५.१२), प्राणा वा ऋषयः (ऐ.२. २७)}

व्याख्यानम्- अब तक सोम तत्त्व अर्थात् मरुद् रश्मियों के विभिन्न क्रियाकलापों की जो चर्चा करते रहे हैं, उससे पूर्व की चर्चा करते हुए महर्षि लिखते हैं कि सृष्टि प्रक्रिया के प्रारम्भिक चरण में सोम पदार्थ गन्धर्व अर्थात् सूत्रात्मा वायु वा मनस् तत्त्व के अधीन होता है। मनस् तत्त्व और सूत्रात्मा वायु अति सूक्ष्म और व्यापक होने से सबको धारण करने वाले होते हैं। इस कारण इनको गन्धर्व कहा गया है। उस समय प्राणापानव्यानोदानसमानदेवदत्त और धनञ्जय आदि तीव्रगन्ता प्राथमिक प्राण, जो सबके प्रकाशक, सबको गति देने वाले और संयोग-वियोग आदि में तत्पर होते हैं, उस सोम तत्त्व को आकर्षित करने का प्रयास करते हैं, क्योंकि बिना सोम तत्त्व के प्राथमिक प्राणों से सृष्टि निर्माण सम्भव नहीं है। उस समय एकाक्षरा वाक् अर्थात् **'भूः', 'भुवः', 'स्वः'** आदि दैवी गायत्री छन्द नग्न रूप में अर्थात् बिना अन्य छन्द रश्मियों को साथ में लिये मनस् तत्त्व वा सूत्रात्मा वायु की ओर प्रवाहित होते हैं। सूत्रात्मा वायु एवं मनस् तत्त्व वाक् रूप स्त्री अर्थात् उपर्युक्त **'भूः', 'भुवः', 'स्वः'** आदि सूक्ष्म रश्मियों के प्रति अत्यन्त आकर्षण का भाव रखते हैं किंवा वाक् और मन का सदैव युग्म रूप ही रहता है। इसी कारण कहा है **''वाक् च वै मनश्च देवानां मिथुनम्'' (ऐ.५.२३)**। इनकी निकटता इतनी होती है कि कहीं इनको एक भी मान लिया है **''वागिति**

मनः'' (जै.उ.४.११.१.११)। यहाँ वाक् तत्त्व से भूरादि व्याहृति छन्द रश्मियों के अतिरिक्त इन सबको भी बल प्रदान करने वाली **'ओम्'** छन्द रश्मि का भी ग्रहण करना चाहिये। प्रायः वाक् तत्त्व से इस **'ओम्'** रश्मि का ही ग्रहण अधिक उचित है। सूत्रात्मा वायु मनस् तत्त्व से कुछ स्थूल एवं उसी से निर्मित होता है। जब वह वाक् तत्त्व मनस् तत्त्व अथवा सूत्रात्मा वायु की ओर प्रवाहित होता है, उस समय वे दोनों पदार्थ वाक् तत्त्व को अपनी ओर आकृष्ट करते हैं। इस विषय में **महर्षि तित्तिर** का भी कथन है-

''ते देवा अब्रुवन्त्स्त्रीकामा वै गन्धर्वाः स्त्रिया निष्क्रीणामेति। ते वाचं स्त्रियमेकहायनीं कृत्वा तया निरक्रीणन्'' (तै.सं.६.१.६.५), (हायनः = शिखा, ज्वाला - आप्टेकोश) यहाँ पूर्वोक्त वाक् तत्त्व को शिखा अर्थात् तीव्र बना कर गन्धर्व की ओर प्रेषित करने का संकेत है। इस प्रक्रिया में सोम पदार्थ पर उनका आकर्षण शिथिल हो जाता है, जिसके कारण वह पदार्थ प्राणापानादि प्राथमिक प्राणों की ओर प्रवाहित होने लग जाता है। इधर वाक् तत्त्व के प्राणापानादि पदार्थों से निकलने के पश्चात् उनकी भी शक्ति क्षीण हो जाती है। इस कारण वे सोम तत्त्व के सम्पर्क के पश्चात् भी सृष्टि प्रक्रिया को आगे नहीं बढ़ा पाते हैं। उसके पश्चात् मनस् तत्त्व एवं सूत्रात्मा वायु से संयुक्त वह वाक् तत्त्व, जो प्राणापानादि की ओर से प्रवाहित हुआ था, वह पुनः लौट कर उसी ओर प्रवाहित होना लगता है। यहाँ यह विशेष चिन्तनीय है कि वाक् तत्त्व प्राणापानादि की ओर से मनस् तत्त्व एवं सूत्रात्मा वायु की ओर क्यों अर्थात् किसकी प्रेरणा से प्रवाहित हुआ? यदि यह मनस् तत्त्व आदि की शक्ति से आकर्षित होकर प्रवाहित हुआ, तो सोम तत्त्व के मुक्त होने के पश्चात् मनस् तत्त्व आदि से वह वाक् तत्त्व कैसे मुक्त होकर वापिस प्राणादि तत्त्वों के पास आया? इस विषय में हमारा मत यह है कि कोई भी तत्त्व वाक् तत्त्व से पूर्ण मुक्त कभी नहीं होता और न ही मनस् तत्त्व से। यहाँ वर्णन प्रधानता के आधार पर किया गया है। जब विशुद्ध सूक्ष्म वाक् तत्त्व अधिक मात्रा में मनस् तत्त्व आदि से संयुक्त होता है, उस समय सोम तत्त्व के प्रति उसका आकर्षण कम हो जाता है। उस सोम तत्त्व के साथ कुछ वाक् तत्त्व प्राणादि तत्त्वों के साथ मिल जाता है और कुछ वाक् तत्त्व प्राणादि पदार्थों में नया उत्पन्न हो जाता है। **इसके पीछे चेतन परमसत्ता परमात्मा की ही भूमिका रहती है।।**

वैज्ञानिक भाष्यसार– प्रारम्भ में विभिन्न मरुद् रश्मियां अर्थात् सोम पदार्थ, जिसकी प्रधानता से ऋणावेशित सूक्ष्म कणों की उत्पत्ति होती है, तथा प्राणापानादि, जिनकी प्रधानता से धनावेश की उत्पत्ति होती है, दोनों पदार्थ दूर–२ थे। उस समय इनको परस्पर पास–२ लाने की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई। उस प्रक्रिया के विषय में कहा गया है कि सोमतत्त्व मनस्तत्त्व के आकर्षण से बंधा था। उस समय सूक्ष्म वाक् तत्त्व उत्पन्न होकर मनस्तत्त्व से संयुक्त होने लगा, जिससे सोम तत्त्व का मनस्तत्त्व से बंधन शिथिल होकर वह प्राणादि पदार्थों की ओर प्रवाहित होने लगा। उसके पश्चात् वाक्तत्त्व प्राणादि पदार्थों के बीच भी उत्पन्न होकर उन्हें भी सक्रिय करता है। स्मरण रहे कि यहाँ धनावेशित व ऋणावेशित कणों की चर्चा नहीं की गयी है, बल्कि ये पदार्थ जिस पदार्थ से उत्पन्न होते हैं, उनके निकट आने की प्रक्रिया की चर्चा है। **इस प्रक्रिया में चेतन सर्वशक्तिमती सत्ता परमात्मा की भूमिका अनिवार्य है।।**

अश्लीलता वा यौनकुण्ठा का नमूना–

अब अपने वेद भक्त भाइयों को आचार्य सायणादि की यौनकुण्ठा का परिचय देते हैं– प्रथमे पदे विहरति तस्मात् स्त्रयुरू विहरति।।

सायण भाष्य– विहरणम् = पृथक्करणम्। द्वयोः पादयोर्मध्ये विहारं विच्छेदं कृत्वा पठेत्। यस्माद् अत्र पादयोः परस्परवियोगः, तस्माल्लोकेऽपि स्त्री संभोगकाले स्वकीये उरु विहरति वियोजयति।।

डॉ. सुधाकर मालवीय हिन्दी अनुवाद– प्रथम दो पदों के मध्य विच्छेद करके पढ़ना चाहिये। इसीलिये (लोक में भी) स्त्रियां संभोग काल में अपनी जाँघों को अलग करती हैं।

समस्यत्युत्तरे पदे, तस्मात् पुमानूरु समस्यति तन्मिथुनं मिथुनमेव तदुक्थमुखे करोति, प्रजात्यै।।

(दोनों – ऐतरेय ब्रा. अ. १० खं. ३)

सायण भाष्य– यस्मात् तृतीयचतुर्थपादयोरुत्तरार्धगतयोः संयोजनं तस्माल्लोकेऽप्युपरिवर्ती पुमान् भोगकाले स्वकीये उरू समस्यति संयोजयति

तदुभयं मिलित्वा मिथुनं भवति। तस्मादुक्थमुखे शस्त्रस्योपक्रमे मिथुनमेव करोति। तच्च यजमानस्य प्रजननाय संपद्यते।।

डॉ. सुधाकर मालवीय हिन्दी अनुवाद- उत्तरार्ध के दो पदों को मिलाकर पढ़ना चाहिये। इसीलिये (लोक में भी) पुरुष भोग के समय अपनी जाँघों को मिलाता है। यह मिथुन है। इसीलिये इस प्रकार आज्यशस्त्र के प्रारम्भ में मिथुन ही करता है जो (यजमान के) प्रजनन के लिये होता है।

मेरे भाइयो! इन्हें मांस, हिंसा, मैथुन व चमत्कार ये ही सर्वत्र दिखाई देते हैं। जहाँ सीधा अर्थ ऐसा दिखाई दे रहा हो, वहाँ उन्हें यही दिखाई देते हैं। उनमें यौगिकार्थ करने की न इच्छा है और न योग्यता।

इन पर मेरा व्याख्यान-

{स्त्री = स्त्यायति शब्दयति गुणान् गृह्णाति वा सा स्त्री (उ.को.४.१६७), (गुणः = रस्सी, आवृति - आप्टेकोष), (स्त्यै ष्ट्यै शब्दसंघातयोः (भ्वा.) धातोः स्त्यायतेर्ड्रट् उ.को.४.१६७ सूत्रेण ड्रट्, ततः स्त्रियां ङीप्), अवीर्या वै स्त्री (श.२.५.२.३६), यदेतत् स्त्रियां लोहितं भवति, अग्नेस्तद्रूपम् (ऐ.आ.२.३.७), स्त्री सावित्री (जै.उ.४.१२.१.१७)। उरू = बहुनाम (निघं.३.१), बह्वाच्छादनं स्वीकरणं वा (म.द.य.भा.४.२७), सक्थ्यावनुष्टुभः (श.८.६.२.८)। समस्यति = (सम्+अस् = मिलना, एकत्र करना, जोड़ना - आप्टेकोष)}

व्याख्यानम्- यहाँ महर्षि खण्ड २.३३ में वर्णित विट् सज्ञंक सूक्त (ऋ.३.१३) के विषय में पुनः कुछ चर्चा करते हुए कहते हैं कि जब अनुष्टुप् छन्दस्क

प्र वो॑ दे॒वाया॒ग्नये॒ बर्हि॑ष्ठमर्चास्मै।
गम॑द्दे॒वेभि॒रा स नो॒ यजि॑ष्ठो ब॒र्हिरा स॑दत्।। (ऋ.३.१३.१)

इत्यादि सूक्त की उत्पत्ति होती है, तब कुछ विशेष क्रियाएं हुआ करती हैं। इस सूक्त का विस्तृत वर्णन पूर्व में हम कर चुके हैं। अन्य विशेष

यहाँ लिखते हैं। इस सूक्त की रश्मियाँ अनुष्टुप् छन्दस्क होने से पूर्वोत्पन्न निविद् रश्मियों के साथ-२ गमन करती हुई उन्हें थाम लेती हैं अर्थात् उनके साथ मिलकर विभिन्न पदार्थ कणों का निर्माण करने लगती हैं।।

जब ये अनुष्टुप् छन्द रश्मियाँ उत्पन्न होती हैं, तब उनके सभी पाद परस्पर दूर-२ स्थित हुए उत्पन्न होते हैं, मानो वे अन्तरिक्ष रूपी पद में पृथक्-२ उत्पन्न होकर किसी शक्ति के द्वारा पकड़े हुए हों अथवा ऐसा प्रतीत होता है कि उन छन्द रश्मियों की उत्पत्ति पादशः होती है। उस समय स्त्री अर्थात न्यून तेज और बल से युक्त प्राणादि पदार्थ किंवा विभिन्न सूक्ष्म कण अपनी ऊरू अर्थात् इन अनुष्टुप् छन्द रश्मियों के पादों के आवरण वा आच्छादन को अपने से दूर ही रखकर पकड़े रहते हैं अर्थात् उन छन्द रश्मियों की अवयवभूत पाद रश्मियां प्राणादि पदार्थों वा कणों से इस प्रकार संयुक्त रहती हैं कि न तो वे पूर्ण रूप से संयुक्त रहती हैं और न सर्वथा पृथक् होती वा नष्ट होती हैं। उस समय सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में एक ध्वनि गूँजने लगती है और विभिन्न प्राणादि पदार्थ वा कण उन वाग् रश्मियों से दूर रहते हुए भी ऐसे जुड़े होते हैं, मानो वे किसी अव्यक्त रस्सी से जुड़े हुए हों और ऐसे जुड़े रहकर ही सूक्ष्म कम्पन करते हुए बार-२ आवृत्त होकर संघात की ओर उन्मुख होने लगते हैं। यहाँ **''प्रथमे पदे''** का अर्थ प्रारम्भिक चरण में अन्तरिक्ष रूपी पद में, ऐसा किया गया है। यहाँ एक विकल्प यह भी सम्भव है कि उपर्युक्त छन्द रश्मियों की उत्पत्ति पादशः न मान कर समग्र ऋचाओं के रूप में मान कर पुनः उस प्रत्येक रश्मि को उपर्युक्त व्यवस्था में एक पाद के स्थान पर एक सम्पूर्ण ऋग्रश्मि का ग्रहण करें। वे सभी ऋग्रश्मियाँ विभिन्न प्राणादि रश्मियों वा कणों आदि से उपर्युक्तवत् सम्बद्ध रहती हैं। एक तृतीय पक्ष यह कि **'प्रथमे पदे'** को **''प्रथमं पदम्''** का द्वितीया विभक्ति द्विवचन मानें, तब प्रत्येक ऋचा के प्रथम व द्वितीय पद को परस्पर पृथक्-२ रहते हुए उत्पन्न मानें तथा शेष पद सामान्यावस्था में उत्पन्न मानें। ऐसी स्थिति में उन रश्मियों का विभिन्न प्राणों तथा कणों से सम्बन्ध द्वितीय विकल्प के संयुक्त आलोक में देखना होगा।।

इसके पश्चात् अन्तरिक्ष में उपर्युक्त अनुष्टुप् छन्द रश्मियां, जो उपर्युक्त तीनों प्रकार की व्यवस्थाओं के अनुरूप विद्यमान हो सकती हैं, उनके एकत्रीकरण की प्रक्रिया प्रारम्भ होती है। यह प्रक्रिया पुमान् अर्थात् वे तेजस्वी पदार्थ, जो पूर्वोक्त निविद् रश्मियों से युक्त होकर तेजस्वी और बलवान् हो चुके होते हैं, के द्वारा प्रारम्भ की जाती है। वे प्राण अनुष्टुप् छन्द रश्मियों की उपर्युक्त बिखरी हुई अवस्था को समाप्त करके उन्हें अपने साथ मिलाने लगते हैं, जिसके कारण हीनबल और तेज वाले पूर्वोक्त स्त्री रूप प्राणादि पदार्थ आकर्षित होकर इन तेजस्वी प्राणादि पदार्थों के साथ संयुक्त होने लगते हैं। इसके कारण सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में बिखरी अनुष्टुप् छन्द रश्मियों का जाल ऐसे ही एकत्र होने लगता है, मानो लोक में रज्जुओं से बने जाल को खींचकर एकत्र किया जाता है। इस एकत्रीकरण से समस्त ब्रह्माण्ड में विपरीत स्वभाव वाले पदार्थों के युग्म बनने प्रारम्भ हो जाते हैं। इस प्रक्रिया से समस्त पदार्थ जगत् प्राण और अन्न के स्वरूप में परिवर्तित वा प्रतीत होने लगता है, जिसके कारण वे सब परस्पर भक्षक और भक्ष्य रूप धारण करके नाना प्रकार के पदार्थों को उत्पन्न करने लगते हैं।।

जब ब्रह्माण्ड में इस प्रकार की स्थिति उत्पन्न होती है, उस समय विभिन्न प्रकार के प्राणापानादि प्राण, मरुद् रश्मियां, छन्द रश्मियां एवं अन्य उत्पन्न विभिन्न प्रकार के पदार्थ संयुक्त होकर नाना तत्त्वों को उत्पन्न करते हैं।।

वैज्ञानिक भाष्यसार– तदनन्तर ७ अनुष्टुप् छन्द रश्मियों की उत्पत्ति होती है, जो पूर्वोक्त १२ सूक्ष्म रश्मियों के साथ संयुक्त होकर विभिन्न संयोगादि कर्मों को सम्पादित करती हैं। ये छन्द रश्मियां पूर्वोक्त १२ रश्मियों से असंयुक्त पदार्थ (कण वा तरंगों) से कुछ पृथक् रहते हुए संयुक्त होती हैं। उसके पश्चात् जो प्राणादि पदार्थ वा कण पूर्वोक्त १२ प्रकार की सूक्ष्म रश्मियों से संयुक्त होकर अधिक ऊर्जावान् हो जाते हैं, दूर-२ स्थित छन्द रश्मियों एवं उनके साथ संयुक्त प्राणादि पदार्थ वा कणों को आकर्षित करने लगते हैं। उस समय ब्रह्माण्ड में दोनों प्रकार के पदार्थों के आकर्षण की तीव्र प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है, जिससे नये-२ तत्वों (कणों व तरंगों) का निर्माण होने लगता है। उस

समय इन कणों वा तरंगों एवं विभिन्न छन्द रश्मि आदि पदार्थों के घात और प्रतिघातों से इस ब्रह्माण्ड में अव्यक्त ध्वनियाँ गूँजने लगती हैं।।

(१०) आर्ष ग्रन्थों में छूआछूत-अत्याचार व मद्यमांसादि आहार के समर्थन में दुष्ट प्रक्षेप-

(क) मनुस्मृति में आधे से अधिक श्लोक मध्यकाल में मिलाये गये हैं। इसके लिए विशेष रूप से आर्य विद्वान् डॉ. सुरेन्द्रकुमारजी द्वारा मनुस्मृति पर किये भाष्य को विस्तार से पढ़ने का कष्ट करें। मनुस्मृति में न केवल नारी व दलितों के शोषण के समर्थक अपितु मद्य, मांसाहार, व्यभिचारादि पापों का भी समर्थन करने वाले श्लोक मिलाने का भारी पाप हुआ और इसी के कारण मध्यकालीन क्षत्रिय ही नहीं अपितु कुछ ब्राह्मण भी मांसाहारी बन गये। वर्तमान में भी दक्षिण तथा पूर्वी भारत के कथित ब्राह्मण निःसंकोच मांस मछली का सेवन करते हैं। उन्हें इसमें कोई पाप दिखायी नहीं देता। मनुस्मृति की भाँति वाल्मिकीय रामायण व महाभारत में भी यही पाप किया गया। क्रूर, कामी लोगों ने इन्हें भी अपना शिकार बना कर दूषित कर डाला। मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम द्वारा निरपराध शम्बूक शूद्र का वध एवं भगवती सीताजी को त्यागना, ये दो लांछन उत्तरकाण्ड में लगाये गये हैं। वा. रामायण के गम्भीर अनुशीलन से सिद्ध होता है कि सम्पूर्ण उत्तरकाण्ड ही प्रक्षिप्त (मिलावटी) है। इन दोनों ही पापों का श्रीराम के चरित्र से कोई संगति नहीं बैठती। महर्षि वाल्मीकि जी ने श्रीराम के गुणों का वर्णन करते हुये उन्हें 'रक्षिता जीवलोकस्य' 'प्रजानां हितेरतः' 'सर्वसमः' 'सर्वभूतेषु हितः' अर्थात् समस्त जीवलोक के रक्षक, प्रजा के हित में संलग्न, सबके प्रति समान भाव रखने वाले, तथा समस्त प्राणिजाति के हितैषी आदि अनेक विशेषणों से विभूषित किया है, ऐसे भगवान् श्रीराम को शूद्र व नारी का विरोधी कहने का पाप निश्चित ही शूद्र व नारी विरोधी मानसिकता वाले किसी क्रूर पापी के मन की कल्पना की उपज है, जो उत्तरकाण्ड में स्पष्ट दृष्टिगोचर हो रही है। देखो! महर्षि वाल्मीकि जी **रामायण** में श्रीराम के विषय में लिखते हैं-

"सर्वेषु स हि धर्मात्मा वर्णानां कुरुते दयाम्।"

(अयोध्या काण्ड १७.१५)

अर्थात् धर्मात्मा श्रीराम सभी वर्णों अर्थात् ब्राह्मण,क्षत्रिय,वैश्य व शूद्रों पर दया करने वाले थे। जरा विचारें कि तब महर्षि वाल्मीकि श्रीराम को निर्दोष शम्बूक का हन्ता कैसे लिख सकते हैं?

(११) वेद पर पौराणिक (कथित सनातनी) भाष्यकारों की क्रूर दृष्टि–

हम महर्षि दयानन्दजी सरस्वती कृत **ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका** में से कुछ उद्धरण प्रस्तुत करते हैं–
पौराणिक ब्राह्मणों द्वारा प्रायः बोले जाने वाले मंत्र–

गणानां त्वा गणपतिँ् हवामहे प्रियाणां त्वा प्रियपतिँ् हवामहे निधीनां त्वा निधिपतिँ् हवामहे वसो मम। आहमजानि गर्भधमा त्वमजासि गर्भधम्।। (यजुर्वेद २३.१६)

इस मंत्र का आचार्य महीधर का अर्थ–

'अस्मिन् मंत्रे गणपतिशब्दादश्वो वाजी ग्रहीतव्य इति। तद्यथा महिषी यजमानस्य पत्नी यज्ञशालायां पश्यतां सर्वेषामृत्विजामश्वसमीपे शेते। शयाना सत्याह– हे अश्व! गर्भधं गर्भं दधाति गर्भधं गर्भधारकं रेतः, अहम् आ अजानि, आकृष्य क्षिपामि। त्वं च गर्भधं रेतः आ अजासि आकृष्य क्षिपसि'।।

भाषार्थ– इस मंत्र में गणपति शब्द से घोड़े का ग्रहण है। सब ऋत्विजों के सामने यजमान की स्त्री घोड़े के पास सोवे और सोती हुयी घोड़े से कहे कि, हे अश्व! जिससे गर्भधारण होता है, ऐसा जो तेरा वीर्य है, उसको मैं खैंच के अपनी योनि में डालूं तथा तू उस वीर्य को मुझमें स्थापन करने वाला है।।

अब ऋषि दयानन्द का भाष्य देखिये–

भाषार्थ– (गणानां त्वा.) ऐतरेय ब्राह्मण में गणपति शब्द की ऐसी व्याख्या की है कि यह मन्त्र ईश्वरार्थ का प्रतिपादन करता है। जैसे ब्रह्म का

नाम बृहस्पति, ईश्वर तथा वेद का नाम भी ब्रह्म है। जैसे अच्छा वैद्य रोगी को औषध देके दुःखों से अलग कर देता है, वैसे ही परमेश्वर भी वेदोपदेश करके मनुष्य को विज्ञानरूप औषधि दे के अविद्यारूप दुःखों से छुड़ा देता है। जो कि– 'प्रथ' अर्थात् विस्तृत, सब में व्याप्त और 'सप्रथ' अर्थात् आकाशादि विस्तृत पदार्थों के साथ भी व्यापक हो रहा है। इसी प्रकार से यह मन्त्र ईश्वर के नामों को यथावत् प्रतिपादन कर रहा है। ऐसे ही शतपथ ब्राह्मण में भी–राज्यपालन का नाम 'अश्वमेध', राजा का नाम 'अश्व' और प्रजा का नाम घोड़े से भिन्न 'पशु' रक्खा है। राज्य की शोभा धन है, और ज्योति का नाम हिरण्य है। तथा 'अश्व' नाम परमेश्वर का भी है, क्योंकि कोई मनुष्य स्वर्गलोक अपने सहज सामर्थ्य से नहीं जान सकता, किन्तु अश्व अर्थात् जो ईश्वर है, वही उनके लिये स्वर्गसुख को जनाता और जो मनुष्य प्रेमी धर्मात्मा हैं, उनको सब स्वर्गसुख देता हैं।

तथा (राष्ट्रमश्वमेधः.) राज्य के प्रकाश का धारण करना सभा ही का काम, और उसी सभा का नाम राजा है। वही अपनी ओर से प्रजा पर कर लगाती है। क्योंकि राज ही से राज्य और प्रजा की वृद्धि होती है।

(गणानां त्वा.) जो परमात्मा गणनीय पदार्थों का पति अर्थात् पालन करने हारा है, (त्वा) उसको (हवामहे) हम लोग पूज्यबुद्धि से ग्रहण करते हैं। (प्रियाणां.) जो हमारे इष्ट मित्र और मोक्षसुखादि का प्रियपति, तथा हमको आनन्द में रखकर सदा पालन करने वाला है, उसी को हम लोग अपना उपास्यदेव जानके ग्रहण करते है। (निधीनां त्वा.) जो कि विद्या और सुखादि का निधि अर्थात् हमारे कोशों का पति है, उसी सर्वशक्तिमान् परमेश्वर को हम अपना राजा और स्वामी मानते हैं। तथा जो कि व्यापक होके सब जगत् में और सब जगत् उसमें बस रहा है, इस कारण से उसको 'वसु' कहते हैं। हे वसु परमेश्वर! जो आप अपने सामर्थ्य से जगत् के अनादिकारण में गर्भ धारण करते हैं, अर्थात् सब मूर्तिमान द्रव्यों को आप ही रचते हैं, इसी हेतु से आप का नाम 'गर्भध' है। (आहमजानि) मैं ऐसे गुण सहित आपको जानूं। (आ त्वा.) जैसे आप सब प्रकार से सब को जानते हैं, वैसे ही मुझको भी सब प्रकार से ज्ञानयुक्त कीजिये। (गर्भधं) दूसरी वेर 'गर्भधं' शब्द का पाठ इसलिये है कि जो-जो प्रकृति और परमाणु आदि कार्यद्रव्यों के

गर्भरूप हैं, उनमें भी सब जगत् के गर्भरूप बीज को धारण करने वाले ईश्वर से भिन्न दूसरा कार्य जगत् की उत्पत्ति स्थिति और लय करने वाला कोई नहीं है।।

(गणनां त्वा.) स्त्री लोग भी राज्यपालन के लिये विद्या की शिक्षा सन्तानों को करती रहें। जो इस यज्ञ को प्राप्त होके भी सन्तानोत्पत्ति आदि कर्म्म में मिथ्याचरण करती हैं, उनके इस कर्म को विद्वान् लोग प्रसन्न नहीं करते। और जो पुरुष सन्तानादि की शिक्षा में आलस्य करते हैं, अन्य लोग उनको बांधकर ताड़ना देते हैं। इस प्रकार तीन, छः वा नव वार इसकी रक्षा से आत्मा शरीर और बल को सिद्ध करें। जो मनुष्य परमेश्वर की उपासना करते हैं, उनके बलादि गुण कभी नष्ट नहीं होते। (आहमजानि.) प्रजा के कारण का नाम 'गर्भ' है, उसके समतुल्य वह सभा और प्रजा के पशुओं को, अपने आत्मा में धारण करें। अर्थात् जिस प्रकार अपना सुख चाहे, वैसे ही प्रजा और उसके पशुओं का सुख चाहे।।१।।

यकासकौ शकुन्तिकाहलगिति वञ्चति।
आहन्ति गभे पसो निगल्गलीति धारका।।३।।
(यजु. अ. २३। मं. २२)
यकौसको.।।४।। (यजु. अ. २३। म. २३)

पौराणिक महीधर का अर्थ–

भाषार्थ– 'यज्ञशाला में अध्वर्यु आदि ऋत्विज् लोग कुमारी और स्त्रियों के साथ उपहासपूर्वक संवाद करते हैं। इस प्रकार से कि अङ्गुली से योनि दिखला के हंसते है। (आहलगिति.) जब स्त्री लोग जल्दी–२ चलती हैं, तब उनकी योनि में हलहला शब्द, और जब भग लिंग का संयोग होता है, तब भी हलहला शब्द होता, और योनि और लिंग से वीर्य्य झरता है'।।३।।

(यकौसको.) कुमारी अध्वर्यु का उपहास करती है कि जो यह छिद्रसहित तेरे लिंग का अग्रभाग है, सो तेरे मुख के समान दीख पड़ता है।।४।।

अब महर्षि दयानन्द का अर्थ देखिये–

(यकौसको.) प्रजा का नाम 'शकुनितका' है, कि जैसे बाज के सामने छोटी–२ चिड़ियाओं की दुर्दशा होती है, वैसे ही राजा के सामने प्रजा की। (आहलगिति.) जहां एक मनुष्य राजा होता है, वहां प्रजा ठगी जाती है। (आहन्ति गभे पसो.) तथा प्रजा का नाम 'गभ' और राज्य का नाम 'पस' है। जहां एक मनुष्य राजा होता है, वहां वह अपने लोभ से प्रजा के पदार्थों की हानि ही करता चला जाता है। इसलिये राजा को प्रजा का घातुक अर्थात् हनन करनेवाला भी कहते हैं। इस कारण से एक को राजा कभी नहीं मानना चाहिये, किन्तु धार्मिक विद्वानों की सभा के आधीन ही राज्यप्रबन्ध होना चाहिये।
(यकौसको.) इत्यादि मन्त्रों के शतपथप्रतिपादित अर्थों से महीधर आदि अल्पज्ञ लोगों के बनाये हुए अर्थों का अत्यन्त विरोध है।।३–४।।

महर्षि दयानन्दजी महाराज तथा आर्य समाज को धर्म विरोधी व नास्तिक कहकर गालि प्रदान करने वाले अयि कथित सनातनी भाइयो अथवा अपने को वेदज्ञ मानने वालो। कहो! अपने हृदय पर हाथ रखकर अपनी माता, पत्नि, बहिन वा पुत्री से पूछकर कहो– वेद का विरोधी महीधर है वा दयानन्द? कुछ तो लाज करो! कहीं सिर छुपाने का स्थान भी बचा है, क्या?

(१२) गोहत्या, मांसाहार एवं विषयलम्पटता पर आर्ष वैदिक विचार–

वैदिक उपासना पद्धति, जो महर्षि पतंजलि के योग के नाम से विश्व विख्यात है, उसमें ईश्वरोपासना के अष्ट सोपान बताये हैं। जिनमें प्रथम सोपान यम है। महर्षि पतंजलि यम के पांच भाग करते हैं– १. अहिंसा, २. सत्य, ३. अस्तेय, ४. ब्रह्मचर्य, ५. अपरिग्रह।

अहिंसा को शेष चार यमों का मूल कहा है। इसका अर्थ है प्राणिमात्र के प्रति निर्वैरता अर्थात् सबसे प्रीति करना। केवल न्याय हेतु राजा दोषी को दण्ड दे सकता है अथवा आत्मरक्षार्थ किसी दुष्ट पर चोट करना हिंसा की कोटि में नहीं माना जा सकता। जब वेद कहता है–

"मित्रस्याऽहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे" (यजु. ३६.१८)
"मा हिँ्सी स्तन्वा प्रजाः" (यजु. १२.३२)

अर्थात् मैं सब प्राणियों को मित्र की भाँति देखता हूँ। इस शरीर से प्राणियों को मत मार। (**यजु**. १.१) में गाय को सर्वथा अवध्या कहा है तथा इन मन्त्रों में सभी प्राणियों की हिंसा का निषेध है। जिस मनुस्मृति में मांसाहारादि दोषों का प्रक्षेप किया है, वस्तुतः वे धूर्तों की देन है। भगवान् मनु तो मांसाहार में आठ पापी मानते हैं।

अनुमन्ता विशसिता निहन्ता क्रयविक्रयी।
संस्कर्ता चोपहर्ता च खादकश्चेति घातकाः।।
(मनु. ५.५१)

अर्थात् मांसाहार की अनुमति देने वाला, मांस काटने वाला, पशु मारने वाला, खरीदने व बेचने वाला, पकाने, परोसने व खाने वाला ये आठ घोर पापी हैं।

इतना ही नहीं इसी अध्याय के श्लोक १२३ में रक्त से अपवित्र पात्र को किसी भी प्रकार शुद्ध न किया जा सकने योग्य लिखा है, तब ऐसे भगवान् मनु एवं उनके अनुसार वेदानुमोदित विधानों के संरक्षक क्षत्रिय लोग भला कैसे मांसाहार कर सकते थे? वस्तुतः आर्य वर्ण (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र) के वे ही पात्र होते थे, जो मांसाहार, मदिरापान, दुराचारादि दोषों से दूर रहते थे। जो इन दोषों में लिप्त रहते थे, उन्हें अनार्य वा दस्यु की श्रेणी में रखा जाता था। ब्रह्मचर्य पालन भी आर्यों (वैदिक मानवों) का एक महाव्रत होता था। राजकुमार श्री लक्ष्मण जी अपने बड़े भाई भगवान् श्रीराम की पत्नी भगवती सीता की माता के समान सेवा की परन्तु उनका चेहरा भी भली प्रकार नहीं देखा। वानरश्रेष्ठ श्री सुग्रीव के द्वारा सीताजी के आकाश मार्ग से आभूषण देखकर श्री लक्ष्मण जी ने श्रीराम जी से कहा था-

नाऽहं जानामि केयूरे नाऽहं जानामि कुण्डले।
नूपुरे त्वभिजानामि नित्यं पादाभिवन्दनात्।।
(वा. रामायण किष्किन्धाकाण्ड सर्ग ६.२२-२३)

अर्थात् हे भ्राता! मैं माता सीता के बाजूबन्द तथा कुण्डलों को पहचान नहीं सकता, क्योंकि मैंने उनका मुख ध्यान से कभी देखा ही नहीं। मैं तो केवल उनके पैरों के नूपुरों को जानता हूँ क्योंकि प्रतिदिन मैं उनके चरणों की वन्दना करता था।

द्वापर काल में पाण्डव श्री अर्जुन जब इन्द्रलोक में जाते हैं, तो अप्सरा उर्वशी उनकी परीक्षा लेने हेतु उनसे विवाह का प्रस्ताव रखती है, तो श्री अर्जुन उत्तर देते हैं–

यथा कुन्ती च माद्री च शची चैव ममानघे।
तथा च वंशजननी त्वं हि मेऽद्य गरीयसी।।

(महाभारत वनपर्वणि इन्द्रलोकाभिगमनपर्व अ. ४६ श्लोक ४६)

अर्थात् हे देवी! आप मेरे लिए माता कुन्ती, माता माद्री एवं मातृतुल्या शचि के समान पूज्य हैं अर्थात् आप मेरे लिए माता समान हैं।

महान् जितेन्द्रिय हमारे देव व ऋषिगण

प्यारे पाठकगण!

मध्यकाल, जो अत्यन्त भ्रष्ट हो गया था, उस काल में भी महाराणाप्रताप, छत्रपति शिवाजी एवं वीर दुर्गादास जैसे महान् जितेन्द्रियों की कथायें प्रसिद्ध हैं। तब परमपिता परमात्मा के सतत साक्षात्कृतधर्मा, महान् तपस्वी, वीतराग पूज्य महर्षियों, सत्यधर्म के मूर्तिमान् स्वरूप देवों में दुराचार आदि की कल्पना भी कैसे सम्भव है? वास्तविकता यह है कि देव अत्यन्त विद्वान्, सत्यवादी व पूर्ण जितेन्द्रिय हुआ करते थे। 'विद्वांसो वै देवाः', 'सत्यमया उ देवाः' ये महर्षि याज्ञवल्क्य के प्रमाणों को हम स्वीकार करते हैं। अन्यत्र महर्षि व्यास का भी कथन है–

एतेन ब्रह्मचर्येण देवा देवत्वमाप्नुपवन्। ऋषयश्च महाभागा ब्रह्मलोकं मनीषिणः।।२०।। गन्धर्वाणामनेनैव रूपमप्सरसामभूत्।।२१।।

(महाभारत उद्योगपर्वणि सनत्सुजात पर्व अ.४४)

अर्थात् इस ब्रह्मचर्य के पालन से ही देवताओं ने देवत्व प्राप्त किया और महान् सौभाग्यशाली मनीषी ऋषियों ने ब्रह्मलोक प्राप्त किया।।२०।। इसी ब्रह्मचर्य के प्रभाव से गन्धर्वों और अप्सराओं को दिव्य रूप प्राप्त हुआ।।२१।। हम मानते हैं और जो यथार्थ भी है कि वेदभाष्यकारों, ब्राह्मणग्रन्थों के भाष्यकारों वा प्रक्षेपकों, मनुस्मृति, वा. रामायण, महाभारत आदि आर्ष ग्रन्थों में प्रक्षेप करने वालों एवं भगवान् व्यास जी जैसे पवित्रात्मा तपोनिष्ठ के नाम पर अपनी कुबुद्धि से कथित अठारह पुराण एवं उपपुराणों की रचना करने वालों की कामी, हिंसक, द्वेषी प्रवृत्ति ने प्यारे आर्य्यावर्त्त देश के स्वर्णिम इतिहास को कलंकित करने का अक्षम्य अपराध किया है। **जिस देश में श्रीराम-श्रीभरत जैसे त्यागी अयोध्या के चक्रवर्ती राज्य को फुटबॉल बनाकर एक दूसरे की ओर फैंक रहे थे, उसी समय महर्षि वसिष्ठ व महर्षि विश्वामित्र एक गाय को लेकर घोर युद्ध करें वा ब्रह्मा-विष्णु-महेश तीनों द्वेषी बन लड़ें, ऐसी दुष्ट कल्पना कोई घोर पापी ही कर सकता है।**

इस तुलनात्मक विवरण रखने के पश्चात् मैं अपने बन्धुओं से कहना चाहूँगा कि अयि स्वयं को सनातनधर्मी वा राष्ट्रभक्त मानने वालो! आप क्यों इन धूर्तों की लीला अर्थात् दुष्ट प्रक्षेपों को प्रमाण मानकर भी अपने को सनातनधर्मी तथा ऋषि, देवों का वंशज वा भक्त मानते हो? सभी पापों की प्रेरणा करने वाले कथित पुराणों को भगवत्पाद महर्षि वेदव्यास जी की रचना मानकर उन महर्षि को भी क्यों अपमानित करते हो? क्यों इन भागवतादि दुष्ट पुराणों की कथायें करवा कर अपना समय व धन नष्ट करते और योगेश्वर कृष्णादि महापुरुषों को क्यों अपमानित करते हो? क्यों आप विधर्मियों के प्रहारों को आमान्त्रित करते हो? जनसाधारण तो इन पुराणों को पढ़ता नहीं परन्तु भागवत आदि पुराणों की कथा से प्रभूत धन व प्रतिष्ठा पाने वाले कथावाचको! क्या इन पापों को पढ़ने में आपको परमात्मा का किंचिद भी भय नहीं होता? क्या स्वार्थ में इतने अंधे हो गये हो कि धर्म व इतिहास को मिटाने लगे हो। मेरे पथभ्रष्ट परन्तु आत्मीय बन्धुओ! क्या आपको स्मरण है कि पिछले दिनों अपने देश के सर्वोच्च न्यायालय ने किसी भी विवाहित वा अविवाहित महिला को बिना विवाह किये किसी भी

पुरुष के साथ स्वेच्छापूर्वक रहने की वैधता प्रदान की है। न्यायालय ने इसे भारतीय सनातन संस्कृति व धर्म के अनुकूल बताया है। इसके लिये उसने राधा व कृष्ण के साथ रहने का उदाहरण दिया है। शोक! महाशोक!! 'राधारमण हरि गोविन्द जय जय' इस पापी गीत पर झूमने वाले मेरे भटकते बन्धुओ! क्या आप अपनी पत्नि, बेटी, वधू, बहिन आदि को लम्पट परपुरुषों के साथ दुराचार करने की छूट देने का पाप करने को सनातन धर्म कहोगे? क्या सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का स्वागत करोगे? यदि नहीं, तब महान् जितेन्द्रिय भगवान् श्रीकृष्ण महाराज को 'राधारमण' कहने का घोर पाप क्यों करते हो? क्या उनके सम्बन्धों को पवित्र बताने का कुतर्क देकर हमें सन्तुष्ट करना चाहोगे? यदि हाँ, तो अपना कथित धर्मग्रन्थ **ब्रह्मवैवर्त्त** पुराण पढ़कर देखो अथवा हमारे द्वारा पूर्व में उद्धृत प्रमाणों को ही पढ़ लो। **अपने धर्म व संस्कृति पर गर्व करने वालो! जरा सोचो कि आज न्यायालय इस दुराचार को वैध कहता है। ऐसे पापी कानून भी बनते हैं। कल गोमांस खाने खिलाने को वैदिक सनातन संस्कृति का भाग बताने के उदाहरण पुराणों के आधार पर न्यायालय देगा। वैश्यालयों को वैदिक संस्कृति का आदर्श बतायेगा। कौन सा ऐसा पाप बचा है, जो पापी पुराणों ने देवों वा ऋषि महर्षियों में आरोपित नहीं किया है? जरा सोचो! इस पापी पुराणों ने संसार में आपके महापुरुषों को मुख दिखाने योग्य भी छोड़ा है, क्या?** जब हुसैन चित्रकार आपके किसी कल्पित देवी देवता का नग्न चित्र बना दे, तो आप फतवा जारी करते हैं परन्तु जब आप पूजा के नाम पर हर मन्दिर में महादेव शिव एवं भगवती उमा को नग्न करके ही पूजा करते हो, खजुराहों में अश्लील मूर्तियों को अपना गौरव मानते हो, तब आपको इन पुराणकारों पर क्रोध नहीं आता? मेरे भ्रमित बन्धुओ! क्या आप अपने कथित सनातनी वेदभाष्यकर महीधर का अश्लील यौन प्रदर्शनयुक्त बीभत्स यज्ञों को अपने परिवार में करने का कथित पाप करने का हृदय में रखते हो? **अहो! सारा विश्व आपके वेदों, ऋषियों, देवों की भर्त्सना कर रहा है। अपने देश के इतिहास की पुस्तकों में भी इसकी निन्दा भरी पड़ी है। अनेक विघटनकारी संगठन इन दोषों के कारण ही उत्पन्न हो एवं फल-फूल रहे हैं, देश की सांस्कृतिक धरोहर नष्ट हो चुकी है। तब भी क्या आप अपने हठ को छोड़ना नहीं चाहोगे?** आप अपने मठ, मन्दिरों वा गृहों में भले ही 'हरे राम हरे राम', 'हरे कृष्ण हरे कृष्ण', गाते रहो परन्तु आपके देश के

इतिहास में इनका नाम तक नहीं है। पूर्व में केन्द्र की काँग्रेस सरकार ने सर्वोच्च न्यायालय में शपथ देकर कहा था कि श्रीराम का जन्म हुआ ही नहीं। देश के कथित बुद्धिजीवी इस इतिहास को मानते ही नहीं। बोलो! मेरे भाई! आप 'जय श्रीराम' वा 'जय श्रीकृष्ण' के नाम से अभिवादन करने से ही सन्तुष्ट होते रहे परन्तु देश के इतिहास को बचाने की चिन्ता आपको नहीं। आप राम मन्दिर के नाम से राजनीति तो करते रहे परन्तु रामायण पढ़ कर देखी ही नहीं। कौन उत्तरदायी है, श्रीरामादि महापुरुषों को मिटाने का। जरा बुद्धि से सोचो! **सूर्य को मुख में रखने वाला, समुद्र को पी जाने वाला, पृथ्वी को लेकर भागने वाला अपनी कल्पना वा मूर्खतापूर्ण चमत्कारी कहानियों में तो सम्भव है, परन्तु इन चमत्कारी गप्पों से इतिहास नहीं बनते। वस्तुतः ये गप्पें ही उत्तरदायी हैं, अपने प्यारे स्वर्णिम इतिहास को मिटाने के लिए।** परन्तु पता नहीं आपकी आँखें कब खुलेंगी? आओ मेरे भाई! अपने महान् पूर्वजों को अपने मिथ्या चमत्कारों, अलंकारों के पत्थरों के नीचे से निकालो और उनका दिव्य एवं ऐतिहासिक स्वरूप विश्व के सम्मुख सगर्व प्रस्तुत करो। बड़े शोक की बात है कि आपको महर्षि दयानन्दजी का मन्तव्य अच्छा नहीं लगता, भले ही अपना सम्पूर्ण इतिहास मिट जाये। यह कैसी धार्मिकता व देशभक्ति है? आपने गाय नामक सर्वोत्तम व सर्वोपकारी पशु को अलौकिक व अप्रमेय बताकर तथा उसके अन्दर मिथ्या पौराणिक ३३ करोड़ देवी देवताओं (क्या आप ३३ करोड़ देवी देवताओं को कभी गिना सकेंगे?) का वास बताकर इसे साम्प्रदायिक रंग देने का अक्षम्य अपराध किया है। क्या आपने कभी सोचा कि इसे चमत्कारी व साम्प्रदायिक रंग देने से आपसे इतर सम्प्रदाय वाले इसके विरोधी वा इससे तटस्थ होते जा रहे है वा चले गये हैं। क्या यह इस्लामी, ईसाई, जैन, बौद्ध आदि के लिए उपकारी नहीं है? क्या उनके भी पैगम्बर, तीर्थंकर आदि भी गाय के अन्दर हैं? **शोक है तेतीस करोड़ कथित शक्तिशाली देवी देवता जिसके रक्षक रहे, पदे-२ फलित ज्योतिष को देखकर जो काम करती रही, वही आर्य (हिन्दू) जाति विदेशियों से मार खाती रही और एक भी देवता इसे बचाने तो क्या आता बल्कि अपने मंदिरों को भी बचाने नहीं आया। यह भी आश्चर्य कि तेतीस करोड़ देवता वाली गाय की दुर्दशा इस कथित धार्मिक देश भारत में ही सबसे अधिक हो रही हैं।** कोई-२ कथाकार तो गाय को ब्रह्माण्ड में सबसे बड़ा बताकर भोली अंध जनता को भ्रमित कर रहे हैं। वे कहते

हैं कि ब्रह्मा, विष्णु, शिव आदि के गोबर से आंगन की शुद्धि नहीं होती, जबकि गाय के गोबर से होती है, इस कारण गाय ऋषियों, देवों, वेदों आदि सबसे बड़ी है। ऐसी मूर्खतापूर्ण बातों से गाय का भला कैसे होगा? मैं पूछता हूँ कि इस तर्क से तो देव, ऋषि, मुनि सभी तो भैंस, भेड़, गधे, घोड़े तथा सूअर आदि से भी नीचे होंगे? भला गोबर भी योग्यता की कसौटी होता है? भला इन गोबरगणेशों की बुद्धि और क्या सोचेगी? काश! ये भाई गाय के अर्थशास्त्र को विश्व के सम्मुख प्रस्तुत करें, गोघृत के यज्ञविज्ञान को साक्षात् करें, तो गोहत्याबन्दी अवश्य हो जाये परन्तु इन ठगों को तो अपनी दुकानें जो चलानी हैं। जनता तो अन्धकार में डूबी ही है।

अयि! मेरे कथित सनातनी परन्तु वास्तव में पौराणिक मतावलम्बियो! आप मानव शरीरधारी न मानकर ब्रह्मा, विष्णु व महादेव जैसे पूज्य पुरुषों को परमात्मा मानकर उनके चित्रों को पूजने में व्यस्त रहे। साथ ही उन्हें दुराचारी, छली, कपटी व क्रूर भी बताते रहे। परन्तु आपने भली प्रकार ये कथित पुराण भी नहीं पढ़े, जिनमें अनेक बातें वेदों के अनुकूल भी हैं। देखिये! वहाँ इन देवों को मानव शरीरधारी व कर्म फल भोक्ता कहा है-

किं विष्णुः किं शिवो ब्रह्मा मघवा किं बृहस्पतिः।
देहवान् प्रभवत्येव विकारैः संयुतस्तदा।
(देवीभागवत स्कं. ४ अ. १३ श्लोक १५)

अर्थात् विष्णु, शिव, ब्रह्मा, इन्द्र वा बृहस्पति, जो भी देहधारी होते हैं, वे विकारग्रस्त होते ही हैं।

देवैर्मनुष्यैरसुरैर्यक्षगन्धर्वकिन्नरैः।
कर्मैव हि महाराज देहारम्भस्य कारणम्।।
(देवीभागवत स्कं.६ अ. १० श्लोक १६)

अर्थात् देवता हो या मनुष्य, असुर हो या यक्ष, गन्धर्व हो या किन्नर पूर्व में किये धर्माधर्म का फल अवश्य भोगना पड़ता है।

आप महर्षि पतंजलि प्रोक्त अष्टांग योग को त्याग कर मूर्तिपूजा जैसी सबसे बड़ी आध्यात्मिक बुराई को ही ईश्वर उपासना कह कर सम्पूर्ण आर्य (हिन्दू) जाति को बंधक बनाये बैठे हैं, उधर आपका जैसा वैसा श्रीमद् भागवत पुराण भी वेदोक्त सत्य बात को भी कह ही बैठा है, परन्तु उसे आप नहीं मानते। वह सत्य बात है-

यस्यात्मबुद्धिः कुणपे त्रिधातुके
स्वधीः कलत्रादिषु भौम इज्यधीः।
यत्तीर्थबुद्धिः सलिले न कर्हिचि
ज्जनेष्वभिज्ञेषु स एव गोखरः।।

(श्रीमद्भागवत पुराण स्कंध १० अ. ८४ श्लोक १३)

अर्थात् जो मनुष्य वात-पित्त-कफ इन तीन धातुओं से बने हुये शवतुल्य शरीरादि को ही आत्मा-अपना 'मैं', स्त्री-पुत्रादि को ही अपना और मिट्टी, पत्थर, काष्ठ आदि पार्थिव विकारों को ही इष्टदेव मानता है। और जो केवल जल को ही तीर्थ समझता है, ज्ञानी महापुरुषों को नहीं, वह मनुष्य होने पर भी पशुओं में भी नीच गधा है।

क्या अपने इन पुराणों की ये बातें आपको नहीं रुचतीं। आप विशेषकर कर्मकाण्डोपजीवी महानुभाव विचारते होंगे कि मूर्तिपूजा व अवतारवाद से ही तो आपकी दुकानें चल रही हैं। हिन्दुओं में जिसकी इच्छा हो, वह स्वयं को अवतार घोषित करके अपनी पूजा करवा सकता है, जिससे मान प्रतिष्ठा, धन सब मिल सकता है। इसी के आधार पर ही तो आज अनेक मूर्ख गुरु व जातीय भगवान् बन रहे हैं, जिससे आर्य हिन्दू जाति खण्ड-२ हो रही है और आपको इस जाति को नष्ट करके भी धन व यश कमाना है, तब आप इन स्वार्थविरोधी वेदानुकूल बातों को क्यों मानेंगे?

अन्त में, मैं समस्त आर्य (हिन्दू) जाति, जो स्वयं को सनातन धर्मी मानती है, का ध्यान उन सम्प्रदायों जैसे ब्रह्माकुमारी मत आदि व कुछ कथित विद्वानों, धर्माचार्यों की ओर आकृष्ट करना चाहूँगा, जो भारतीय ऐतिहासिक घटनाओं एवं महापुरुषों को काल्पनिक बताकर इन प्रसंगों की मनोहारी आध्यात्मिक व वैज्ञानिक मिथ्या व्याख्या करते हैं।

ऐसे लोग, जैसे ब्रह्माकुमारी मत वाले शिव, ब्रह्मा, कृष्ण जैसे महापुरुषों का नाम लेकर भी इनके इतिहास को नहीं मानते। रामायण वा महाभारत को ऐतिहासिक नहीं मानते। शोक है कि जो आर्य जाति इन ऐतिहासिक महाकाव्यों से सदैव प्रेरणा लेकर जीवित रही, जो हमारी सबसे बड़ी ऐतिहासिक धरोहर है, उस धरोहर को नष्ट करने का प्रबल पुरुषार्थ जहाँ पाश्चात्य कथित विद्वान् करते रहे हैं और ऐसा करने के पीछे भारत को मिटाना ही लक्ष्य है। वे जानते व मानते हैं कि यदि किसी देश को नष्ट करना है, तो उसके इतिहास व संस्कृति को नष्ट करना चाहिए। जरा विचारें कि वे तो भारत के खुले शत्रु हैं परन्तु इन मत-पन्थों, जो भारतीय इतिहास को मिटाकर धर्म की आड़ में घर-२ में घुसपैठ कर रहे हैं, को भारत का शत्रु कैसे नहीं माना जाय? यह दुःखद आश्चर्य है कि स्वयं को भारतीयता का प्रबल पोषक मानने वाले अनेक सुपठित नादान महानुभाव पाश्चात्य इतिहासकारों को तो शत्रु मानते हैं परन्तु भारतीय इतिहास व धर्म के इन गुप्त शत्रुओं के प्रति नत मस्तक होते हैं। पता नहीं मेरी यह अभागी मातृभूमि और यह प्यारी आर्य (हिन्दू) जाति कब तक ऐसे षड्यन्त्रों का शिकार होती रहेगी? कब इस मूर्खा जाति को सद्बुद्धि आयेगी?

अयि अभागे कथित सनातनी पाठक गण! आपके समक्ष मैंने तुलनात्मक रूपेण दो मार्ग सुझाएं हैं। इनके बारे में आप ऊपर पढ़ ही चुके हैं। अब आप अपने आत्मा अर्थात् स्वयं से पूछो कि **बोलो! किधर जाओगे?** पिछले कुछ सहस्र वर्षों से चले आए विनाश व दुराचार के मार्ग पर अथवा महर्षि दयानन्द जी महाराज के बताये उस मार्ग पर, जो सृष्टि के आदि काल से महाभारत काल पर्यन्त चलता रहा और हमारा प्यारा देश इसी के कारण जगद्गुरु व चक्रवर्ती समृद्धिशाली राष्ट्र रहा। आपको चुनना है कि किधर जाना है? उत्थान का सुमार्ग वा पतन का कुमार्ग? बोलो! प्यारे बोलो! किधर जाओगे?

(३) इस्लामी बन्धुओं से निवेदन

अब हम अपने उन गुमराह बन्धुओं से कुछ निवेदन करेंगे, जो स्वयं को शान्ति अमन चैन के दूत तथा एक खुदा की पूजा करने की बात करते हैं। जो कहते हैं कि अब से लगभग सवा चौदह सौ वर्ष पूर्व अरब में हजरत मुहम्मद साहब को खुदा ने अपना पैगम्बर बना कर भेजा और उन्हें ४० वर्ष की अवस्था में अपना पवित्र पैगाम दिया। इसी पैगाम का नाम 'कुरान मजीद' है। अब हम कुछ बिन्दुओं पर विचार करेंगे।

(क) कुरान मजीद की आवश्यकता क्यों?

कुरान में लिखा है- ''(पहले तो सब) लोगों का एक ही मजहब था। (लेकिन वे आपस में इख्तिलाफ करने लगे) तो खुदा ने (उनकी तरफ) बशारत देने वाले और डर सुनाने वाले पैगम्बर भेजे और उन पर सच्चाई के साथ किताबें नाजिल कीं।''

(सूरः बकरः २ आदत. २१३)

कुरान में विभिन्न पैगम्बरों(नबियों) की तुलना में कहा है-

''हम इन पैगम्बरों में से किसी में कुछ फर्क नहीं करते और हम उसी एक खुदा के फरमांबदार है।''

(सूरः आले इम्रान ३। आ. ८४)

''मोमिनो! खुदा पर, उस के रसूल पर और जो किताब उस ने अपने (आखिरी) पैगम्बर पर नाजिल की है और जो किताबें इस से पहिले नाजिल की थीं, सब पर ईमान लाओ।''

(सूरः निसा ४। आ. १३६)

''(ऐ मुहम्मद) हम ने तुम्हारी तरफ उसी तरह वह्य भेजी है, जिस तरह नूह और उन से पिछले पैगम्बरों की तरफ भेजी थी और इब्राहीम और ईस्माईल और इस्हाक और याकूब और याकूब की औलाद

और ईसा और अय्यूब और यूनुस और हारून और सुलेमान की तरफ भी हम ने वह्य भेजी थी और दाऊद को हमने जबूर भी इनायत की थी। और बहुत से पैगम्बर हैं, जिनके हालात हम तुम से पहले बयान कर चुके हैं और बहुत से पैगम्बर हैं, जिनके हालात तुमसे बयान नहीं किये।''

(सूरः निसा ४। आ. १६३,१६४)

इन आयतों से प्रकट होता है कि हजरत मुहम्मद ने स्वयं के साथ-२ अनेक ऐसे लोगों को खुदा का पैगम्बर माना है, जो उनसे बहुत पूर्व आते रहे और उन्हें खुदा वह ज्ञान देता रहा जो, अपने-२ समय में विभिन्न पुस्तकों के रूप में सामने आया। इन पैगम्बरों में एक नाम है 'नूह'। वैदिक सम्पत्ति के यशस्वी लेखक पं. रघुनन्दन जी शर्मा के अनुसार 'नूह' भारतीय नाम 'मनु' का ही वाचक है। डॉ. सुरेन्द्रकुमारजी (मनुस्मृति भाष्यकार) ने 'वैदिक आख्यानों के वैदिक स्वरूप' में पंचम अध्याय में शतपथ ब्रा., महाभारत, भागवत पुराणादि में मनु का नौका पार उतरने की कथा का वर्णन किया है। डॉ. सुरेन्द्रकुमार जी ने भविष्य पुराण में मनु के स्थान पर 'न्यूह' है, ऐसा लिखा है। निश्चित ही यह 'न्यूह' ही 'नूह' के रूप में कुरान में आया है। कुरान में भी नूह की नौका पार उतरने की बात निम्न प्रकार है-

''हम ने नूह को और जो उनके साथ कश्ती में सवार थे, उनको तो बचा लिया और जिन लोगों ने हमारी आयतों को झुंठलाया था, उन्हें डुबो दिया। कुछ शक नहीं कि वे अन्धे लोग थे।''

(सूरः आराफ ७। आ. ६४)

इससे स्पष्ट है कि भारतीय आर्ष वा पौराणिक साहित्य की यह घटना कुरान के रचयिता हजरत मुहम्मद को ज्ञात थी। इन्हीं नूह को उन्होंने पैगम्बर कहा है। आर्ष विचारधारा 'नूह' अर्थात् 'मनु' को पैगम्बर नहीं मानती। वस्तुतः अवतारवाद तो वेदविरुद्ध पौराणिक कल्पना है। इस पौराणिक कल्पना ने इस आर्य (हिन्दू) जाति के विनाश की आधारशिला रखी है। पैगम्बर अर्थात् जिसे परमात्मा का ज्ञान मिलता है, वे भी सृष्टि के आदि में अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा ये चार ऋषि ही होते हैं। हां, मनु का स्मरण मुहम्मद साहब को इस कारण

हो, क्योंकि मनु संसार के प्रथम राजा थे और वे आद्य ब्रह्मा जी के पौत्र थे। इस कारण उन्हें पैगम्बर कहा हो। ब्रह्मा जी अग्नि आदि ऋषियों, जिन्हें एक प्रकार से पैगम्बर कहा जा सकता है, क्योंकि इन्हीं के हृदय में पवित्र वेदज्ञान प्रकाशित हुआ था। इन्होंने ब्रह्मा जी को पढ़ाया। मुहम्मद कहते हैं कि नूह से पूर्व भी पैगम्बर आये, इससे स्पष्ट है कि उन्हें ब्रह्मा, अग्नि आदि ऋषियों की भी कुछ कथा ज्ञात हो, जिनका नाम नहीं लिख पाये। आदम सम्भवतः महर्षि ब्रह्मा ही हो सकते हैं, क्योंकि विद्या की परम्परा वहीं से प्रारम्भ हुई और सम्भवतः वे संसार के प्रथम गृहस्थ भी थे। अब निम्न प्रश्न उभरते हैं-

(I) जब खुदा ने नूह (मनु) वा उससे पूर्व नबियों को अपना ज्ञान दिया, तो फिर समय-२ पर अन्य नबियों को भेजने की क्या आवश्यकता थी ? ऐसा प्रतीत होता है कि जैनों के तीर्थंकरों की कल्पना से पौराणिकों (कथित सनातनी विद्वानों) को चौबीस अवतारों की कल्पना सूझी और इसी कल्पना का कुछ ज्ञान मुहम्मद को भी था, जिससे उन्होंने नबियों की कल्पना की। हाँ सृष्टि के आदि में अवश्य ईश्वरीय ज्ञान के प्रकट होने और उसके निमित्त पवित्रात्माओं की अवधारणा अनिवार्य है परन्तु सदा ऐसा प्रतीत होता ही रहे, यह अनुचित है।

(II) कोई कहे जैसा कि कुरान में हमने उद्धृत किया कि मनुष्यों में परस्पर विवाद होने लगे अर्थात् अधर्म बढ़ने लगा, तब नवीन पैगम्बरों को भेजा जाता रहा। यह बात उचित नहीं। अधर्म बढ़ने पर महापुरुषों का जन्म होना तो उचित है परन्तु वे ईश्वर का कोई नया संदेश लायें, यह उचित नहीं, क्योंकि ईश्वर का सन्देश वा ज्ञान कभी न तो अपूर्ण होता है और न देशकाल परिस्थिति के अनुकूल परिवर्तनीय ही होता है। यदि ज्ञान परिवर्तनीय होवे, तो सभी ईश्वरीय पदार्थ जल, वायु आदि भी परिवर्तनीय क्यों न मानें? परन्तु यह सर्वविदित है कि ये अर्थात् इनके गुण, कर्म, स्वभाव आदि अपरिवर्तनीय ही रहते हैं। इस कारण जो ज्ञान नूह (मनु) से पूर्व (सर्वप्रथम) दिया गया था, उसी का प्रचार आने वाले नबी अर्थात् महापुरुष करें, यह तो मान्य है, परन्तु कुरान हर बार नया संदेश भेजने की बात करके कुरान को आखिरी पैगाम कहता है। ध्यान रहे कि मनुष्यों का ज्ञान अपूर्ण होने से संशोधनीय व परिवर्तनीय होता है परन्तु ईश्वर सर्वज्ञ होने से उसका ज्ञान सदैव

अपरिवर्तनीय रहता है, यदि कुरान का खुदा अज्ञानी मनुष्य है, तब परिवर्तन अवश्यम्भावी है। अब इस्लामी बन्धु विचारें कि उन्हें कैसा खुदा मान्य है?

(ख) वास्तविक कुरान क्या है?

कुरान मजीद में लिखा है- ''रोशन किताब की कसम''। ''और यह बड़ी किताब (यानी लौहे महफूज) में हमारे पास (लिखी हुई और) बड़ी फजीलत और हिक्मत वाली है।''

(सूरः जरूरुफ ४३। अ. १,३)

''रोशन किताब की कसम।'' (सूरः दुखान ४४। आ. १)

समीक्षा- यहाँ मुहम्मद साहब रोशन किताब की कसम खा रहे हैं। यह वाक्य कुरान मजीद में बार-२ आया है। इससे प्रकट होता है कि रोशन किताब कोई और है, जिसकी कसम वो खा रहे हैं। जब इस कुरान की आयतें पूरी उतरी ही नहीं, तब कुरान मजीद बनी ही नहीं, यह सिद्ध हुआ। तब उस कुरान की कसम स्वयं कुरान के रचयिता हजरत मुहम्मद कैसे खा सकते हैं? फिर बड़ी किताब से भी किसी अन्य किताब की ओर संकेत है, जो मुहम्मद साहब के पास गुप्त रूप से सुरक्षित थी परन्तु वे इसको यथार्थ रूप में समझते नहीं थे। इस कारण ही उन्हें कुरान लिखने की सूझी। परन्तु ऐसा करते-२ वे उस किताब की प्रशंसा करना वा उसके प्रचारक मनु आदि को नहीं भूल सके।

इस सुरक्षित किताब के विषय में मतान्ध बादशाह औरंगजेब के बड़े भाई दाराशिरोह ने कहा था कि यह गुप्त कुरानशरीफ और कुछ नहीं बल्कि वेद ही है। दाराशिकोह ने इस विषय में एक आयत को उद्धृत किया है, जिसका अर्थ उन्होंने दिया है-

''कुरानशरीफ एक पुस्तक है और वह पुस्तक गुप्त है। उसका ज्ञान उसी को होता है, जिसका हृदय पवित्र हो और वह पुस्तक संसार के पालनकर्त्ता ईश्वर की ओर से प्रकट हुई है।''

(देखें, वेदों का यथार्थ स्वरूप - पं. धर्मदेव विद्यामार्तण्ड पृ. ५२)

इस प्रकरण से स्पष्ट है कि प्रचलित कुरान वास्तविक ईश्वरीय पैगाम नहीं है बल्कि वास्तविक पैगाम तो वेद है, जो संसार का सबसे प्राचीन पुस्तक वा ज्ञान है। अरब देश के विद्वान् लावी, जो मुहम्मद साहब से लगभग २४०० वर्ष पूर्व पैदा हुये थे, ने कहा था–

''ऐ हिन्दुस्तान की धन्य भूमे! तू आदर करने योग्य है, क्योंकि तुझमें ही ईश्वर ने सत्य ज्ञान का प्रकाश किया है। ईश्वरीय ज्ञानरूप ये चारों पुस्तकें (वेद) हमारे मानसिक नेत्रों को किस आकर्षक और शीतल उषा की ज्योति देते हैं! परमेश्वर ने हिन्दुस्तान में अपने पैगम्बरों के हृदय में इन चारों (वेदों) का प्रकाश किया।

साम और यजुर् वे खजाने हैं, जिन्हें परमेश्वर ने दिया है। ऐ मेरे भाइयो! इनका तुम आदर करो, क्योंकि वे हमें मुक्ति का शुभ समाचार देते हैं।

इन चार में से शेष दो ऋक् और अतर (अथर्व) हमें विश्वभ्रातृत्व का पाठ पढ़ाते हैं।''

(देखें, वेदों का यथार्थ स्वरूप – पं. धर्मदेव विद्यामार्तण्ड पृ. ५०)

इन सब पर विचार करने से स्पष्ट है कि मुहम्मद साहब को इस लावी कवि के विचारों का पूरा ज्ञान था, इस कारण ही उन्होंने कुरान को गुप्त पुस्तक कहा। परन्तु उनके अनुयायियों ने उनके इस वचन का कभी आदर नहीं किया और वर्तमान कुरान को ही वास्तविक कुरान मानकर शेष सबको काफिरों के ग्रन्थ घोषित कर दिया।

(ग) हिंसा–दंगा–फसाद की प्रेरणा! काफिर कौन?

''अगर (वतन छोड़ने को) कुबूल न करे, तो उन को पकड़ लो और जहाँ पाओ, कत्ल कर दो और उन में से किसी को अपना साथी और मददगार न बनाओ।''

(सूरः निसा ४। आ. ८९)

‘‘ऐ नबी! मुसलमानों को जिहाद पर उभारो। अगर तुम में २० आदमी साबित कदम रहने वाले होंगे, तो दो सौ काफिरों पर गालिब रहेंगे।’’ (सूरः अन्फाल ८। आ. ६५)

‘‘जब तुम काफिरों से भिड़ जाओ, तो उन की गरदनें उड़ा दो।’’
(सूरः मुहम्मद ४७। आ. ४)

इन सब आयतों को पढ़कर मुसलमान मानते रहे हैं कि कुरान की आयतों को अस्वीकार करने वालों पर अत्याचार का यह खुला आदेश है। और मेरे पास उपलब्ध कुरान के हिन्दी अनुवाद के अनुसार वास्तव में ऐसी आयतों को गलत रूप में आदेश मान कर इस्लामी आक्रान्ताओं ने अपनी धर्मान्धता के वशीभूत होकर इस्लाम के उदय से लेकर अब तक भीषण रक्तपात किया है। आज आई. एस., अलकायदा, तालिबान, लश्कर जैसे इस्लामी आतंकवादी संगठन इन्हीं आयतों के मिथ्या अर्थ के अनुसार विश्व में आतंकवाद चला रहे हैं। यद्यपि मनुस्मृति में वेदनिन्दक को साधु समाज से बहिष्कृत करने का विधान है परन्तु उन पर ऐसा क्रूर अत्याचार करने का विधान नहीं है। वेदादि शास्त्रों में दुष्ट, अत्याचारी, डाकू को तो मारने का विधान है, जो आत्मरक्षार्थ वा न्यायार्थ अनिवार्य है परन्तु ईश्वर को मानने वा न मानने के नाम पर दंगा फसाद वैदिक धर्म में कदापि स्वीकार्य नहीं है। मैं यह भी अनुभव करता हूँ कि कुरान में काफिर की परिभाषा दी गयी है, उससे भी प्रायः मुस्लिम विद्वान् अनभिज्ञ प्रतीत होते हैं। जब कुरानकार यह भी कहता है कि सभी नबी समान होते हैं और उनकी किताबों में कोई भेद नहीं होता, तो वे उनके स्वयं के अनुसार सर्वप्रथम ज्ञान वेद क्यों नहीं मानने को उद्यत होते? क्यों वे अपने स्वयं के मतानुसार अन्तिम सन्देश कुरान के मानने वालों के अतिरिक्त अन्य सब को काफिर कहते हैं? क्या यह कुरान के विरुद्ध नहीं है? जब कुरान की आयतों पर ईमान नहीं लाते, वे काफिर हैं, तो इसका तात्पर्य क्या यह नहीं होना चाहिये कि जो ईश्वरीय ज्ञान पर ईमान नहीं लाते, उन्हें मुहम्मद ने काफिर कहा है। और ईश्वरीय ज्ञान अन्तिम सन्देश कुरान के अनुसार नूह (मनु) से पूर्व प्रारम्भ होता है। तब आर्य (हिन्दू) माने जाने वाले काफिर कैसे हो गये? अब कुरान के जिहाद का यथार्थ रूप भी देखें– ‘‘जो लोग तुमसे लड़ते हैं, तुम भी खुदा की राह में उनसे लड़ो, मगर ज्यादती न करना कि खुदा ज्यादती करने करने वालों को

दोस्त नहीं रखता।।१९०।। और उनको जहाँ पाओ कत्ल कर दो और जहाँ से उन्होंने तुमको निकाला है (यानि मक्के से) वहाँ तुम भी उनको निकाल दो........और जब तक वे तुमसे मस्जिदे मोहतरम (यानि खाना काबा) के पास न लड़ें, तुम भी वहाँ, उनसे न लड़ना। हाँ, अगर वे तुमसे लड़ें, तो तुम उनको कत्ल कर डालो। काफिरों की यही सजा है।।१९१।। और अगर वे रुक जायें, तो खुदा बख्शने वाला (और) रहम करने वाला है''।।१९२।। (सूरः बकर २)

''दीने इस्लाम में जबरदस्ती नहीं हैं''।।२५६।। (सूरः बकर २)

''अगर ये लोग इस्लाम ले आयें तो बेशक हिदायत पा लें और अगर (तुम्हारा कहा) न मानें, तो तुम्हारा काम सिर्फ खुदा का पैगाम पहुँचा देना है। और खुदा (अपने) बन्दों को देख रहा है।''।।२०।।
(सूरः आले इम्रान-३)

यहां पाठक ध्यान दें। कुरान के अनुसार आम मुसलमान को ही नहीं अपितु हजरत मुहम्मद को भी किसी गैर मुस्लिम के प्रति जोर जबरदस्ती मुसलमान बनाने की अनुमति नहीं है। इससे और भी स्पष्ट रूप में देखें-

''(ऐ पैगम्बर) हमने तुमको उन पर निगहबान मुकर्रर नहीं किया और न तुम उनके दारोगा हो''।।१०७।। (सूरः अनूआम ६)

''तुम्हारा परवरदिगार तुम को खूब जानता है।..........हमने तुमको उन पर दारोगा (बनाकर) नहीं भेजा।''।।५४।।
(सूरः बनी इस्राईल १७)

तब हजरत मुहम्मद को खुदा का क्या निर्देश था-

''और अगर ये लोग मुंह मोड़ें, तो (ऐ पैगम्बर!) तुम्हारा काम सिर्फ खोलकर सुना देना है।''।।८२।। (सूरः नहल १६)

मेरे इस्लामी बन्धुओ! इन आयतों से आपके जिहाद का स्वरूप ही बदल जाता है। यहाँ स्पष्ट है कि कुरान गैर इस्लामी लोगों को

जबरदस्ती मुसलमान बनाने तथा न बनने पर उन्हें कत्ल की तो कदापि आज्ञा नहीं देता बल्कि यह ऐसा करने वालों को यहां तक कि हजरत मुहम्मद को भी सचेत करता है कि ऐसा नहीं करना। यह ग्रन्थ केवल मक्का-मदीना क्षेत्र के उन लोगों से युद्ध की बात करता है, जो इस्लाम के अनुयायियों, विशेषकर उस समय हजरत मुहम्मद के अनुयायियों से युद्धरत थे। जो लोग मुहम्मद साहब को वा उनके अनुयायियों को मक्का मदीना क्षेत्र से बाहर निकालने के लिये युद्धरत थे, केवल युद्ध करके उनको वहाँ से निकालने का ही नाम जिहाद था। उसमें भी यह स्पष्ट कहा है कि यदि विरोधी युद्ध न करें, रुक जायें, तो हजरत मुहम्मद तथा उनके अनुयायियों को रोकते हुये कहा कि खुदा उन पर रहम करने वाला है। कुरान स्पष्ट करता है कि हजरत मुहम्मद का भी केवल यह अधिकार वा कर्त्तव्य था कि वे गैर मुस्लिमों (जिन्हें जगह-२ काफिर कहा है) को कुरान की आयतों का व्याख्यान करें और वे गैर मुस्लिम उनकी बात नहीं सुनें, तो उनका निर्णय खुदा ही करेगा। स्पष्ट कहा कि मुहम्मद साहब न तो खुदा ने पर्यवेक्षक बना कर भेजे थे कि वे निगरानी रखें कि कौन कुरान की आयतों पर ईमान लाता है और कौन नहीं? और न उन्हें खुदा ने दण्ड देने वाला दारोगा ही बनाया कि इस्लाम स्वीकार न करने वालों को दण्ड दें।

मेरे भाइयो! जरा सोचिये कि जब मुहम्मद साहब को भी यह अधिकार नहीं कि किसी को जबरदस्ती इस्लामी बनायें और न बनने वालों को दण्ड दे सकें, तब आम मुसलमान को यह अधिकार किसने दिया कि संसार में जिहाद के नाम पर सैकड़ों वर्षों से खून बहाया जाता रहा। तैमूर, बाबर, अकबर, औरंगजेब से लेकर आज तक सारी दुनियां में इस्लाम स्वीकार न करने वालों के रक्त से यह धरती स्नान करती रही है। इन आतताइयों ने भारत में कितने हिन्दू-मन्दिरों को तोड़कर उनके ऊपर मस्जिद बनायी हैं। आज भी आतातायी बाबर के नाम से मस्जिद के लिये मुसलमान संघर्षरत हैं तथा श्रीराम जन्म भूमि पर दावा करते हैं! क्या यह कुरान की उपर्युक्त आयतों के अनुकूल है? और आज भी आतंकवाद कुरान के इस जिहाद के यथार्थ स्वरूप को न समझने के कारण संसार में खूनी खेल रहा है। वास्तव में तो कुरान केवल अरब क्षेत्र में ही इस्लाम के प्रचार की आज्ञा देता है, वह भी शान्तिपूर्वक। तब संसार के अन्य देशों के मुसलमान भाइयों को

चाहिये कि कुरान की इस शिक्षा को मानकर इस्लाम का प्रचार अरब देशों के अतिरिक्त तुरन्त बन्द करके स्वयं भी उसी अपने पवित्र क्षेत्र मक्का-मदीना के आस पास ही चले जायें। इस्लाम के नाम पर वर्तमान प्रचलित मिथ्या धारणावश रक्तपात करके स्वयं कुरान विरोधी कार्य करके काफिर न बनें। अरब जगत् के बाहर किसी भी देश में किसी को जबरदस्ती इस्लामी बनाकर राष्ट्र विरोधी कार्य करना कुरान के आदेश की हत्या करने के समान क्रूर कार्य है। संसार के मुस्लिम बन्धु इस तथ्य पर विचार करके इस दृष्टि से क्या सच्चे मुसलमान बनने का साहस करेंगे? अगर कोई यह कहे कि मैंने (लेखक ने) आयतों के अर्थ गलत दिये हैं, तो उनसे निवेदन है कि इस पुस्तक में उद्धृत कुरान को स्वयं पढ़ने का कष्ट करें। **'पवित्र कुरान' सुगम हिन्दी अनुवाद के अनुवादक मौलाना मुहम्मद फारूख खाँ एवं डॉ. मुहम्मद अहमद तथा प्रकाशक मधुर संगम सन्देश, नई दिल्ली-२५** सं. ईस्वी २००४, के अनुवादों का भी वही भाव है, जो मैंने यहां उद्धृत किया है। जो इस्लामी भाई यह मानें कि जिहाद व काफिर का यही अर्थ ठीक है, जो मैंने उद्धृत किया है, वे कृपया देश व दुनियां में इस्लाम के नाम पर हो रहे आतंकवाद के विरुद्ध जिहाद करने के लिए खड़े हो जायें और जो गैर मुस्लिम को ही काफिर मानकर सारी दुनियां में फैले आतंकवाद को उचित मानते हैं, वे कुरान के इन अनुवादकों, जो मुसलमान ही हैं, को बड़ा काफिर मानकर उन्हें पहले दण्ड दें तथा खुलकर आतंकवाद की जिम्मेदारी लें।

हाँ इतना अवश्य है कि मुहम्मद साहब की मृत्यु के लगभग तुरन्त बाद ही इस्लाम का आतंकवाद खून बहाने लगा और सन् ७१२ में मुहम्मद बिन कासिम ने भारत को निशाना बनाया, तब इन आयतों पर प्रश्नचिह्न ही लग जाता है, जिसका उत्तर इस्लामी विद्वानों को ही देना चाहिए।

यदि वेद की भाँति हत्यारे, चोर, डाकू आदि को काफिर कहें और उनसे युद्ध करने का विधान हो, तो कोई आपत्ति नहीं परन्तु इस्लाम का इतिहास कुरान के मूल आशय के सर्वथा विरुद्ध खून से रंगा है, जिस पर आज तक कोई भी विचार नहीं करता। काश! मुस्लिम धर्मान्ध कुरान पर गम्भीर चिन्तन फिर से करें। विचारधारा के आधार

पर अब तक जो खूनी ताण्डव होता रहा है व हो रहा है, उसे बंद करें। मांसाहार तो इस कुरान की बहुत ही दुःखद देन है। पशु हिंसा तो कुरान का अभिन्न अंग है, जिससे हम वैदिकधर्मी घोर पाप मानते रहे हैं व हैं।

(घ) गुमराह करने वाला व झगड़ालू खुदा–

कुरान का कहना है–

''और अगर खुदा चाहता, तो ये लोग आपस में लड़ते–झगड़ते नहीं, लेकिन खुदा जो चाहता है, करता है।'' ।।२५३।। (सूरः बकर २)

''और अगर खुदा चाहता, तो तुम (सब) को एक ही जमाअत बना देता लेकिन वह जिसे चाहता है, गुमराह करता है और जिसे चाहता है, हिदायत देता है।'' (सूरः नहल १६। आ. ६३)

ऐसी अन्य अनेक आयतें हैं, जिनसे इस कुरान का खुदा पक्षपाती सिद्ध होता है। जब खुदा यह चाहता ही नहीं कि सभी लोग उसके सही मार्ग पर चलें और शान्ति वा अमन चैन से रहें, तब वह पक्षपाती खुदा क्यों किसी को काफिर बनाता, फिर उसके कत्ल की आज्ञा देता है? जब आपके तथाकथित काफिर खुदा की आज्ञा नहीं मानते, तो उसके लिखे कुरान के अनुसार इस दोष का भागी खुदा ही हुआ, फिर निरपराध काफिरों को दण्ड क्यों? यह कैसी अंधेरगर्दी वा अन्याय है?

(ङ) इस्लामी अनुयायी भी काफिर हैं, तब उन्हें दण्ड क्यों नहीं?

(अ) कुरान का स्पष्ट निर्देश है कि कुरान का प्रचार केवल मक्का मदीना व आसपास के इलाके में किया जाये, न कि सारे विश्व में। देखें–

''और जो इसलिये (नाजिल की गयी है) कि तुम मक्के और उसके आस–पास के लोगों को आगाह कर दो''

(सूरः अनूआम ६। आ. ६२)

''इसी तरह तुम्हारे पास अरबी कुरान भेजा है, ताकि तुम बड़े गांव (मक्का) के रहने वालों को और जो लोग उसके इर्द गिर्द रहते हैं, उनको रास्ता दिखाओ''

(सूरः शूरा ४२। आ. ७)

इन आयतों से स्पष्ट है कि मक्का मदीने के आस पास के क्षेत्र में ही हजरत मोहम्मद को इस्लाम के प्रचार की आज्ञा थी परन्तु सारे संसार को इस्लामी बनाने के नाम पर अब तक जो भी रक्तपात हुआ अथवा बिना रक्तपात के प्रचार हुआ व आज भी अरब जगत् के बाहर यूरोप, अमेरिका, एशिया आदि देशों में, जो भी इस्लाम का प्रचार हो रहा है, वह कुरान की आज्ञा का खुला उल्लंघन है। तब क्या इन देशों के इस्लामी प्रचारक विद्वान् कुरान की दृष्टि में काफिर नहीं है? तब उनको कोई दण्ड क्यों नहीं?

(ब) कुरान में सर्वत्र एक खुदा की ही इबादत की स्पष्ट आज्ञा है, देखें-

''और (लोगो!) तुम्हारा माबूद खुदा-ए-वाहिद है। उस बड़े मेहरबान(और) रहम वाले के सिवा और कोई इबादत के लायक नहीं।''

(सूरः बकर २। आ. १६३)

''आप ऐसी चीजों को क्यों पूजते हैं, जो न सुनें और न देखें और न आपके कुछ काम आ सकें।'' (सूरः मरयम १९। आ. ४२)

''अफसोस है तुम पर और जिनको तुम खुदा के सिवा पूजते हो उन पर! क्या तुम अक्ल नहीं रखते?''

(सूरः अंबिया २१। आ. ६७)

''तुम ऐसी चीजें क्यों पूजते हो, जिनको खुद तराशते हो''

(सूरः साफ्फात ३७। आ. ९५)

इन आयतों से स्पष्ट है कि कुरान केवल एक खुदा (ईश्वर) की ही पूजा का आदेश देता है तथा अन्य किसी भी मनुष्यकृत वा ईश्वरकृत वस्तु को पूजने का स्पष्ट निषेध करता है और ऐसा करने वालों को

मूर्ख बताता है। तब मूर्तिपूजा को तो कुरान के विरुद्ध मानकर इस्लामी धर्मान्धों ने भारतवर्ष में हजारों मन्दिर तोड़े, हिन्दुओं को मौत के घाट उतारा परन्तु कब्रपूजा करने वालों को कुरान के विरुद्ध क्यों नहीं माना? क्या कब्र मनुष्यकृत रचना नहीं है? क्या वह खुदा का स्थान ले सकती है? जब हिन्दुओं की मूर्ति परमात्मा नहीं हो सकती ओर हिन्दुओं की बुत्परस्ती इस्लाम को स्वीकार नहीं, तब इस्लामियों ने कब्रपूजा को क्यों स्वीकार किया? क्या कब्रपूजक काफिर नहीं हुये? क्या उन्हें कुरान के अनुसार कोई सजा नहीं है? कब्र तो हिन्दुओं की मूर्तियों से भी बड़ी-२ होती हैं। इस कारण कब्रपूजक मुसलमान और भी बड़े बुत्परस्त हुये।

(च) हजरत मुहम्मद को पत्नियों की पूरी छूट-

ऐ पैगम्बर! हमने तुम्हारे लिये तुम्हारी बीबियों, जिनको तुमने उनके मह्र दे दिये है, हलाल कर दी हैं और तुम्हारी लौंडियां, जो खुदा ने तुमको (काफिरों से गनीमत के माल के तौर पर) दिलवायी हैं और तुम्हारे चचा की बेटियां और तुम्हारी फूफियों की बेटियां और तुम्हारे मामुओं की बेटियां और तुम्हारी खालाओं की बेटियां, जो तुम्हारे साथ वतन छोड़कर आयी हैं, सब हलाल हैं और कोई मोमिन औरत अगर अपने आप पैगम्बर को बख्श दे (यानी मह्र लेने के बगैर निकाह में आना चाहे) बशर्ते पैगम्बर भी उससे निकाह करना चाहे (वह भी हलाल है, लेकिन यह इजाजत) (ऐ मुहम्मद!) खास तुम ही को है, सब मुसलामानों को नहीं।...............तुम पर किसी तरह की तंगी न रहे........(तुमको यह भी अख्तियार है कि) जिस बीबी को चाहो, अलग रखो और जिसे चाहो पास रखो।

(सूरः अहजाब ३३। आ. ५०,५१)

अब देखिये- इस्लामी खुदा ने हजरत मुहम्मद को मानो उनकी दृष्टि में निहाल कर दिया, यह ऐय्याशी सब मुसलमानों के लिये नहीं। जरा बतायें, आप पौराणिक देवी देवताओं के पापों पर कुछ टिप्पणी करने के अधिकारी कैसे हो सकते है? आपके कुरान ने किसको छोड़ा है? हम तो डंके की चोट कहते हैं पौराणिक पाप धूर्तों की कल्पना है। इस कारण पौराणिक साहित्य दूषित है। इसका संशोधन होना चाहिये। वेद में एक पत्निव्रत एवं एक पतिव्रत धर्म का आदेश है। आपात्काल में

केवल सन्तान की कामना से अधिक विवाह इतिहास में देखे जाते हैं परन्तु ऐसी ऐय्याशी कभी किसी आर्ष ग्रन्थ को मान्य नहीं रही। क्या इस्लामी बन्धु भी हमारी भाँति अपने कुरान में संशोधन को स्वीकृति देने का साहस कर सकेंगे? यदि हाँ, तो उनका हार्दिक स्वागत व अभिनन्दन है।

(छ) इस्लामी स्वर्ग–

जिस फल को पाने के लिये काफिरों का खून बहाने की आज्ञा है, उसका फल अर्थात् जन्नत के स्वरूप के विषय में कुरान में लिखा है :–

आमने सामने तकिया लगाये हुये।।

नव जवान खिदमतगुजार, जो हमेशा (एक ही हालत में) रहेंगे, उनके आस–पास फिरेंगे।।

यानी आबखोरे और आफताबे और साफ शराब के गिलास ले ले लेकर।।

और मेवे जिस तरह के उनको पसन्द हों।।

और परिन्दों का गोश्त, जिस किस्म का उनका जी चाहे।।

और बड़ी–बड़ी आंखों वाली हूरें।।

हमने इन (हूरों) को पैदा किया।।

तो उनको कुंवारियां बनाया।। (सूरः वाकिआ ५६। आ. १६,१७,१८,२०,२१,२२,३५,३६)

यह है कुरानी जन्नत अर्थात् वहां भी भोग विलास और यहाँ भी लूटकर खाओ अर्थात् सर्वत्र भोग विलास। अहो मेरे इस्लामी बन्धुओ!

आपके स्वर्ग में ऐसा कौन सा आनन्द है, जिसके लोभ से अपने से भिन्न विचारधारा वालों का खून बहाते हो। सैक्स और मांसाहार, क्या यही आपका चरम लक्ष्य है? यहाँ भी चार-२ विवाह करो। महिलाओं को लूटो। उन्हें अपनी खेतियां समझो, जैसा कि आपका कुरान कहता है, नारी को व्यक्ति नहीं, बल्कि भोग्या वस्तु ही मानना आपका क्रूर विचार है। यह भोग विलास तो आप वैसे ही कर सकते हैं, इसके लिए इतना खून बहाने का पाप क्यों करते हो? वस्तुतः कुरान में सैक्स व हिंसा का ही बाहुल्य है। यहाँ अहिंसा एवं ब्रह्मचर्य जैसे महान् गुणों का नाम तक नहीं है। हाँ, वर्तमान भोगवादी कुसभ्यता के उन्मुक्त यौनाचार व स्वेच्छाचारिता पर कठोर दण्ड अवश्य है, जो बहुत उत्तम बात है। यही वैदिक विधान भी है परन्तु हिंसा व बहुविवाह वेदविरोधी घृणित विचार इस्लाम पर कलंक ही हैं। जो मुस्लिम भाई पौराणिक हिन्दुओं के पुराणों की अश्लीलता पर व्यंग्य करें, वे अपने अन्दर पहले देखें। इसके लिए हिजबुल्ला पब्लिकेशन एण्ड प्रैस, कादियान (पाकिस्तान) द्वारा प्रकाशित श्री मौहम्मद हिजबुल्ला द्वारा लिखित 'सुन्नी इस्लाम (हनफ़ी मजहब) की नंगी तस्वीर' नामक पुस्तक का अध्ययन अवश्य करें। इससे हिन्दुओं की मूर्खता पर हंसने का जोश तुरन्त दूर हो जायेगा। फिर जरा यह भी विचारें कि पौराणिक पाखण्डों वा अश्लील विचारों को मिथ्या सिद्ध करने का बीड़ा आर्य समाज उठाता तो है, क्या आप अपने मजहब की बुराइयों को मिथ्या घोषित करने का साहस करेंगे?

(ज) खुदा पर भारी शैतान-

''फरिश्तों को हुक्म दिया कि आदम के आगे सज्दा करो तो, (सबने) सज्दा किया, लेकिन इब्लीस, कि वह सज्दा करने वालों में (शामिल) न हुआ।।''

''(फिर) शैतान ने कहा कि मुझे तो तूने मल्ऊन किया ही है। मैं भी तेरे सीधे रास्ते पर उन (को गुमराह करने) के लिये बैठूंगा।।''

''शैतान तुम्हारा खुल्लम-खुल्ला दुश्मन है।।'' (सूरः आराफ ७। आ. ११,१६,२२)

यहाँ देखें! खुदा ने पहिले तो शैतान को आग से बनाया, फिर वह खुदा के सामने अकड़ गया और खुदा कुछ न कर सका और शैतान इन्सानों को गुमराह करता रहा और खुदा का जोर चला, तो कमजोर इंसानों पर, शैतान का कुछ न बिगाड़ सका। कहीं लिखा कि खुदा जिसको चाहे गुमराह करता है, जिसे चाहे राह दिखाता है और यहाँ शैतान को गुमराह करने वाला बताया। अब मुस्लिम विद्वान् ही जानें कि कौन गुमराह करता है खुदा वा शैतान? हां, इतना अवश्य है कि कुरान के अनुसार इंसान स्वयं गुमराह नहीं होता परन्तु खुदा ऐसा अन्यायकारी है कि निर्दोष इंसान को ही दोजख (नरक) में डालता है। ऐसे अन्यायी व अपने ही बनाये शैतान के सम्मुख बेवश खुदा को क्यों पूजा जाये? जो स्वयं बेवश व दुर्बल वा भटकाने वाला है, वह भला हमें क्या देगा? अन्त में इस्लामी बन्धुओं से निवेदन करूंगा कि आप कुरान को पूर्ण मानते हैं। इसे खुदा का अन्तिम व पूर्ण पैगाम मानते हैं। और इसे पूर्ण मानने के कारण ही भारत में इस्लामी आक्रान्ताओं ने वैदिक साहित्य को आग के हवाले किया था। उनका मानना था कि इन (वैदिक) पुस्तकों में वही है, जो कुरान में है, तो भी इनकी कोई आवश्यकता नहीं है, क्योंकि कुरान हमारे पास है ही। और यदि इनमें वह है, जो कुरान में नहीं है, तब तो यह अवश्य ही नष्ट करने योग्य है। तब मैं आपको पूछना चाहता हूँ कि **वर्तमान विज्ञान, प्रौद्योगिकी, आयुर्विज्ञान आदि कुरान में नहीं है, तब इनको क्यों पढ़ते व क्यों इनका उपयोग करते हो? जब कुरान में महिला का कोई अधिकार ही नहीं है और यदि है तो पुरुष से बहुत कम, तब क्यों पाकिस्तान व बांग्लादेश ने महिलाओं को राष्ट्रपति व प्रधानमंत्री के रूप में स्वीकार किया? क्यों कब्रों की पूजा करते हो? क्यों कन्याओं को पढ़ाते हो? कुरान में तो खुदा के कथनमात्र से ६ दिन में सृष्टि बन जाती है। वर्तमान विज्ञान के अध्येता व अध्यापक इस्लामी बन्धु क्या इसे अब भी स्वीकार करते हैं? यदि नहीं, तो वे कुरान को मिथ्या मानने वाले काफिर हुए और यदि वे ऐसा स्वीकार करते हैं, तो वर्तमान विज्ञान को पढ़ना अनावश्यक व विज्ञान पढ़ना कुरान की आज्ञाओं का उल्लंघन हुआ** अर्थात् दोनों ओर से काफिर होने का पाप लगेगा। यदि कोई विद्वान् कुरान का वैज्ञानिक भाष्य करने का साहस करे, तो हम उसका स्वागत करेंगे।

मेरे प्यारे भाइयो! अब आपके समक्ष दो मार्ग हैं–

एक कुरान का, वह भी आपकी नादानी मिश्रित मार्ग, जहाँ न विज्ञान है, न तकनीक। जहाँ केवल मिथ्या एवं जंगली प्राणियों जैसा जीवन व भोग विलास व परस्पर द्रोह, मांसाहार आदि है। तो दूसरी ओर ऐसा **वेदमार्ग है, जिसे आपके मुहम्मद साहब भी खुदा का पैगाम मानते हैं और जिसे ही असली कुरान कहा परन्तु आप स्वयं मुहम्मद साहब के सन्देश को नहीं समझे और अपनी नादानी से चलते रहे। मुहम्मद साहब के पास जो लोहे की पेटिका में सुरक्षित खुदाई किताब थी, वह भारत के हर मंदिर में पूजी जा रही थी, भले ही उस काल में यहाँ के ब्राह्मण उसे नहीं समझ पा रहे थे, परन्तु महाभारत काल तक उसी किताब का धर्म सम्पूर्ण भूमण्डल में प्रचलित था तथा सम्पूर्ण विश्व को एकता, आनन्द, शान्ति के मार्ग पर चला रहा था। महर्षि दयानन्द सरस्वती उस गुप्त पैगाम वेद को समझाने के लिये ही आये थे। जो आपके नूह (हमारे मनु) के विचारों के ही नहीं अपितु बाबा आदम अर्थात् महर्षि ब्रह्मा के विचारों के प्रख्यात प्रस्तोता थे।** इस वेद मार्ग में न मूर्तिपूजा का विधान है और न कब्रपूजा का संकेत। इसमें पदार्थ विज्ञान, सृष्टि विज्ञान, राजनीति, अध्यात्म, समाजशास्त्र, कृषि, गणित, आयुर्वेद आदि सभी प्रकार की लोक व परलोक के उद्धार की सभी विधायें हैं। **समस्त मानवता ही नहीं अपितु प्राणिमात्र का कल्याण करने वाली, शान्ति व आनन्द की सब पर वृष्टि करके पृथिवी को स्वर्ग बनाने वाली वैदिक विचारधारा है**, जहाँ भोग व योग दोनों का सुन्दर समन्वय है। जहाँ मोक्ष में केवल परमात्मा के आनन्द की प्राप्ति है। जहाँ लूटमार, हिंसा, ईर्ष्या, घृणा जैसा कोई पाप नहीं है। आप अपने आत्मा से यह भी विचारें कि आपके पैगम्बर मुहम्मद साहब के माता-पिता आदि तो मुसलमान नहीं थे, तब क्या आप कहेंगे कि मुहम्मद साहब काफिरों की औलाद थे। जरा सोचिए, क्या कोई भी इस बात को पसन्द करेगा कि उसे कोई काफिरों की औलाद कहे? तब क्या आपके रसूल आपसे नाराज नहीं होंगे? जरा यह भी सोचें कि उनके भी पूर्वज क्या भारत से ही नहीं गये? क्या हम सब एक ही खुदा की सन्तान नहीं है? यदि हां, तो क्यों दंगा फसाद को पसन्द करते हो? क्या पशु पक्षी खुदा की सन्तान नहीं है? यदि हाँ, तो क्यों उन्हें मारकर खाते हो? आप तो मारते भी हो, तो बहुत तकलीफ देकर, क्योंकि आप हलाल करके

अर्थात् अति कष्ट से मारने को ही अपना ईमान मानते हो। यह कैसा ईमान है, आपका?

अब आप सोचें! विचारें! अब तक के विचारों से थोड़े हटकर मेरे इस लेख पर आत्मना मनन चिन्तन करके बोलो! **आप किधर जाओगे?** सच्चे खुदा के मार्ग पर, जो कि सबको सन्मार्ग ही दिखाता है, न कि भरमाता है? असली गुप्त कुरान (वेद) के मार्ग पर अथवा झूठे गुमराह करने वाले खुदा के मार्ग व नकली कुरान के मार्ग पर? दंगा फसाद के मार्ग पर वा प्रेम, भाईचारा व आनन्द के मार्ग पर? यह निर्णय आपको ही करना है। मैंने तो आपके समक्ष दोनों मार्ग स्पष्ट कर दिये हैं।

(4) ईसाई बन्धुओं से संक्षिप्त निवेदन

ईसाई और इस्लाम मत में बहुत विशेष भेद नहीं है। कुरान में बाइबिल व ईसा की अनेकत्र चर्चा है। मूसा, इब्राहीम आदि की भी पर्याप्त चर्चा है। ईसा के मिथ्या चमत्कारों की लीला कुरान से विशेष है। आज भी ईसाई पादरी पोप आदि चमत्कारों का प्रदर्शन करके भोली जनता को भ्रमित करते हैं। कुछ बिन्दुओं पर हम चर्चा करते हैं-

(क) बाइबिल में नूह की चर्चा-

कुरान की भाँति बाइबिल में भी नूह (अर्थात् भगवान् मनु) की चर्चा है, जिसमें उनके नाव से पार उतरने की चर्चा है। निश्चित ही यह कथा वैदिक वा भारतीय साहित्य से ली गयी है। इस कारण इन्हें भारतीय साहित्य को अपनी बाइबिल का मूल स्रोत मानना चाहिये।

''और नूह ने परमेश्वर के लिए एक वेदी बनाई और सारे पवित्र पशु और हर एक पवित्र पंछियों में से लिए और होम की भेंट उस वेदी पर चढ़ाई। ....मैंने सारे जीवधारियों को मारा, फिर कभी न मारूंगा।।'' (उत्पत्ति पर्व ८। आ. २०-२१)

इस पर **सत्यार्थ प्रकाश** नामक ग्रन्थ में महर्षि दयानन्द जी सरस्वती कहते हैं कि वेदी के बनाने, होम करने के लेख से यही सिद्ध होता है कि ये बातें वेदों में से बाइबिल में गयी हैं। (परन्तु विकृत रूप में) ....परमेश्वर कहता है कि प्रथम सबको मार डाला और अब कहता है कि अब कभी नहीं मारूंगा। ये बातें लड़कपन की हैं, ईश्वर की नहीं। वास्तव में कोई काम करके पुनः पछताना तो अल्पज्ञों में देखा जाता है। जब बाइबिल का ईश्वर ऐसा है, तो उसे ईश्वर कैसे कहना? वस्तुतः यह बात भारतीय साहित्य से उस समय पश्चिम में पहुँची, जब यहाँ पशु आदि की बलि का दुष्ट प्रचलन हो गया था। मनुस्मृत्यादि ग्रन्थों में ये प्रक्षेप हो गये, इससे मनु (नूह) के बारे में ऐसी कथाएं पश्चिमी देशों में प्रचलित हो गयीं।

(ख) मांसाहारी ईश्वर–

(उत्पत्ति पर्व १८। आ.१–८) में ईश्वर द्वारा बछड़े के मांस को खाने का वर्णन है। ईसाईयों का ईश्वर सन्तान का मांस खाने वाला कैसा पापी है?

बाइबिल में पशुबलि की चर्चा है–

''यदि वह गाय–बैलों में से होम बलि करे .... वह होम बलि यहोवा के लिए सुखदायक सुगन्धवाला हवन करे।'' (लैव्य व्यवस्था पर्व १। आ. ३–६)

यह भी भारतीय पशुबलि के पाप का प्रतिरूप है। तब ईसाई लोग नादान हिन्दुओं का बलि प्रथा पर व्यंग्य करने के अधिकारी नहीं है।

(ग) हिंसा व दुराचार–

बाइबिल उत्पत्ति पर्व १६ आयत ३६ में लिखा है–

''इस प्रकार लूत की दोनों बेटियां अपने पिता से गर्भवती हुईं।''

''सो अब लड़कों में से हर एक बेटे को और हर एक स्त्री को, जो पुरुष से संयुक्त हुई हो, प्राण से मारो। परन्तु वे बेटियां जो पुरुष से संयुक्त नहीं हुई हैं, उन्हें अपने लिये जीती रखो।''

(गिनती पर्व ३१, आयत १७,१८)

यहाँ पिता से पुत्रियों का गर्भवती होना; निर्दोष मनुष्यों को मारकर कुंवारी कन्याओं को रख लेना, यह क्रूरता एवं कामुकता का ज्वलन्त उदाहरण है। कुमारी मरियम की कोख से ईसा का जन्म ओर इसका दोष भी परमेश्वर पर मढ़ देना ईसाइयों की लीला है। भला जब ईश्वर ही कुंवारियों से व्याभिचार करके पुत्र उत्पन्न करता है, तो उस ईश्वर के भक्त ऐसे पाप क्यों नहीं करेगें? देखें ईशु के जन्म की कथा–

“अब ईसा मसीह का जन्म इस प्रकार से हुआ, कि जब उसकी माता मरियम की मंगनी युसुफ के साथ हो गयी, तो उनके इकट्ठे होने से पहिले वह पवित्र आत्मा की ओर से गर्भवती पाई गयी।”

(मत्तीरचित सुसमाचार प१। आ. १८)

ईसाइयों को ये कामी विचार बहुत भाये हैं, यही कारण है कि ईसाई देशों में कुमारियों के बच्चे होना आम बात है। कामुकता व स्वेच्छाचारिता का जितना नग्न ताण्डव पाश्चात्य ईसाई कुसभ्यता ने इस संसार को दिया है, उतना किसी अन्य ने नहीं दिया। ईसाई भाई बाइबिल की उन बातों को व्यवहार में नहीं लाते, जिनमें ब्रह्मचर्य व सदाचार की शिक्षा है। देखें कुछ उदाहरण–

“क्योंकि परायी स्त्री के ओठों से मधु टपकता है और उनकी बातें तेल से भी अधिक चिकनी होती हैं।३। परन्तु इसका परिणाम नागदौना सा कड़ुवा और दोधारी तलवार सा पैना होता है”।४। नीति वचन।।**५**।। “उसकी सुन्दरता देखकर अपने मन में उसकी अभिलाषा न कर”।२५। नीति वचन।।**६**।। “दाख मधु पीने वालों में न होना, न मांस अधिक खाने वालों की संगति करना।२०। क्योंकि पियक्कड़ और खाऊ अपना भाग खोते हैं”।२१। नीति वचन।।**२३**।।

“अपना बल स्त्रियों को न देना, न अपना जीवन उनके वश कर देना, जो राजाओं का पौरुष खो देती हैं।३। मदिरा चाहना रईसों को नहीं फबता।४। ऐसा न हो कि वे पीकर व्यवस्था को भूल जायें और किसी दुःखी के हक को मारें।५। मदिरा उनको पिलाओ, जो मरने पर हैं”।६। नीति वचन।।**३१**।।

मेरे प्यारे ईसाई पाठक! क्या आप तथा आपके अमरीका व यूरोप देश इन उपयोगी शिक्षाओं पर कभी ध्यान देंगे? क्या आप बतायेंगे कि क्यों आपकी पाश्चात्य कुसभ्यता ने संसार को कामुकता, स्वेच्छाचारिता, यहां तक कि समलैंगिकता की आग में झोंकने का घृणित अपराध किया है व कर रहे हैं? क्यों मानवाधिकारों के नाम पर पापों को प्रश्रय देने की वकालत करते हैं? क्यों दुराचारी अपने-२ संगठन (वास्तव में गिरोह) बना कर अराजकता फैलाते तथा सामाजिक व

सांस्कृतिक आतंकवाद फैला रहे हैं? क्या बाईबिल इसकी अनुमति देता है? यदि हाँ, तो क्या ऐसा बाईबिल कोई पवित्र ग्रन्थ हो सकता है?

(घ) समाज का विघटक बाईबिल–

देखो! ईसा मसीह का उपदेश कैसा भयानक है?

''यह न समझो, कि मैं पृथ्वी पर मिलाप कराने को आया हूँ, मैं मिलाप कराने को नहीं, पर तलवार चलाने आया हूँ। मैं तो आया हूँ कि मनुष्य को उसके पिता से, और बेटी को उसकी मां से, और बहू को उसकी सास से अलग कर दूँ। मनुष्य के बैरी उसके घर के ही लोग होंगे।'' (मत्ती प.१०। आ. ३४,३५,३६)

''परन्तु मेरे उन बैरियों को, जो नहीं चाहते थे कि मैं उन पर राज्य करूँ, उनको यहाँ लाकर मेरे सामने घात करो।''

(लूका प. १९। २७)

''तू झुक कर उनको दण्डवत् न करना और न उनकी उपासना करना क्योंकि मैं तुम्हारा परमेश्वर यहोवा जलन करने वाला ईश्वर हूँ। जो मुझसे बैर रखते हैं, उनके अधर्म का प्रतिशोध तीसरी चौथी पीढ़ी की सन्तान से लेता हूँ।'' (निर्गमन–२०। ५)

''मैं पृथ्वी पर आग लगाने आया हूँ और क्या चाहता हूँ कि यह अभी सुलग जाती! क्या तुम समझते हो कि मैं पृथ्वी पर मिलाप कराने आया हूँ। मैं तुमसे कहता हूँ, नहीं, बरन अलग कराने आया हूँ।'' (लूका १२। ४९,५१)

वास्तव में ईसाइयों ने जिस–२ देश में पग रखा, आश्रय पाया, उस–उस देश के नागरिकों कों लूटा, उन्हें दारुण यातनाएं दीं, उनकी हत्याएं कीं तथा उस–उस देश के नागरिकों में फूट का ऐसा बीज बोया, जिसने देश को ही खण्ड–२ कर दिया। हमारा प्यारा भारत इस देश का फल अब इस तक भोग रहा है। अंग्रेज इस फूट का रोग ऐसी चालाकी से लगा गये कि आज भारतीय उस रोग को सगर्व गले लगाए

हैं। यह बाईबिल की ही देन है। क्या यही धर्म है? यदि यही धर्म है, तब अधर्म किसे कहेंगे?

(ङ) छुआछूत एवं पक्षपात–

जो ईसाई भाई भारत के कथित दलित वर्ग को हिन्दुओं की छुआछूत एवं भेदभाव के प्रति भड़का कर ईसाई मत में दीक्षित करने के प्रलोभन देते हैं, उनकी पवित्र बाइबिल क्या कहती है?

''जो व्यक्ति पुरोहित नहीं है, वह पवित्र वस्तुयें नहीं खायेगा। पुरोहित का अतिथि अथवा उसका मजदूर भी पवित्र वस्तु नहीं खायेगा।''
(पुराना नियम, लेवीय व्यवस्था –२२)

''अम्मोनी वा मोआबी यहोवा की सभा में न आने पाए। उनकी दसवीं पीढ़ी तक का कोई यहोवा की सभा में कभी न आ पाए।...... .... किसी एदोमी से घृणा मत करना, क्योंकि वह तेरा भाई है। किसी मिस्री निवासी से भी घृणा न करना।''
(व्यवस्था विवरण–२३)

मेरे ईसाई भाई जरा विचारें कि भाई–२ के बीच यह छुआछूत व भेदभाव क्या ईसा के कथित प्रेम सन्देश का परिणाम है? क्या आज भी भारत के कथित दलित ईसाइयों के साथ आप भेदभाव नहीं करते हैं? हम तो वैदिक साहित्य के छुआछूत व भेदभाव को धूर्तों द्वारा प्रक्षिप्त मानते हैं। क्या आप भी हमारी भाँति बाइबिल में प्रक्षेप मानकर उन्हें निकालने का साहस करेंगे? यदि नहीं, तो भारत के गरीबों को लोभ देकर धर्मान्तरण व राष्ट्रियता का परिवर्तन करने के अपराध क्यों करते हैं?

इन क्रूर आयतों को देखकर कौन विश्वास करेगा कि ईसाई मत प्रेम व भाई चारे का संदेशवाहक है। सम्भव है उसका प्रेम केवल ईसाईयों, वह भी केवल कैथोलिक ईसाइयों के लिये ही सत्य हो, अन्य सम्पूर्ण संसार के लिये तो यह हिंसा को ही पैदा करने वाला सिद्ध होता है।

(च) निर्धनता का पक्षधर ईसा–

बाइबिल का कहना है–

‘‘अपने लिए पृथिवी पर धन इकट्ठा न करो।’’

(मत्ती प. ६। आ. १९)

‘‘तब यीशु ने अपने चेलों से कहा, मैं तुमसे सच कहता हूँ कि धनवान् का स्वर्ग के राज्य में प्रवेश करना कठिन है।।’’

‘‘फिर तुमसे कहता हूँ कि परमेश्वर के राज्य में धनवान् के प्रवेश करने से ऊँट का सुई के नाके में से निकल जाना सहज है।’’

(मत्ती प. १९। आ. २३,२४)

वस्तुतः ईसा निर्धन तथा जंगल में रहने वाले थे, इसीलिए वे धनी होने को अच्छा नहीं मानते थे। अब उनके अनुयायी ईसाई भाई विचारें कि आज ईसाई देश क्यों पूंजीवाद के प्रबल पक्षधर तथा सतत धनसंग्रह में लगे हैं। संसार में सर्वाधिक धनसंग्रह व भोगने की प्रवृत्ति ईसाई देशों में ही अधिक है। संसार को लूट–२ कर वे आज सम्पन्न व वैभवशाली प्रसिद्ध हो रहे हैं। तब सोचें कि बाईबिल की दृष्टि में वे स्वर्ग में जायेंगे वा नरक में सड़ेंगे?

(छ) लोगों को मूर्ख समझना–

वस्तुतः ईसा अपने सभी अनुयायियों को मूर्ख मानते थे और वे उन्हें भेड़ कह कर पुकारते थे।

‘‘तब यीशु ने उनसे फिर कहा, कि मैं तुमसे सच–सच कहता हूँ कि भेड़ों का द्वार मैं हूँ।।’’

‘‘जितने मुझसे पहले आये, वे सब चोर और डाकू हैं परन्तु भेड़ों ने उनकी नहीं सुनी।।’’ (यूहन्ना प. १०। आ. ७,८)

यहाँ स्पष्ट है कि न केवल जन सामान्य अपितु अपने से पूर्व आये कथित पैगम्बरों से स्वयं को श्रेष्ठ समझते थे। सभी कथित पैगम्बरों को चोर और डाकू कहना अहंकार व ईर्ष्या का द्योतक है और जन साधारण को भेड़ कहना, उन पर क्रूर व्यंग्य करना है। यहाँ ईसा से तो मुहम्मद ही उदार सिद्ध होते हैं। बड़े आश्चर्य की बात है कि हमारे ईसाई बन्धु मूर्खप्राणी भेड़ बनने में ही आनन्द व गर्व का अनुभव करते हैं।

इन सब कथाओं के अतिरिक्त बाइबिल में अनेक विज्ञान-विद्या विरुद्ध तथा मिथ्या चमत्कारों से भरी घटनायें हैं। इन ईसाइयों ने ब्रूनो तथा कॉपरनीकस को केवल इसलिए मृत्युदण्ड दिया, क्योंकि वे पृथिवी को सूर्य्य की परिक्रमा करने वाली बता रहे थे, जिसे पोप ने बाइबिल के विरुद्ध बताया था। गैलीलियो को भी कठोर दण्ड इसी कारण दिया गया। ऐसे बर्बर दण्ड इन वैज्ञानिकों को इस बाइबिल ने ही दिलाये थे। तब क्या ऐसे ग्रन्थों को ईश्वर रचितग्रन्थ कहना बुद्धिमानी है? आज वे ही ईसाई देश बाइबिल के विरुद्ध विज्ञान का पर्याप्त विकास कर रहे हैं पुनरपि बाइबिल को उसी भाँति गले से लगाये हैं, जैसे कोई बंदरिया अपने मृत बच्चे को सीने से चिपकाये रहती है। इनके बाइबिल में भी परमात्मा को शैतान खूब नाच नचाता है। अहो! कैसा परमात्मा है, यह? इस कारण हमारी आपसे विनती है कि आपके सम्मुख दो मार्ग है-

१. बाइबिल का ऐसा मार्ग, जिसमें अशिक्षित लोगों को भेड़ कहकर सम्बोधित करने वाले, धन व धनी से घृणा करने वाले, विद्या, विज्ञान व टैक्नोलोजी को अपराध मानकर वैज्ञानिकों को दण्ड देने वाले, हिंसा, मांसाहार, अलगाववाद फैलाने वाले ईसा के मिथ्या चमत्कारों की कल्पित कथाएं हैं। जिनके अनुसार जीवन जीने से जंगलीपन, अशिक्षा, निर्धनता, बर्बरता के अतिरिक्त कुछ भी हाथ नहीं लग सकता।

२. दूसरा मार्ग वेद का है, जिसके यज्ञों (परन्तु भ्रष्टरूप में चल पड़े यज्ञों) का संकेत बाइबिल में भी है। इन शुद्ध यज्ञों से पर्यावरण सुरभित, स्वस्थ होकर प्राकृतिक आपदाओं व मानसिक एवं शारीरिक रोगों से रक्षा होती है। जहाँ अहिंसा, मानवता, करुणा, सत्य, पृथिवी से लेकर परमात्मा तक का यथार्थ विज्ञान व उपयोगी निरापद टैक्नोलोजी, निर्धनता

नहीं, अपितु धर्मपूर्वक पर्याप्त धन कमाने की शिक्षा परन्तु धन का भोग त्यागपूर्वक होवे, जिससे सभी मानव सुखी व धनवान हो सकें। जिसके महान् अध्यात्म की शिक्षा विश्व में प्रसिद्ध रही, जो सभी मार्गों का मूल स्रोत है परन्तु वे मार्ग अपने मूल स्रोत से भटक कर पृथक्–२ भ्रमित मार्गों का रूप ले बैठे। जो मार्ग विश्व के सभी मनुष्यों के पूर्वजों का मार्ग है। जिसमें क्षेत्र, भाषा, सम्प्रदाय, वर्ग आदि का कोई भेद नहीं है। जो ''**जीओ और जीने दो**'', की अवधारणा पर आधारित है।

अब आपको यह तय करना है कि कौन से मार्ग पर चलना है? बोलो, मेरे भाई बोलो! भेड़ों के मार्ग पर चलोगे वा मनुष्यों के बुद्धिमत्तापूर्व मार्ग पर? निर्णय आपके हाथ में है।

(5) जैन, बौद्ध भाइयों से आत्मीय निवेदन

महर्षि दयानन्द जी सरस्वती अपने अमर ग्रन्थ **सत्यार्थ प्रकाश** के द्वादश समुल्लास में राजा शिवप्रसाद जी के **'इतिहास तिमिरनाशक'** तथा श्री अमरसिंह रचित **'अमरकोश'** को उद्धृत करते हुये लिखते हैं कि जैन व बौद्ध दोनों पर्यायवाची हैं। वैदिक व आर्ष ग्रन्थों में हिंसक व कामी प्रवृत्ति वाले वाममार्गियों ने जब यज्ञों में बलि व यौनाचार जैसे घृणित प्रक्षेप किये वा उनके दूषित अर्थ हुये, तब वाममार्गियों की प्रतिक्रियास्वरूप चारवाक मत के साथ जैन-बौद्ध मत का भी उदय हुआ। ये दोनों ही मत ईश्वर की सत्ता को नहीं मानते परन्तु जीव, कर्मफलव्यवस्था को मानते हैं। सत्य, अहिंसा, अस्तेय, अपरिग्रह व ब्रह्मचर्यादि पवित्र यमों, जो महान् योगिराज महर्षि पतंजलि के अष्टांग योग के प्रथम सोपान थे, को ही आधार बनाकर ये मत प्रचलित हुये परन्तु ईश्वर की अवधारणा के अभाव में आज बौद्ध देशों में अहिंसा का नाम मात्र बचा है। मांसाहार से उनका कोई विरोध नहीं रह गया है। जरा विचारें कि जब अपनी रसना की तृप्ति के लिये उन्हें किसी भी प्राणी के प्राणहरण से कोई घृणा नहीं, तब यह कैसी अहिंसा है, बौद्ध मत की? शून्य से सृष्टि मानने की मूर्खता वाले इस अवैज्ञानिक मत में कहीं भी किसी आर्य सत्य का चिह्न नहीं रह गया है। सबसे बड़ा मिथ्यावाद तो यही है कि बिना ईश्वर, शून्य से सृष्टि बनती वा संचालित होती है। इन बौद्धों ने वैदिक साहित्य को काफी क्षति पहुँचाई है, ऐसा सुना जाता है। वस्तुतः उन्हें बहुत दोष देना भी उचित नहीं क्योंकि वेद के नाम पर अनेक अनर्थ चल रहे थे। यह भी एक तथ्य है कि **भगवान् बुद्ध एक विख्यात महापुरुष थे वे वेद, आर्य अथवा ब्राह्मण आदि के विरोधी नहीं बल्कि उनका अति सम्मान करने वाले थे। वे इनके नाम पर हो रहे पापों से घृणा अवश्य करते थे** परन्तु इनके यथार्थ स्वरूप का कुछ-कुछ भान उनके हृदय में भी था। इस कारण उनके विचार इनके प्रति यथार्थवादी एवं आत्मीयतापूर्ण थे-

उनके चार सत्यों का नाम ही आर्य सत्य था। देखिये धम्मपद पृ.७० पर लिखा है-

एतं विसेसतो ञत्वा अप्पमादम्हि पण्डिता।

अप्पमादे पमोदन्ति अरियानं गोचरे रता।। (६.२)

अर्थात् यह अच्छी तरह जानकर अप्रमाद के विशेषज्ञ आर्यों के आचार में रत रहते हुए अप्रमाद में ही प्रमोद पाते हैं।

सुतनिपात २६२ में लिखा–

''विद्वा च वेदेहि समेच्च च धम्मं, न उच्चावचं गच्छति भूपरिपञ्ञे।''

इसका अर्थ पं. धर्मदेव जी विद्यामार्तण्ड करते हैं (अपने ग्रन्थ वेदों का यथार्थ स्वरूप में)

> ''जो विद्वान् वेदों द्वारा धर्म का ज्ञान प्राप्त करता है। उसकी ऐसी डांवाडोल अवस्था नहीं होती।''

वेदज्ञ ब्राह्मण की प्रशंसा में बुद्ध कहते हैं–

यं ब्राह्मण वेदगुं आभिजञ्ञा, अकिंचनं कामभवे असत्तं।

अद्धा हि सो ओघमिमं अतारि, तिण्णो च पारं अखिलो अकंखो।।

इसका अर्थ '**वेदों का यथार्थ स्वरूप**' ग्रन्थ में पं. धर्मदेव जी विद्यामार्तण्ड करते हैं–

''जिसने उस वेदज्ञ ब्राह्मण को जान लिया, जिसके पास कुछ धन नहीं और जो सांसारिक कामनाओं में आसक्त नहीं, वह आकांक्षारहित सचमुच इस संसार सागर से तर जाता है।''

(क) बौद्धमतानुसार ब्राह्मण के लक्षण–

१. **धम्मपीति सुखं सेति विप्पसन्नेन चेतसा।**
अरियप्पवेदिते धम्मे सदा रमति पण्डितो।। (धम्मपद पृ. ११४–१५)

अर्थात् धर्म में आनन्द मानने वाला पुरुष अत्यन्त प्रसन्नचित्त से सुखपूर्वक सोता है। पण्डितजन सदा आर्योपदिष्ट धर्म में रत रहते हैं।

२. **न ब्राह्मणस्य पहरेय्य नास्स मुञ्चेथ ब्राह्मणो।**
धी ब्राह्मणस्स हन्तारं ततो धी य'स्स मुञ्चति।।

(धम्मपद पृ. १३६-३७)

अर्थात् ब्राह्मण पर प्रहार नहीं करना चाहिये और ब्राह्मण को उस (प्रहारकर्त्ता) पर कोप नहीं करना चाहिये। ब्राह्मण पर प्रहार करने वाले को धिक्कार है। जो ब्राह्मण उस (प्रहारकर्त्ता) पर कोप करे, उसे भी उससे भी अधिक धिक्कार है।

३. **न जटाहि न गोत्तेन न जच्चा होति ब्राह्मणो।**
यम्हि सच्चं च धम्मो च सो सुची सो च ब्राह्मणो।।

(धम्मपद पृ. १४०-१४१)

अर्थात् न जन्म के कारण, न गोत्र के कारण, न जटा धारण के कारण ही कोई ब्राह्मण होता है। जिसमें सत्य है, जिसमें धर्म है, वही पवित्र है और वही ब्राह्मण है।

४. **यो'ध पुञ्ञं च पापं च उभो संग उपच्चगा।**
असोकं विरजं सुद्धं तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं।। (धम्मपद पृ. १४४-१४५)

अर्थात् जो इस जन्म में ही पाप और पुण्य तथा उनकी आसक्ति को पार कर गया, उस विगतशोक, विगतरज और शुद्ध पुरुष को मैं ब्राह्मण कहता हूँ।

५. **वारि पोक्खरपत्ते व आरग्गे रिव सासपो।**
यो न लिम्पति कामेसु तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं।। (धम्मपद पृ. १४६-१४७)

अर्थात् कमलपत्र पर जल और सुई की नोंक पर सरसों की भाँति, जो भोगों में लिप्त नहीं होता, उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ।

इन सब पर विचार करने से स्पष्ट होता है कि भगवान् बुद्ध वेद, आर्य, ब्राह्मण सभी के प्रति अति श्रद्धा का भाव रखते थे। वे जन्मना जातिव्यवस्था के विरोधी परन्तु कर्मणा वर्णव्यवस्था के प्रबल समर्थक थे। तब प्रश्न उठता है कि बौद्ध-मत वेद व **ब्राह्मण विरोधी कैसे बन गया**? इस विषय में हमारा मत है कि यद्यपि वे वेदादि शास्त्र पढ़े थे परन्तु वे वेद के विशेष विद्वान् नहीं थे। उन दिनों वेद के नाम पर कथित जन्मना ब्राह्मण, जो भगवान् मनु के अनुसार अनार्य व दस्यु बन चुके थे, मांसाहार, पशुबलि आदि पापों को विस्तार दे रहे थे। गौतम बुद्ध महर्षि दयानन्द जी सरस्वती की भाँति उन नकली ब्राह्मणों व कथित वेदज्ञों से शास्त्रार्थ नहीं कर सकते थे, इस कारण मौन हो जाते थे। उनकी मृत्यु के पश्चात् उनके शिष्यों ने अपने गुरु की वेद के सम्बंध में विशेष रुचि न देखने से उन्हें वेदविरोधी तथा वेद के नाम पर दुष्टता करने वालों को ही वेदज्ञ ब्राह्मण समझकर वेद व ब्राह्मण आदि के विरुद्ध भारी अभियान चलाया। उन बौद्धों व जैनों ने क्यों बुद्ध के विचारों, जो सुपानिपात व धम्मपद में थे, को ध्यान से नहीं पढ़ा अथवा वे भी नकली ब्राह्मणों की करतूतों से ग्रस्त होकर सिर दर्द दूर करने हेतु सिर कटाने को ही अपना उद्देश्य समझ बैठे। फिर ईश्वर, वेद आदि से भी दूर होकर अनीश्वरवाद की छाया में पलता बढ़ता बौद्ध मत मद्यमांसादि को अपनाने की ओर पूर्ण प्रवृत्त हुआ है। इस प्रकार संसार के बौद्ध ही अपने आराध्य भगवान् बुद्ध की हत्या कर रहे हैं तथा इस देश के कुछ विघटनकारी संगठन विदेशी षड्यन्त्रों में फंसकर भारत के कथित दलित ही नहीं अपितु कथित पिछड़ा वर्ग को भी आर्य, वेद, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य आदि के विरुद्ध भड़काकर उन्हें बौद्ध मत अपनाने की प्रेरणा देकर देश में गृहयुद्ध के बीज बो रहे हैं। ये लोग न बुद्ध को समझते हैं और न वेदादि शास्त्रों को, बल्कि विदेशी षड़यन्त्रकारियों के षड़यन्त्र में फंसे कठपुतली की भाँति नाचते हैं। इनके विषय में विस्तार से हम पूर्व में लिख ही चुके हैं।

(ख) जैन मत पर विचार

जैसा कि हम कह चुके है कि प्रारम्भ में बौद्ध व जैन मत एक ही था। भगवान् महावीर के साथ भी यही दुर्भाग्य रहा कि वे भी गौतम बुद्ध की भाँति क्षत्रिय वंश में जन्मे तथा अत्यन्त पवित्रात्मा विरक्त पुरुष थे परन्तु वेदों के विद्वान् न होने से प्रतिक्रिया स्वरूप पृथक् चल पड़े ।

भगवान् महावीर के बाद उनके भक्तों ने उन्हें तथा उनसे पूर्व २३ महापुरुषों को तीर्थंकर मानकर मूर्ति बनाकर पूजना प्रारम्भ कर दिया उधर बौद्ध भी बुद्ध की मूर्ति की पूजा करने लगे। यहीं से मूर्तिपूजा की अज्ञानता का प्रारम्भ हुआ। अनेक ग्रन्थ विद्या-बुद्धि के विरुद्ध लिखे जाने लगे, जिनमें भारतीय महापुरुषों की निन्दा भी की गयी। यथा-

(१) बुद्धिविरुद्ध बातें-

रत्नाकर भाग-१ पृष्ठ १४६ (सत्यार्थ प्रकाश से उद्धृत) में शंख, कौड़ी, जूँ आदि का शरीर ४८ कोश लम्बा चौड़ा लिखा है।

इसी के पृष्ठ १५० (स. प्र. से उद्धृत) में १ योजन लम्बा बिच्छु, मक्खी व कसारी का शरीर लिखा है। जलचर मछली का शरीर १ सहस्त्र योजन का लिखा है।

इसी ग्रन्थ के पृष्ठ १५२ (स. प्र. से उद्धृत) पर भूगोल विषयक लेख है-

इस तिरछे लोक में असंख्यात द्वीप और असंख्यात समुद्र हैं... .... अब इस पृथ्वी में एक जम्बू द्वीप प्रथम सब द्वीपों के बीच में है। इसका प्रमाण एक लाख योजन अर्थात् चार लाख कोश है और इसके चारों ओर लवण समुद्र है। उसका प्रमाण दो लाख योजन का है।। 'इस जम्बू द्वीप के चारों ओर 'धातकी खण्ड़' नामक द्वीप है, उसका प्रमाण चार लाख योजन, उसके पीछे कालोदधि समुद्र है, वह आठ लाख योजन का। उसके पीछे पुष्करावर्त द्वीप है, उसका प्रमाण १६ कोश का है। उस द्वीप के आधे में मनुष्य वसते हैं और उसके उपरान्त असंख्यात द्वीप समुद्र हैं। उनमें तिर्यग् योनि के जीव रहते है। मेरे जैनी भाई विचारें कि क्या वे ऐसी असम्भव मूर्खतापूर्ण बातों पर विश्वास करेंगे? महर्षि दयानन्द जी अपने सत्यार्थ प्र. में इनके भूगोल ज्ञान पर टिप्पणी करते हैं-

''सुनो भाई! भूगोल विद्या के जानने वाले लोगो! भूगोल के परिमाण करने में तुम भूले वा जैन? जो जैन भूल गये हों, तो तुम उनको समझाओ और जो तुम भूले हो, तो उनसे समझ लेओ। थोड़ा सा विचार करके देखो तो निश्चय होता है कि जैनियों के आचार्य और

शिष्यों ने भूगोल, खगोल और गणित विद्या कुछ भी नहीं पढ़ी थी। जो पढ़े होते, तो महाअसम्भव गपोड़ा क्यों मारते?''
ध्यातव्य है कि ऐसा ही गप्पी भूगोल श्रीमद् भागवतपुराण ने भी लिख मारा है।

(२) अन्य मतावलम्बियों के प्रति द्वेष भाव–

प्रकरणरत्नाकर भा.२। षष्ठी. सूत्र १८ (स.प्र. से उद्धृत) लिखा–

बहुगुणविज्झा निलओ, उस्सुत्त भासी तहा विमुत्तव्वो।
जह वर मणि जुतो विहु, विग्धकरी विसहरो लोए।।

अर्थात् जैसे विषधर सर्प में मणि त्यागने योग्य है, वैसे जो जैन मत में नहीं, वह चाहे कितना बड़ा धार्मिक पण्डित हो, उसको त्याग देना ही जैनियों को उचित है।

आगे इसी में सूत्र २९ में लिखा (स.प्र. से उद्धृत)

अइसय पाविय पावा, धम्मिअ पव्वेसु तोवि पाव रया।
न चलन्ति सुद्धधम्मा, धन्ना किविपाव पव्वेसु।।

अर्थात् अन्यदर्शनी कुलिंगी अर्थात् जैनमत विरोधी, उनका दर्शन भी जैनी लोग न करें।

पुनः सूत्र १२२ में कहा (स.प्र. से उद्धृत)

जो कोई ऐसा कहे कि जैन साधुओं में धर्म है, हमारे और अन्य में भी धर्म है, तो वह मनुष्य क्रोड़ानक्रोड़ वर्ष तक नरक में रहकर फिर भी नीच जन्म पाता है।

ऐसी अनेक दूषित व विघटनकारी उपदेशों से भरा है, यह प्रकरण रत्नाकर ग्रन्थ। इसके अतिरिक्त विवेकसार नामक ग्रन्थ में भी ऐसी ही बातें है। पाठकगण विचारें कि क्या इसी को अहिंसा कहते हैं? जिसको जैन मत की नींव कहा जाता है।

(३) मूर्खतापूर्ण एवं अव्यवहारिक उपदेश– (स.प्र. से उद्धृत)

(१.) इस नगरी में एक नन्दमणिकार सेठ ने बावड़ी बनवाई, उससे धर्मभ्रष्ट होकर सोलह महारोग हुए। (तत्वविवेक पृ. १६६)

(२.) भूंजने, कूटने, पीसने, अन्न पकाने आदि में पाप होता है।
(रत्नाकर पृ. १०५)

(३.) बगीचा लगाने से एक लक्ष पाप माली को लगता है।
(वही, पृ. १०४)

मेरे भ्रमित जैन बन्धु जरा विचारें कि कृषि, अनाज पीसना, कूटना, कुंआ व नलकूप आदि खोदना बंद कर दिया जाये, तो आप भी कैसे जी सकेंगे? करोड़ों मनुष्य व पशु आदि मर जायेंगे। तब इसे हिंसा कहेंगे वा अहिंसा?

अपने जैन बौद्ध बन्धुओं से विनम्र निवेदन

मित्रो! आपको यह बात समझ आयी होगी कि वेदविद्या के लुप्त होते जाने के समय अविद्वानों व दुष्ट लोगों ने वेद के नाम पर अनेक अत्याचारों से दुःखी होकर आपके इन मतों का प्रादुर्भाव हुआ था। दुर्भाग्य से क्षत्रियकुलोत्पन्न दोनों ही महापुरुष गौतम बुद्ध व महावीर स्वामी जी वेदविद्या के पूर्ण ज्ञाता न होने के कारण वेद के नाम पर पाप को ही धर्म बताने वाले संस्कृतज्ञ धूर्तों को यथार्थ शास्त्रार्थ न समझा सके और अन्यमना होकर वे इस ओर से मौन हो गये। उनकी मृत्यु के पश्चात् उनके चेलों ने अपने नये पन्थ चला दिये। इन मतों में अविद्या, अज्ञान, अव्यवहारिकता, ईर्ष्या व द्वेष से भरे अनेक विचारों को स्थान मिला, जिन पर चलकर पारस्परिक वैमनस्य एवं जंगलीपन में ही यथा तथा जीना सम्भव है। वह भी कृषि, जल व्यवस्था आदि को पाप मानकर त्यागने से सर्वनाश निश्चित है। तब आपके सम्मुख दो मार्ग हैं–

(१.) एक आपके मत, जहाँ अज्ञान, अविद्या, अव्यवहारिकता, जीवन जीने के सभी साधनों का अभाव, पारस्परिक ईर्ष्या, द्वेष एवं

किंकर्त्तव्यमूढ़ता, इससे जीवन निराशा, दुःख व अभावों से भरा कठिनाई से ही जीया जा सकता वा नहीं भी जीया जा सके, ये मार्ग हैं। जहाँ मिथ्या एकांगी अहिंसा, जिससे सर्वसाधारण का जीवन असम्भव एवं दुष्टों का जीना सुखद होवे।

(२.) वह वैदिक मार्ग, जहाँ विद्या, विज्ञान, व्यवहारिकता, सामाजिक समरसता, लोक व परलोक दोनों की पूर्ण उन्नति, प्रेम, भाईचारा, स्पष्ट व सत्य विचार से युक्त खुला मार्ग, आशा, आनन्द एवं समृद्धि का मार्ग, जहाँ केवल मानवता है। जहाँ यथार्थ अहिंसा, जिसमें सबके साथ प्रेम परन्तु आत्मरक्षार्थ प्रत्येक व्यक्ति को बल प्रयोग का अधिकार है तथा दुष्ट को दण्ड देने का राजा को पूर्ण अधिकार होने से सामाजिक, राष्ट्रिय व वैश्विक व्यवस्था सुचारु चलती है। जिसके आधार पर ही करोड़ों वर्षों से पृथिवी पर शान्ति, अध्यात्म, आनन्द व सुखसमृद्धि का शासन रहा है।

आप ही बोलो! विचारो! कि इन दोनों मार्गों में से आप किधर जाना चाहोगे? आप अपने विवेक के आधार पर स्वयं निर्णय करें।

(6) अपने सिख भाइयों से निवेदन

वैसे आपका सिख पंथ कोई पृथक् पंथ नहीं हैं। तत्कालीन सामाजिक व धार्मिक दुरवस्था से दुःखी होकर गुरु नानकदेव जी ने मानवता की भलाई के लिये वैदिक (कथित हिन्दू) धर्म को ही अपने ज्ञान के अनुसार सरल ढंग से प्रस्तुत किया। उन्होंने कहा–

''ओंकार वेद निरमए।'' (राग रामकली महल्ला१, ओंकार शब्द१)
अर्थात् ईश्वर ने वेद बनाये।

''हरि आज्ञा होए वेद पाप–पुन्न विचारिआ।''
(मारड खणे महल्ला ५। शब्द १)

अर्थात् ईश्वर की आज्ञा से वेद हुये, जिससे मनुष्य पाप–पुण्य का विचार कर सकें।

''असंख्य ग्रन्थ मुखि वेद पाठ।'' (जपुजी १७)
अर्थात् असंख्य ग्रन्थों के होते हुए भी वेद पाठ सबसे मुख्य है।

''वेद कतेब कहहु मत झूठे, झूठा जो न विचारे।''
(गुरु ग्रन्थ साहेब, राग प्रभाती कबीर शब्द ३)

अर्थात् वेद शास्त्र को झूठा मत कहो। झूठा वह है, जो विचार नहीं करता।

दशम गुरु ग्रन्थ साहेब विचित्र नाटक अध्याय ४ में उद्धृत किया है–

भुजंगप्रयात छन्द–
''जिनै वेद पढ्यो सुवेदी कहाए, तिने धरम के करम नीके चलाए।''

अर्थात् जिन्होंने वेद पढ़ा, वे वेदी कहाये (गुरु नानक देवजी का जन्म इसी वेदी परिवार में हुआ)। उन्होंने उत्तम धर्म के कर्म चलाए।

(वेदों का यथार्थ स्वरूप से उद्धृत पृ. १८-२०)

इन सभी वचनों से स्पष्ट है कि आप विशुद्ध वैदिक धर्मी है। गुरु गोविन्द सिंह जी साहब ने मुगल अत्याचारों को चुनौती देने तथा आर्य (हिन्दू) जाति व वैदिक सनातन धर्म की रक्षा के लिए ही खालसा पंथ नाम से सैनिक संगठन बनाया था। खेद है कि आप अपने पावन गुरु ग्रन्थ साहब के मूल तत्व व आदेश कि वेद पढ़ना चाहिये, जो ईश्वर की वाणी है, को भूलकर एक पन्थ विशेष में फंस कर रह गये हैं। कभी-२ कुछ भ्रान्त लोग अपने को अल्पसंख्यक समझ वैदिक पथ के विरोधी भी बनते देखे जाते हैं। अपने गुरु साहिबानों तथा बन्दा वैरागी जैसे वीरों पर हुये अत्याचारों को भुलाकर कुछ लोग आपको आर्य (हिन्दुओं) जाति का विरोधी ही नहीं, अपितु शत्रु बनने तक का प्रयास करते देखे वा सुने जाते हैं।

अब आपको निश्चय करना है कि आप अपने गुरु साहिबानों के वेदानुगमन के आदेश को स्वीकारेंगे अथवा वर्तमान के कुछ समाज कंटकों के विचारों को महत्व देंगे? आप ही बोलो! मेरे भाई। आप किधर जाओगे?

(7) कथित समाजवादियों की सेवा में विनम्र निवेदन

(आरक्षण, जातिवाद, निर्धनता का स्थायी सर्वोत्तम समाधान)

दुःख को छोड़ना और सुख को पाना इस धरती पर प्रत्येक प्राणी चाहता है। मानवेतर प्राणी अपनी भूख को शान्त करने हेतु दुर्बल प्राणी को मारकर खा भी जाते हैं, परन्तु ऐसा ईश्वरीय व्यवस्था के अनुसार ही होता है। संसार का सर्वोत्तम प्राणी मनुष्य तो ईश्वरीय मर्यादा को भूलकर केवल अपने मनोरंजन व इन्द्रिय लोलुपतावश दूसरों को सताने का पाप करता रहता है। काम, क्रोध, लोभ, द्वेष, अहंकार के वशीभूत मानव ने इस संसार में कितने-२ भयंकर क्रूर कर्म किये हैं? आज यह सर्वोत्तम कहाने वाला प्राणी मानव दूसरों की टूटी-फूटी झोंपड़ियां जलाकर स्वयं भव्य भवनों में विलास करना चाहता है, अपने ही दुःखी निर्धन भाई के हाथ से सूखी रोटियां भी छीनकर स्वयं स्वर्ण पात्रों में सुन्दर सरस व सुस्वादु भोजन करना चाहता है, दूसरे भाइयों के तन से जीर्ण शीर्ण वस्त्र भी खींच कर बहुमूल्य वस्त्रों से फैशन की ललक पूरी करना चाहता है, दूसरों का गला काटकर स्वयं अमर एकाकी जीवन जीना चाहता है।

प्राचीन वैदिक काल में 'अज्येष्ठासो अकनिष्ठासः, ईशावास्यमिदं सर्वम्....तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा' ''सर्वे भवन्तु सुखिनः''......की भावना के अनुसार सभी मानव परस्पर भाई-भाई का व्यवहार करते हुये कर्म के आधार पर वर्ण व्यवस्था की सुन्दर तथा सर्वहितकारी मर्यादा में रहा करते थे। परस्पर सहयोग, सद्भाव, करुणा, प्रेम का सुन्दर शान्तिमय वातावरण था। कालगति से महाभारत के उपरान्त वह सुन्दर वर्ण व्यवस्था जन्म पर आधारित क्रूर जातिव्यवस्था में बदल गयी, जिसने इस विश्वविख्यात देश को अन्धकार, दुःख, दरिद्रता, अविद्या, वैमनस्य, चरित्रहीनता व पराधीनता के गहन गर्त में धकेल दिया। दुर्भाग्यवश यह सब पाप वेद, मनुस्मृति एवं प्राचीन ऋषियों के नाम पर हुआ। उनके ग्रन्थों में पापपूर्ण प्रक्षेप, वेद की मनगढ़न्त दूषित व्याख्यायें, इन पापों की पोषक बनीं। इससे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र जन्म के आधार पर माने जाने लगे तथा इस व्यवस्था में जन्मना शूद्र वर्ग व महिलाओं

पर बीभत्स अत्याचार हुये। इससे वे अति निर्धन, अस्पृश्य व दासवत् जीवन जीने को विवश हुये।

उन्नीसवीं सदी में कई समाज सुधारकों ने इस पाप के विरुद्ध आन्दोलन चलाये परन्तु प्राचीन वैदिक वर्णव्यवस्था का शुद्ध स्वरूप फिर से लाने का प्रयास नहीं हो सका। **आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती ने वेद एवं वैदिक मनुप्रोक्त वर्ण व्यवस्था का शुद्ध एवं सर्वहितकारी स्वरूप भारत के समक्ष लाने का भारी पुरुषार्थ किया और इसी आधार पर अपने गुरुकुलों में सबको समान शिक्षा, समान भोजनादि व्यवस्था से जातिभेद व छुआछूत मिटाकर हजारों दलित कहाने वाले भाइयों को वेदपाठी ब्राह्मण व सर्वपूज्य संन्यासी बनाया।** दुर्भाग्य से देश के नेता व समाजशास्त्री इस व्यवस्था को समझ नहीं पाये। कुछ ने तो छूआछुत व जातिभेद का दोष ही वैदिक वर्ण व्यवस्था के सिर पर मढ़ दिया। **अंग्रेजी शिक्षा से पढ़े-बढ़े कथित विद्वानों व नेताओं से वैदिक संस्कृति के वास्तविक ज्ञान की आशा की ही कैसे जा सकती है?** देश अन्ततः अंग्रेजों से स्वतन्त्र हुआ परन्तु अंग्रेजी शिक्षा सभ्यता व विचारों का और भी भयंकर रूप से दास बन गया। उस समय दलित वर्ग के नेता डॉ. भीमराव अम्बेडकर, जो स्वयं जातिगत भेदभाव व छुआछूत के दंश का दारुण दुःख भोग चुके थे, ने देश के उन करोड़ों जन्मना शूद्रों (दलितों) की दयनीय दशा को देखकर उन्हें कुछ सम्बल प्रदान करने हेतु दया व सद्भावनावश दस वर्ष के लिये आरक्षण व्यवस्था को लागू किया। यद्यपि सिद्धान्ततः वे इसे दलितोद्धार का स्थायी समाधान नहीं मानते थे तथा महात्मा गांधी, पं. नेहरू इस नीति के विरुद्ध थे, पुनरपि दस वर्ष के लिये व्यवस्था लागू की गयी। यद्यपि डॉ. अम्बेडकर की शिक्षा व जीवन के विकास में आर्य समाज से प्रभावित बड़ौदा व कोल्हापुर के नरेशों ने महती भूमिका अदा की पुनरपि डॉ. अम्बेडकर दलितोद्धार के कार्य में आर्य समाज के विचारों व कार्यों का कोई उपयोग नहीं कर पाये। मैं यह मानता हूँ कि डॉ. अम्बेडकर ने उस आरक्षण व्यवस्था को अपने राजनैतिक स्वार्थवश लागू नहीं किया बल्कि वे वास्तव में दलितों के प्रति सद्भावना रखकर उन्हें सम्मानित जीवन प्रदान करना चाहते थे। खेद है कि

प्रथम पीढ़ी के राजनेताओं के पश्चात् देश के नेताओं ने आरक्षण को दलित हित का बहाना बनाकर अपने वोट का हथियार बना लिया और अंग्रेजों की 'फूट डालो-राज करो' की नीति को ही अपनाया। यदि उन राजनेताओं में दलितों के हित की जरा भी भावना होती, तो वे दस वर्ष के बाद आरक्षण व्यवस्था की समीक्षा करके यह देखते कि कितने दलितों को इससे लाभ हुआ और कितने इससे वंचित रहे? वे यह भी देखते कि इससे देश की प्रतिभाओं के साथ कोई अन्याय तो नहीं हुआ? जिन दलितों का जीवन स्तर सामान्य हो गया था, उन्हें आरक्षण के लाभ से मुक्त करके अन्य नारकीय जीवन जीने वाले दलितों को इसका लाभ देते हुये प्रति पांच वर्ष बाद समीक्षा करते, तो अब तक कोई दलित गरीब रहता ही नहीं और सही अर्थों में कहें तो कोई दलित, दलित (दबा हुआ, शोषित) रहता ही नहीं। परन्तु ऐसा करने से चतुर नेताओं को वोट का उतना लाभ नहीं मिलता और न आरक्षण का लाभ उठाने वाले अपनी पीढ़ी दर पीढ़ी को सर्वदा के लिये अधिकतर सम्पत्तिसम्पन्न बना पाते। **दुर्बल गरीब कभी आन्दोलन नहीं करता बल्कि वह अपने नेताओं विशेषकर अपने ही वर्ग के अमीरों का मुहरा बनकर अपनी हानि ही करता है।** इस प्रकार दलित के साथ किसी ने सच्चा न्याय नहीं किया। श्री विश्वनाथ प्रतापसिंह के शासन में मण्डल कमीशन की सिफारिशें लागू करके देश के नेताओं ने अपने स्वार्थ के लिये अनेकों युवकों को जीवित जला डाला, परन्तु किसी भी राजनैतिक दल की आँखों में एक बून्द आँसू नहीं आया। उसके पश्चात् सारे देश में जातीय वैमनस्य की आग तेजी से फैलती रही और नेता लोग तमाशा देखते रहे। **जाति के नाम पर संगठन, सेनाएं, विद्यालय, धर्मशालाएं, छात्रावास, मन्दिर बन रहे हैं। ईश्वर को भी जातियों में बांट दिया है। वोटों में जातिवाद सबसे बड़ा मुद्दा होता है। लाभ चन्द नेताओं व चतुर लोगों को होता है और सामान्य जन परस्पर अनावश्यक वैमनस्य की आग में जलते हैं।**

इस अभागे देश में समर्थ व दबंग कहाने वाले भी स्वयं को पिछड़ा मनवाने तथा आरक्षण को अधिकार बताकर देश में तोड़-फोड़, आगजनी, हिंसा व घृणा की आग लगाने का कार्य करते हैं। सरकारी सम्पति को क्षतिग्रस्त करके जनसाधारण को त्रस्त किया जाता है। नेता उन्हें भड़काने का कार्य करते हैं। कहीं पुलिस आन्दोलकारियों से पिटती

है, तो कहीं उन पर गोली–लाठी चलाने को विवश होती है। नेता तमाशा देखते हैं। जिन्हें आरक्षण मिला हुआ है, वे विशेष आरक्षण की मांग करते हुए अपने जनबल के आधार पर देश को बंधक बना लेते हैं। रेल व बसों को आग लगाते हैं, रेल की पटरियां उखाड़ते, विद्यालयों, चिकित्सालयों को नष्ट करते हैं। **जब आरक्षित लोग ही ऐसा कर सकते है, फिर जिन्हें आरक्षण मिला ही नहीं, जो राजनैतिक भेदभाव से त्रस्त हैं, उनका रूप कितना उग्र होगा, यह अनुमान लगाना भी भयंकर है।** यह सत्य है कि लोकतन्त्र में सबको अपनी मांग करने का अधिकार है परन्तु जातीय नेता इसके लिये तोड़फोड़ कराते रहें, देश व राज्य को बन्धक बना लें, देश व राज्य के आन्दोलनकारियों की अपेक्षा कई गुने बड़े जनसमूह को त्रस्त करें, पुलिस गोली चलाने को विवश हो और युवा मरते रहें, विपक्षी राजनैतिक दल तमाशा देखते रहें, तो कोई आरक्षण के पक्ष वा विपक्ष में भड़काऊ बयान देकर आग में घी डालते रहें, यह सब इस देश को कब तक जीवित रख पायेगा? इस देश में कुछ ऐसे खतरनाक विदेशी षड़यन्त्रकारी संगठन भी हैं, जो कथित सवर्णों को विदेशी बताकर शेष भारतीयों को गैर हिन्दू व देश का मूल निवासी कहकर भावी गृहयुद्ध की तैयारी में जुटे हैं। जिनकी योजनाएं गुप्त हैं, और यदि गुप्त नहीं हैं, तो और भी लज्जाजनक स्थिति है कि जानकर भी कोई कार्यवाही नहीं हो रही।

शोक है कि इस देश में वर्गविहीन सामाजिक समरसता की स्थापना हेतु आरक्षण आदि की अस्थायी व्यवस्था की गयी थी, उसी कुव्यवस्था ने देश में सामाजिक वर्ग संघर्ष की आग लगा दी है। जन्म के आधार पर विघटनकारी अन्यायपूर्ण जो जाति व्यवस्था मध्यकाल में थी, वही आज भी है, बस क्रम उलट गया है। जन्म, मृत्यु, विद्यालय, चिकित्सालय, छात्रावास, बैंक सर्वत्र जाति पूछी जाती है। कोई सरकारी कार्य बिना जाति पूछे व लिखे नहीं होता है। **शोक है कि इस अभागे देश में कोयले की कालिख मिटाने हेतु साबुन के स्थान पर कोयलों को ही घिसा जा रहा है।** आज इस देश में हिन्दू, मुस्लिम, ईसाई, बौद्ध पुनः जैन, सिख, ब्राह्मण, राजपूत, बनिया, जाट, राव, यादव, गुर्जर, लोधे, कुर्मी, रेबारी (बघेल), प्रजापत, घांची, चारण, विश्नोई, मेघवाल, जाटव, वाल्मीकि, भील, मीणा आदि कहाने वाले करोड़ों हैं परन्तु **सारे भारत में एक भी भारतीय कहाने वाला दिखाई नहीं देता, तब मानव**

का पुतला तो कहाँ से आयेगा? परमात्मा ने तो सबको मानव बनाया था परन्तु यह मानव न बनकर पता नहीं क्या–क्या बन गया? इसने तो परमात्मा को भी जातियों में बांट दिया। काश! इस देश का नागरिक मानव न सही, तो भारतीय तो बन जाता, तो आज हमारा देश जाति और मजहबी आग में यों जल नहीं रहा होता। **परन्तु देश की राजनीति भारतीयों के हित के लिये नहीं है,** बल्कि चन्द राजनेताओं के लिये है। आप सोचेंगे कि समस्या को बताने मात्र से काम नहीं चलेगा अपितु उसका समाधान भी करना होगा।

सुधी पाठकगण! मैं इसका पूर्ण व सर्वमान्य समाधान तो बताऊंगा ही परन्तु उससे पूर्व आपसे जानना चाहूँगा कि अब तक की आरक्षण व्यवस्था का परिणाम क्या रहा है? आज जब मैं महानगरों की झुग्गी झोंपड़ियों, फुटपाथों आदि में लाखों दीन दुःखियों, जिनकी आँतें भूख से सूख चुकी हैं, को नारकीय जीवन जीते देखता हूँ। देहाती क्षेत्रों में आज भी अनेक मेघवाल, पाऊआ, जोगी, नट, सपेरे, सफाई कर्मियों, भील, गरासिया आदि की दयनीय दशा को देखता हूँ (इनमें जाटव वा मेघवालों में से तो कुछ विकसित भी हुये हैं) तो सोचता हूँ कि क्या इन दलित कहाने वालों के लिये कोई आरक्षण व्यवस्था नहीं है? कथित पिछड़े वर्ग में कुछ समुदाय एकता की लाठी के बल पर आरक्षण पा चुके हैं। आश्चर्य है कि **जो आरक्षण दया भावनावश सुविधा मात्र था, वह आज मूछों व पगड़ी की पहचान बन गया है। पहिले वीरता की पहचान स्वयं को उच्च कहलाने में थी, उसी में पगड़ी व मूछों की शान थी परन्तु आज स्वयं को पिछड़ा व दलित कहाने हेतु देश की व्यवस्था को ठप करने में शान समझी जाती है। पहिले मांगना बुरा समझा जाता था परन्तु आज यह अधिकार समझा जा रहा है।** आज आई.ए.एस. अधिकारी से लेकर राष्ट्रपति बनने पर भी दलित, पिछड़े का अभिशाप नहीं छूट पा रहा है। ऐसे ही लोग जातीय आरक्षण की आग को बढ़ावा देते हैं। यदि कोई आर्थिक आधार पर आरक्षण की मांग करता है, तो ये गरीबों, मजदूरों, किसानों, छात्रों को जाति के नाम पर भड़का कर उपद्रव खड़ा कर देते हैं। गरीब दलित व पिछड़े बेचारे जानते ही नहीं हैं कि उनके नेता उनके हित के लिये नहीं, बल्कि अपनी सन्तानों व पीढ़ियों के स्वार्थवश आर्थिक आधार पर आरक्षण का विरोध करते हैं। क्रीमीलेयर को आरक्षण देने की मांग क्या देश में करोड़ों गरीब दलितों,

पिछड़ों, किसानों, मजदूरों, अल्पवेतनभोगी कर्मचारियों के हित के लिये है अथवा उनके नाम पर आरक्षण की वकालात कर इनमें से बने अमीरों, नेताओं व उच्च अधिकारियों के स्वार्थ में लिये है। **आरक्षण के लाभ से उच्च पदों पर आसीन ये जातीय नेता जानते हैं कि यदि आर्थिक आधार पर आरक्षण व्यवस्था हो गयी, तो आरक्षण का लाभ दीनहीन झुग्गी झोंपड़ी में रहने वाले लोग, मजदूर, किसान, गरीब ले जायेंगे और उनकी सन्तानों को इसका लाभ नहीं मिलेगा और वे गरीब भी शीघ्र सम्मानजनक जीवन जीने लगेंगे, फिर उनकी नेतागिरी कैसे चलेगी?** जरा सोचें कि कोई दलित वा पिछड़ा नेता क्या गरीब भी है? कोई अधिकारी क्या गरीब है, तब वे क्यों आर्थिक आधार पर आरक्षण को स्वीकार करेंगे? **आज जिन्हें पांच सितारा होटलों की सुविधाएं सन्तुष्ट नहीं कर पातीं तथा अपने जन्म दिन पर अरबों रुपयों की वसूली करते तथा अपने जीते जी अपनी ही मूर्तियों का अनावरण स्वयं करके करोड़ों रुपया बहायें, वे भी स्वयं को दलित बताकर दलितों के हित की बात करें, यह इस अभागे व मूर्ख देश में ही सम्भव है। यह करोड़ों दलितों वा गरीबों के साथ क्रूर मजाक है। सत्ता उनके हाथ में है, गरीब के हाथ में तो वोट है, जिसे देना कहाँ है, यह भी वह नहीं जानता। बेचारा जाति के नाम पर भावुक होकर वोट देता जाता है और नरक में पड़े ही रहना उसके भाग्य में है।** आज इस जातीय आरक्षण व्यवस्था ने देश में दलितों में दलित व पिछड़ों में पिछड़े पैदा कर दिये हैं। जाटों, पटेलों, गुर्जरों का आन्दोलन, भीलों द्वारा अनुसूचित जनजाति में अलग आरक्षण की मांग, रेबारी आदि समाजों द्वारा भी जनजाति में सम्मिलित होने की मांग, इसी पाप का परिणाम है। गुर्जर आदि ओबीसी में अपने आरक्षण को असुरक्षित अनुभव कर रहे हैं। वे पूर्वी राजस्थान के मीणा समाज के जीवन स्तर को अपने से अच्छा देख रहे हैं, इस कारण उनमें रोष स्वाभाविक है। इधर गुर्जर आदि के जनजाति में सम्मिलित होने से भील, मीणा आदि अपने अधिकार छिनने से भयभीत हैं। इस कारण वे विरोध का बिगुल बजा रहे हैं। सेनाएं बनाकर परस्पर युद्ध का आह्वान भी कभी कभी हो रहा है। इस सबका परिणाम क्या होगा, कोई सोचने वाला नहीं है।

पाठकगण! अब मैं संक्षेप में सभी समस्याओं के समाधान हेतु दो उपाय बताता हूँ।

प्रथम समाधान– प्रथम यह कि सभी प्रकार की आरक्षण व्यवस्था को पूर्णतः तत्काल प्रभाव से समाप्त करके देश के सभी क्षेत्रों व सभी वर्गों का आर्थिक सर्वेक्षण होवे। जो गरीबी रेखा से नीचे जीवन जीने वाले हैं, उनको ही आरक्षण का लाभ मिले। इस देश में गरीब व अमीर दो ही वर्ग माने जायें परन्तु विशेष योग्यता वाले पदों पर आरक्षण न देकर गरीब को पढ़ने व बढ़ने हेतु सुविधाएं मिलें, क्योंकि गरीब कभी भी धनी, तो क्या सामान्य स्तर की सुविधा पाने वालों से भी प्रतिस्पर्धा नहीं कर सकता।

यह भी ध्यातव्य है कि देश के निर्धन वर्गों वा व्यक्तियों के सर्वेक्षण के समय इस बात की भी जाँच की जावे कि वे निर्धन क्यों हुये हैं? कई बार देखा जाता है कि कामचोरी, आलस्य, प्रमाद, नशाखोरी, जुआ, फिजूलखर्ची, अधिक सन्तान पैदा करके अपने वोट बढ़ाने तथा फिर संख्या के बल पर अधिकारों के लिये संघर्ष करने की भावना रखना आदि दोष भी निर्धनता के कारण होते हैं। अल्पसंख्यक विशेषकर मुस्लिम वर्ग में सन्तानों व पत्नियों की बहुलता एक आम रोग है, जिसे वे मजहबी कारणों से उचित मानते हैं। ऐसे सभी कारणों को दूर करने का उपाय साम, दान, दण्ड, भेद आदि सभी विधियों से करने का यत्न किया जाना चाहिए। जो व्यक्ति सुधार का विरोध करें, उन्हें कोई भी राजकीय सहायता नहीं दी जानी चाहिये। यदि वे लोग इन दोषों के साथ जनसंख्या वृद्धि करके राष्ट्रिय एकता व अखण्डता को चुनौती देने की भावना रखते हों, तो उन्हें तत्काल कड़ा दण्ड देना चाहिये। **हमें अपने इतिहास की भूलों व गौरव दोनों से ही शिक्षा लेकर राष्ट्र को सशक्त, अखण्ड व समृद्ध बनाने का प्रयास करना चाहिए।**

द्वितीय परन्तु सर्वोत्तम समाधान– इससे भी उत्तम बल्कि सर्वोत्तम स्थायी उपाय यह है कि देश में अनिवार्य शिक्षा लागू होवे। जो माता पिता बच्चों को नहीं पढ़ायें, उन्हें दण्ड मिले। अति गरीब माता पिता, जो बालकों की भीख व मजदूरी पर ही आश्रित हैं, उन्हें वृद्धावस्था पेंशन वा वृद्धाश्रम की सुविधा मिले। राष्ट्रपति से लेकर गरीब भिखारी, दलित, पिछड़ा, सवर्ण, उद्योगपति सभी के बच्चों के लिये सर्वत्र एक समान सुविधा वाले विद्यालय होवें। सब छात्रों का खान पान, रहन सहन समान

होवे। निजी रूप से किसी भी छात्र को कुछ भी सुविधा पाने का अधिकार नहीं हो। निजी शिक्षण संस्थान व निजी छात्रावासों पर पूर्ण प्रतिबन्ध होवे। किसी भी सरकारी कार्य में जन्मना जाति का कोई भी स्थान न हो। वर्तमान में सर्वशिक्षा तथा पोषाहार के नाम पर शिक्षा व्यवस्था का सर्वनाश कर डाला है? केवल साक्षर करने वा इसके भी फर्जी आंकड़े भरने व पोषाहार चोरी करने हेतु विदेशों से भीख मांग-मांग कर देश के कर्मचारी व नेता पूंजीपति बनते जा रहे हैं, जो गरीब बच्चों के ग्रास को भी छीनकर क्रूर अपराध कर रहे हैं। हा हन्त! परन्तु इस मनुप्रणीत व्यवस्था में ऐसा नहीं होगा। फिर विद्यालयों से निकलकर योग्यतानुसार काम मिले। **तब गरीब-अमीर, पिछड़ा-दलित-सवर्ण का भेदभाव समाप्त हो जायेगा। कोई भी आरक्षण की मांग नहीं कर सकेगा। नेताओं को उपद्रव कराने का अवसर नहीं मिलेगा।** कोई पूछेगा कि इतना व्यय शासन कैसे करेगा, उसका उत्तर यह है कि जब माता पिता को बच्चों के पालन पोषण, शिक्षा व चिकित्सा आदि की चिन्ता से मुक्ति मिल जायेगी, तो वे प्रसन्नता से शासन को अधिक कर देंगे। कर व्यवस्था चुस्त हो। सारे देश में केवल भारतीय, उससे भी आगे बढ़कर मानव ही दिखाई देंगे। जातीय व साम्प्रदायिक संघर्ष बन्द हो जायेंगे। गरीब व अमीर का भेद समाप्त होकर अनेक प्रकार के आतंकवाद से भी देश मुक्त होकर **यह राष्ट्र एकता, अखण्डता, समरसता, सुख, समृद्धि एवं विद्याबल से विश्व में एक महाशक्ति बन सकेगा। सबकी पगड़ी व मूंछों का सम्मान बचेगा। देश का गौरव बढ़े, यह पुनः जगदगुरु व चक्रवर्ती देश बने, इसके लिये प्रत्येक देशवासी को उठने की आवश्यकता है। देश बचेगा, तो सब बचेंगे और देश मर गया, तो सब मिट जायेंगे। आयें, हम अपने धर्म व कर्तव्य को समझ कर इस देश को पुनः महान् बनायें।**

नोट- वर्तमान विवेकहीन आरक्षण व्यवस्था में परीक्षा में अनुत्तीर्ण होने वाले भी चयनित हो जाते हैं और अति उच्च योग्यता वाले सवर्ण रह जाते हैं। न केवल अनुत्तीर्ण अपितु शून्य अंक वाले भी विज्ञान, गणित जैसे विषयों के अध्यापक बन जाते हैं। जरा विचारें! कि ऐसे शिक्षक क्या पढ़ायेंगे? उनसे पढ़ने वाले देश के कितने बच्चों का भविष्य नष्ट होगा? उन नष्टभविष्य बच्चों में से कितने बच्चे आरक्षित वर्ग वाले भी होंगे, तब इन चालक, स्वार्थी नेताओं ने एक व्यक्ति को लाभ दिलाने

के लिये हजारों जीवन बलिदान कर दिये। इसी प्रकार अयोग्य डॉक्टर, इंजीनियर, अन्य अधिकारी आदि बनने से देश को विनाश की आग में झोंककर राजनैतिक रोटियां सेकी जा रही है।

निवेदन– क्या हमारी सर्वहितकारिणी व्यवस्था पर ये स्वार्थी नेता कभी विचार कर पायेंगे अथवा वर्तमान की स्वार्थ, अन्याय, पक्षपात, सामाजिक विध्वंस एवं राष्ट्र की पतनकारिणी अव्यवस्था को ही तब तक ढोते रहेंगे, जब तक कि यह राष्ट्र समाज पूर्णतः नष्ट–भ्रष्ट न हो जाये। बोलो मेरे कथित समाजवादी, समरसतावादी पाठक! हृदय पर हाथ रखकर बोलो! आप किधर जाओगे? उत्थान के मार्ग वा पतन की राह पर? निर्णय आपको करना है। हाँ, निर्णय करते समय अपने स्वार्थों को दूर रखना। केवल राष्ट्र व समाज का स्थायी हित ही देखना।

(8) एक सन्देश विश्वभर के सैक्यूलरवादियों से

(सेक्यूलरिज्म - पंथनिरपेक्षता)

हमारे संविधान का यह मुख्य स्तम्भ माना जाता है। प्रायः इसे धर्मनिरपेक्षता, इस मिथ्यार्थ में सम्बोधित किया जाता है। आज भारत में प्रत्येक दल या नेता एवं बुद्धिजीवी स्वयं को सच्चा सेक्यूलर व धर्मनिरपेक्ष सिद्ध करने में लगा है। वह ''धर्म'' तथा ''निरपेक्ष'' दोनों ही शब्दों का अर्थ तक भी नहीं जानता पुनरपि 'धर्म' शब्द से ऐसे डरता है, जैसे कोई विषधर सर्प को छूने से डरे। **प्रत्येक नेता कथित प्रबुद्ध वा पत्रकार बड़े आत्माभिमानपूर्वक बड़े-बड़े भाषण सर्वमतसमभाव पर ऐसे देता हे, मानो उसने सभी मतों के मूल ग्रन्थों का गहन अनुशीलन किया हुआ हो।** ऋग्वेद की एक सूक्ति **'एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति'** का सहारा लेकर उसका अर्थ न जानते हुये भी उसे उद्धृत करके सत्य-असत्य, धर्म-अधर्म, चोर-साहूकार, नैतिक-अनैतिक, हिंसक-दयालु, विज्ञान-अज्ञान व सनातन-नवीन, सबको समान बतलाता है। उसकी भाषा तुष्टिकरण की होती है, चाहे वह चुनाव में जीतने की भावना के कारण हो अथवा प्रसिद्धि वा पुरस्कार पाने की लालसावश। वह सत्यासत्य के शोधकर्ता की भाषा बोलने का साहस नहीं रख सकता क्योंकि वह निःस्वार्थ नहीं है। भारत के २-३ हजार वर्ष पुराना इतिहास, वह भी अंग्रेजी लेखकों की पक्षपाती दृष्टिकोण से दूषित हो चुका है, को कॉलेज में कुछ पढ़ने मात्र से स्वयं को इतिहासकार मानने का भ्रम पाले हुये हैं। उसे भारत या आर्यावर्त्त के लगभग १ अरब ९६ करोड़ वर्ष पुराने इतिहास से कोई प्रयोजन नहीं है। वह मध्यकालीन बहु सम्प्रदायों व जातियों में बंटे नष्ट-भ्रष्ट भारत को ही आदर्श मानकर देश को बहुधर्मी, बहुरंगी बताकर न केवल इस मतभिन्नता के अभिशाप को भारत की नियति व अनादि इतिहास मान रहा है, अपितु इसको गौरवमय भी मान रहा है। वह बुद्ध व महावीर से पूर्व किसी महापुरुष को जानता व मानता ही नहीं और जो कोई श्रीराम का नाम लेने वाले हैं, उन्हें इनके इतिहास का ज्ञान ही नहीं, इसी कारण वे भी भारत को बहुरंगी व बहुधर्मी बतलाते हैं। उनकी दृष्टि में मन्दिर बनने से ही रामराज्य साकार हो जायेगा। कोई भी नहीं विचारता कि मानवमात्र एक ईश्वर की सन्तान है। कोई ईश्वर न मानकर प्रकृति आदि कुछ भी कह सकता है परन्तु सब एक हैं, इतना मानते हुए भी उनका धर्म एक ही

हो सकता है, ऐसा क्यों नहीं मानते? कुछ लोग मानते हैं कि मानव बुद्धिजीवी प्राणी है, इस कारण अपनी-अपनी बुद्धि के अनुसार एक ही बात की अलग-अलग व्याख्या करें, यह स्वाभाविक है। **वे इतना नहीं सोचते कि एकता बुद्धिजीवी ही देख व कर सकता है, अलग-अलग रास्ते तो पशुओं के होते हैं।** विज्ञान, गणित, अर्थशास्त्र, कृषि आदि क्षेत्रों में कैसे सब लोग एक मत होते हैं, जबकि कुछ काल पूर्व अल्प शिक्षा के कारण अलग अलग मत वाले थे। इसी कारण बुद्धि से विचार कर धर्म मार्ग में क्यों एक मत नहीं हो सकते? **क्यों हम यह नहीं विचारते कि जब सम्पूर्ण सृष्टि और उसके भौतिक नियम सार्वभौमिक व शाश्वत हैं तथा इन्हें बनाने वाला ईश्वर भी सार्वभौमिक व शाश्वत एकमात्र सत्ता है, तब उस ईश्वर को प्राप्त करने, उसे जानने तथा आत्मा को समझने के नियम वा विज्ञान (अध्यात्म विज्ञान) भी एक ही होगा। वह विज्ञान भी सार्वभौमिक व शाश्वत होगा। इस प्रकार मानवमात्र का धर्म एक ही होगा, जो विज्ञान व तर्क के आधार पर टिका होगा, न कि अपनी-२ मिथ्या आस्थाओं व विश्वासों पर। वह धर्म व ईश्वर वास्तविक सत्ता है, न कि व्यक्तिगत कल्पनाओं पर आधारित काल्पनिक पदार्थ।** धर्म को मिथ्या आस्था व विश्वासों का विषय बताकर सबको स्वच्छन्द कर परस्पर लड़ा मारना स्वभाव बन गया है, तो कोई अनेकता में एकता का भ्रामक नारा लगाते हैं, वे लोग धर्म को समझते ही नहीं। **धर्म सत्य पर आधारित होता है और ध्रुव सत्य सदैव एक ही होता है** तथा भावों की समानता आवश्यक है और इसके लिए परस्पर प्रीतिपूर्वक सम्वाद करके सत्य-ग्रहण व असत्य-परित्याग की अनिवार्यता होती है परन्तु कोई भी अपने को राष्ट्रवादी या मानवतावादी मानने वाला सम्पूर्ण राष्ट्र या विश्व को परमपिता का परिवार मानकर एक धर्म, एक विचार बनाने का प्रयास ही नहीं करता। **वह फूट को ही भूषण व विशेषता मानता है, यह कैसा पागलपन है? 'मजहब नहीं सिखाता आपस में वैर रखना' ऐसा भ्रमपूर्ण गीत गा-गाकर मस्त होकर स्वयं तथा देश को छल रहा है। जहाँ मजहबी आतंकवाद से सारी मानवता थर्रा रही हो, हजारों वर्षों से खूनी होली खेली जाती रही हो एवं आज भी खेली जा रही है, मजहब के नाम पर दूसरे मजहब वालों को मारना ही पुण्य समझा जाता हो, कहीं धर्म या मजहब के नाम पर नारी तथा शूद्र वर्ग को ताड़ना का अधिकारी बताया जाता हो, पशु से भी बदतर मानव से मानव व्यवहार करता हो, कन्याओं को जिन्दा भूमि में गाड़ दिया जाता**

हो, विधवाओं का मुख देखना पाप समझा जाता हो, चूल्हे चौके तक धर्म को संकुचित कर छोटी–छोटी बात पर धर्म से निष्कासित कर दिया जाता हो, तथाकथित धर्मग्रन्थों में दूसरे मजहब वाले या उनके देवी–देवताओं को गालियाँ लिखी हों और उन्हें ही प्रमाण माना जाता हो, मजहब के नाम पर व्यभिचार (देवदासी प्रथा, रासलीला) हिंसा, बलि, मांसभक्षण, मदिरादि सेवन को पुण्य माना जाता हो, मजहब के नाम पर मिथ्या अहिंसा व झूठे वैराग्य ने राष्ट्र को पराधीन बनाया हो, ईश्वर की मिथ्या भक्ति ने देश को अकर्मण्य बना गर्त में डाला हो, धर्म के नाम पर दूसरे धर्मस्थलों को नष्ट किया जाता रहा हो, राष्ट्रियता को मिटाया जा रहा हो परन्तु फिर भी हमारे बुद्धिजीवी व नेतागण 'एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति' का मनमाना अनर्थ कर उपर्युक्त सारे पापों को मान्यता देकर सब पंथों को समान बताने की नादानी कर रहे हैं । इन लोगों को 'एकं सद्विप्रा........' यह पूरा मन्त्र भी स्मरण नहीं होगा, उन्होंने मजहबी ग्रन्थों के दर्शन भी नहीं किये हैं पुनरपि 'अन्धा अन्धे को रास्ता बताये' की भाँति एक–दूसरे से सुनकर, आधा–अधूरा पढ़कर भोले–भाले लोगों को भ्रमित कर रहे हैं। ये नहीं जानते कि सत्य का गला दबाने से क्या–क्या अनर्थ हो सकते हैं? असद्मार्गी, पापी व स्वार्थी लोग इनकी मूर्खता, दुष्टता अथवा लोभी प्रवृत्ति का लाभ उठाकर अपने पाप कर्मों का निरन्तर विस्तार कर रहे हैं। नित नये मत–मजहब जन्मने से देश खण्ड–खण्ड होता जा रहा है। साम्प्रदायिक उन्माद बढ़ता जा रहा है। परस्पर खून के प्यासे हो रहे हैं। सहिष्णुता समाप्त हो चली है। कोई नहीं जानता व सोचता कि सत्य व हितकार क्या है?

मैं यहाँ सनातन वैदिक धर्म को अपनाने का आग्रह तो नहीं करूँगा क्योंकि दुर्भाग्यवशात् देश के शासकों व शासितों, निर्देशक व निर्दिष्टों में इतनी निष्पक्ष व दूरदृष्टि नहीं कि वे हजारों वर्ष पूर्व के इतिहास व धर्म का सत्य–सत्य आकलन कर सकें। हमारे ये भाई मैकाले की शिक्षा पद्धति में पले अथवा अपने–अपने मजहबी चश्मों से ऐसे हो चुके हैं कि इन्हें दूसरा कुछ सूझता ही नहीं और सब ठीक है, कहकर टाल देते हैं। इस कारण मैं इनकी पंथनिरपेक्षता की ही सही लेकिन ईमानदारी व निष्पक्षता से चर्चा करूँगा। हमारा देश सही अर्थ में पंथनिरपेक्ष बनना चाहिये। मैं यहां उन पक्षपाती कानूनों की चर्चा तो

नहीं करूँगा, जो इस सेक्यूलर नेताओं ने बनाये हैं परन्तु इतना अवश्य निवेदन है कि **देश में मजहब के नाम पर बनी अल्पसंख्यक-बहुसंख्यक अवधारणा को समाप्त कर समस्त आयोगों, बोर्डों तथा कानूनों को तत्काल समाप्त करके समान कानून बनाया जावे। मजहब के नाम पर सभी भेदभावों को समाप्त किया जावे।** मजहब के नाम पर देश-विभाजन आदि जो पाप हुये हैं, उनके लिये सभी सेक्यूलर नेता देश की जनता से माफी माँगें। **सभी मजहबों की सत्यता की परीक्षार्थ एक विशाल राष्ट्रिय सम्मेलन बुलाया जावे। इस महासम्मेलन में देश के सभी मजहबी एवं वैदिक संगठनों को छः मास पूर्व सूचना देकर शास्त्रार्थ, संवाद के लिये आमन्त्रित किया जावे। वे संगठन अपने-अपने आचार्यों, साधुओं, शंकराचार्यों, महामण्डलेश्वरों, महन्तों, पादरियों, पण्डितों, मौलवियों, गुरुओं, जैन-बौद्ध आदि साधुओं को शास्त्रार्थ की तैयारी के साथ भेजें। जो लोग धर्म को अफीम की गोली कहते हैं अथवा सेक्यूलर लोगों, जो भी मजहबों को धर्म कहकर समभाव की बात करते हैं अथवा अपने को प्रगतिशील व बुद्धिजीवी वैज्ञानिक कहते हैं, मानवतावादी, राष्ट्रवादी कहाने वालों, पत्रकारों, साहित्यकारों, न्यायाधीशों, कानूनविदों, इतिहासवेत्ताओं एवं समाजशास्त्रियों को भी आमन्त्रित किया जावे। इस विशाल सम्मेलन का आयोजन भारत का राष्ट्रपति करे एवं स्वयं सभी पूर्वाग्रहों से मुक्त होकर निष्पक्ष न्यायाधीश के रूप में आयोजन करे। सहयोग के लिये सर्वोच्च न्यायालय के सभी न्यायाधीशों तथा सभी उच्च न्यायालयों के मुख्य न्यायाधीशों को अपने साथ रखे।** सभी वक्ताओं, संगठनों को स्पष्ट बता दिया जावे कि 'शास्त्रार्थ, संवाद प्रीतिपूर्वक राष्ट्र कल्याणार्थ एवं विश्व के हित में हो रहा है। किसी की हानि व किसी का लाभ प्रयोजन नहीं है। जय-पराजय की भावना तथा ईर्ष्या-द्वेष, अपना-पराया का भाव त्याग कर राष्ट्र को परिवार समझ इस गम्भीर मुद्दे को हल करना है। जो भी सत्य होगा, उसे ही राष्ट्रधर्म की उपाधि से विभूषित किया जावेगा। जो असत्य, अपूर्ण, अवैज्ञानिक तथा मानवता के हित के प्रतिकूल होगा, उसे छः मास की सूचना देकर देश में पूर्ण प्रतिबन्धित कर दिया जावेगा। उन मिथ्या पन्थों की समस्त चल-अचल सम्पत्ति राष्ट्रिय सम्पत्ति होगी और उसका उपयोग राष्ट्रधर्म के प्रचार प्रसार में किया जावेगा। सम्मेलन स्थल पर कड़ी सुरक्षा व्यवस्था हो। देश भर में सीधा प्रसारण दूरदर्शन तथा आकाशवाणी से होवे तथा सम्पूर्ण देशवासियों को सम्मेलन के एक दिन पूर्व महामहिम राष्ट्रपति

इस सम्मेलन के बारे में परिचय देने हेतु मार्मिक व प्यार भरा सम्बोधन करें। देश की सीमाओं को सील कर दिया जावे। देश भर में रेड अलर्ट कम से कम एक माह तक रहे। इससे धर्म के नाम पर फैल रहा समस्त पाप-पाखण्ड, हिंसा, मांसाहार, मदिरादि के नशे, घृणा, वैर समाप्त होकर राष्ट्र भर में एकता सुदृढ़ होगी। देश भर के लाखों पेटार्थी साधुओं, मौलवियों, पादरियों, फकीरों, गुरुओं, प्रचारकों को उचित काम देकर देश के विकास में सहयोगी बनाया जा सकेगा। देश पर भार बने भिखारियों की भीड़ छँट जावेगी अथवा सद्धर्म का प्रचार करके देश के उत्थान में सहयोगी बनेगी। यदि कोई पराजित पंथी पुनः सत्य होने का दावा करके शास्त्रार्थ करना चाहे, तो उसे पुनः अवसर मिले और जो भी सत्य होवे, मान्य होवे। जय-पराजय या सत्य-असत्य का आधार मात्र एक-दो प्रश्न नहीं बल्कि लम्बी बहस में मिले अंकों के आधार पर होवे। **सम्मेलन के आयोजक राष्ट्रपति एवं उनके सहयोगी न्यायाधीश सभी महानुभाव स्वयं निष्पक्ष व स्वच्छ हृदय रखकर वक्ताओं के प्रत्येक तर्क तथा आशय को उसी प्रकार सुनें, जैसे न्यायालयों में सुनते हैं।**

गांधीजी की भाँति तुष्टिकरण के पोषक व समरसता का मिथ्या ढोंग करने वाले नहीं बनें। राष्ट्र का प्रत्येक नागरिक समान है, कोई छोटा या बड़ा नहीं है। सभी के विचारों का पूर्ण अध्ययन करके न्याययुक्त बात करना तथा धारणा बनाना योग्य है। **'हम आह भी करते हैं, तो हो जाते हैं बदनाम, वे कत्ल भी करते तो चर्चा नहीं होती'** गांधीजी का सारा जीवन इसी अन्याय में बीता, विशेषकर मजहबी हिंसा व चर्चा के विषय में। इस प्रकार की धारणा वाला कोई व्यक्ति सत्यासत्य का निर्णय नहीं कर सकता।

इस प्रकार का सम्मेलन सच्ची पंथनिरपेक्षता एवं सद्धर्मसापेक्षता का सर्वोत्तम उदाहरण होगा, जो मानव को मानव से जोड़ने में सहायक होगा। प्रारम्भ में देश भर के मिथ्या पंथी अराजक तत्व आतंक व हिंसा फैला सकते हैं। जो सामान्य नागरिक हैं परन्तु किसी मत-पंथ के प्रति आस्थावान हैं, उन्हें पीड़ा भी हो सकती है, जैसे कि ऑपरेशन करते समय रोगी को होती है परन्तु बलपूर्वक साथ में स्नेह व आत्मीय भाव से समझा कर संचार माध्यमों से बार-बार सत्य-सत्य सन्देश सुनाकर सभी उपद्रवों को शान्त किया जा सकता है। दुष्ट व हठी स्वार्थी तत्वों

को दण्डित करके मजहबी दंगों, मतभेदों, हिंसा व अशान्ति को सदा के लिए शान्त किया जा सकता है और रामराज्य की भाँति सम्पूर्ण राष्ट्र एक धर्म, एक भावना का होकर सुराष्ट्र बन सकता है। मैं तो इससे बढ़कर यह भी निवेदन करूँगा कि **भूमण्डलीकरण के इस दौर में धर्म का भी भूमण्डलीकरण हो। विश्व मंच पर खुली चर्चा हो, जो सर्वोच्च सत्य व हितकर सिद्ध होवे, विश्व भर में मान्य होवे।**

मेरे सैक्यूलर कहाने वाले देश के शासक वर्ग वा कथित बुद्धिवादियो! आप अपने स्वार्थों को त्यागकर क्षण भर के लिए विचारें कि **क्या अल्पसंख्यक तुष्टिकरण एवं बहुसंख्यकों का तिरस्कार ही सैक्यूलरिज्म है? क्या सम्प्रदायों के नाम पर भेदभाव करना ही राष्ट्रियता का प्रतीक है? क्या राष्ट्रिय इतिहास, गौरव, ज्ञान, विज्ञान की बात करना ही साम्प्रदायिकता है?** आप तटस्थ होकर विचारें कि काश्मीर, नागालैण्ड, मणिपुर आदि में जहाँ हिन्दू अल्पसंख्यक हैं, वहाँ के लोग क्यों स्वयं को भारत से अलग मानते हैं? क्यों वहाँ राष्ट्रविरोधी प्रदर्शन होते हैं?

अब आपके सम्मुख दो मार्ग हैं। एक मार्ग यह है कि वर्तमान की भाँति आप साम्प्रदायिक भेदभाव करके तुष्टिकरण करके देश के और टुकड़े करके अपनी सत्ता बनाये रखना चाहें अथवा सत्य-न्याय रूपी धर्म की स्थापना के उपर्युक्त विधि का प्रयोग करके राष्ट्र का आदर्श उच्च बनाने के साथ एक रखना चाहें? इतना नहीं, तो कम से कम सम्प्रदाय के नाम पर राजनैतिक भेदभाव त्याग कर समान नागरिक कानून बनाकर सबमें प्रेम समता व सहकार का भाव उत्पन्न कर राष्ट्र को सशक्त बनाना चाहोगे? **बोलो मेरे देश के कर्णधारो! किधर जाओगे? आपका निर्णय राष्ट्र के भाग्य को बदल सकता है। बोलो मेरे भाई! आप किधर जाओगे? राष्ट्र वा अपने स्वार्थ में किसे चुनोगे? यह स्मरण अवश्य रखना कि जब राष्ट्र टूट जायेगा, तब आप भी बच नहीं पाओगे? निर्णय आपके हाथ में है।**

(9) भोगवादी नास्तिक कम्यूनिस्ट आदि बुद्धिजीवियों एवं वैज्ञानिकों से निवेदन

अन्त में मैं एक ऐसी विचारधारा पर दृष्टिपात कर रहा हूँ, जो आज विश्वभर की उपर्युक्त सभी विचारधाराओं को अपने प्रबलवेग के साथ बहाए ले जा रही है। वैदिक, पौराणिक, इस्लाम, ईसाई, जैन, बौद्ध, सिख, यहूदी, पारसी आदि जितने भी मत हैं, वे इस विचारधारा के सम्मुख बौने हो गये हैं। वर्तमान युवा पीढ़ी में तो पूर्ण रूपेण इसी विचारधारा का निरंकुश साम्राज्य है, भले ही वे दिखावे के लिये अपनी-२ प्रचलित पूजा पद्धतियों का यथातथा निर्वहन करते दिखाई देते हों। जो घोषणा कभी चारवाक की थी-

''यावज्जीवेत् सुखं जीवेत् ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत्।
भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः।।''

आशय यह है कि संसार में खाओ पीओ और मौज करो। मरकर पुनः जन्म नहीं होता। यही बात कभी अशोक वनिका में नजरबन्द भगवती सीताजी से राक्षसराज रावण ने कही थी, ''हे सीता! जवानी चली जा रही है। फिर नहीं आयेगी, इस कारण मेरे साथ भोग विलास करके आनन्द मना।''

आज के युग में रावण की यह घोषणा चतुर्दिक् गूंज रही है। यद्यपि राजा रावण भोगवादी सभ्यता का प्रस्तोता था पुनरपि उसने अपने घर में कैद की हुई भगवती सीता को बलात् हाथ तक नहीं लगाया। परन्तु आज इस अभागे संसार में कौनसा ऐसा पाप है, जो नहीं हो रहा।

आज के वैज्ञानिक युग ने एक ऐसी विचारधारा की हवा को जन्म दिया, जो प्रत्यक्ष वा परोक्षरूपेण कहती है

१. जगन्नियन्ता व निर्माता परमात्मा जैसी शक्ति की कोई आवश्यकता नहीं है।
२. शरीर में जीवात्मा की सत्ता नहीं है।
३. इस ब्रह्माण्ड में सर्वत्र जड़ प्रकृति का ही साम्राज्य है। वही नियम्य है, तो वही नियन्ता। वही भोग्या है, तो वही भोक्ता। इस विचारधारा ने मानव समाज के समक्ष ऐसा मिथ्या दर्शन प्रस्तुत कर दिया कि–

मानव इस ब्रह्माण्ड की सबसे बड़ी शक्ति है। उससे ऊपर कोई नियामक व द्रष्टा शक्ति नहीं है। अतः इस संसार में जो कुछ भी दिखाई देता है, सब कुछ भोग्य है। सभी प्राणी, वनस्पति, जल, वायु, पृथिवी, अग्नि आदि सब कुछ भोग्य हैं। इनका स्वामी केवल और केवल मानव ही है। इस कारण मनुष्य ने हर वस्तु को भोग्य मानकर उसका अधिकाधिक भोग किया, दोहन किया। इससे मानव समाज में भोग के लिए घातक स्पर्धा चल पड़ी। इससे प्राकृतिक संसाधन का अत्यन्त दोहन हुआ, जिससे पर्यावरण का संकट उत्पन्न हो गया। नदी, समुद्र आदि में रहने वाले जलीय जन्तु, वनों खेतों में रहने वाले जंगली पशु–पक्षियों तथा पालतू पशुओं, सबको इस क्रूर मानव ने अपनी जिह्वा का आहार बना डाला। **आज सारे संसार में भोर होते ही लाखों करोड़ों पशुओं के बीभत्स आर्तनाद से सम्पूर्ण व्योम मण्डल कम्पायमान होता है, जिससे क्रूरता–हिंसा की घातक तरंगों के कारण संसार समस्त वायु–व्योम मण्डल दूषित हो रहे हैं। इससे वन, पर्वत, जलीय स्रोत सभी कुछ असन्तुलित हो उठे हैं। सूखा, बाढ़, तूफान, भूकम्प, सुनामी, ज्वालामुखी विस्फोट जैसे प्राकृतिक प्रकोपों के लिये यह अबाध गति से हो रही क्रूर हिंसा भी बहुत सीमा तक उत्तरदायी है। हिंसक व वन्य पशुओं की रक्षा के लिये तो विभिन्न पर्यावरणवादी भी सक्रिय होते हैं परन्तु पालतू गो आदि पशुओं तथा जलचर मछली आदि प्राणियों की रक्षा का ध्यान तक नहीं है। विश्व का सर्वोत्तम पशु गाय आज गोमाता कह पूजने वाले देश में सर्वाधिक दुखी व तिरस्कृत है। आज का कथित बुद्धिजीवी अपने अहंकार में डूबा धर्म, ईश्वर, कर्मफलव्यवस्था, पुनर्जन्म आदि सभी सत्य अवधारणाओं को ठुकराने में गौरव अनुभव करता है।** पुनर्जन्म के स्पष्ट प्रमाण मिलने पर भी यह कथित बुद्धिवादी उसे ठुकराने में ही अपनी वैज्ञानिकता मानने की मूर्खता कर रहा है। वह धार्मिक लोगों को मूर्ख

मानकर उन पर व्यंग्य करता है। यह तो सत्य है कि आज विश्व में धर्म के नाम पर मिथ्या मत पंथों के पाखण्ड, अन्धविश्वास एवं मूर्खतापूर्ण कथा कहानियों का ही प्राबल्य है। धर्माचार्यों के नाम पर मिथ्या आडम्बरी कथित साधु, ढोंगी आचार्य, मुल्ला मौलवी, पादरी, साध्वी, भिक्षु आदि की ऐसी टोली ही फिरती दिखाई देती है, जो प्रायः अनपढ़ अथवा विज्ञानादि विषयों से अनभिज्ञ एवं अनेकत्र दुराचार, नशा आदि में डूबी जन साधारण को ठगने के काम में ही लगी है। परन्तु इतने मात्र से धर्म, ईश्वर आदि कुछ नहीं है, ऐसा सिद्ध नहीं होता। **इस कथित बुद्धिवादी पीढ़ी को करोड़ों वर्षों की उज्ज्वल परम्परायें, नैतिकता के उच्चादर्श सब कुछ पिछले लगभग १००-२०० वर्षों के वैज्ञानिक विकास के चकाचौंध में मिथ्या प्रतीत हो रहे हैं।** यह पीढ़ी उच्चादर्श वाले अपने ही महान् पूर्वजों को मूर्ख मानने के अपराध से ग्रस्त है। अहंकार, सतत भोग विलास की अपूरणीय आकांक्षा, गलाकाट प्रतिस्पर्धा में प्राचीन संस्कृति, धर्म, इतिहास सब मानो तार-२ हो गये हैं। पारिवारिक व सामाजिक धर्म व बंधन भी समाप्त हो गये हैं। हम एक ऐसे स्वेच्छाचारी, घमंडी, सर्वभक्षी, नैतिकता से नितान्त परे मानव समाज का दुःखद चित्र देख रहे हैं, जो पशुओं से भी अति बदतर जीवन जीने में ही स्वयं को बड़ा मान रहा है। अभी हाल मैं सर्वोच्च न्यायालय के दो निर्णय समलैंगिकता व विवाहेतर सम्बन्धों को अपराधमुक्त घोषित करना, इसके घृणित उदाहरण हैं।

मेरे प्यारे प्रबुद्ध कहाने वाले पाठकगण! जरा सोचो! कि आज विज्ञान ने आपको सुख सुविधायें प्रदान की परन्तु क्या आप सुखी हुये ? जरा विचारें कि विभिन्न क्षेत्रों में आपने क्या विकास किया?

(क) औद्योगिक क्रान्ति-

आज विश्व में ओद्यौगिक क्रान्ति अत्युच्च स्तर पर हुई। इन उद्योगों में अधिकांश वे उत्पाद होते हैं, जो मानव के लिये बहुत आवश्यक नहीं होते। केवल मनोरंजन, विलासिता की पूर्ति के लिये नित नये उद्योग किये जा रहे हैं। इसका परिणाम क्या हुआ है? क्या आप कभी सोचते हैं? विश्व के पर्यावरणवादी वैज्ञानिक, राजनेता सभी एक स्वर से वर्ष में एक बार इकट्ठे होकर पृथिवी पर आये संकट के लिये रोना रोते हैं। छोटे-२ गरीब देश, विशेष कर समुद्री टापुओं पर बसे

द्वीप वाले देश बहुत आर्तस्वर से विश्वभर के ओद्यौगिक विकासवादियों से प्रार्थना करते हैं। उन्हें भय है कि समुद्र का जलस्तर धीरे-२ बढ़कर उनके देशों को निगल जायेगा। थोड़ी सी सुनामी वा भूकम्प इन देशों के अस्तित्व को मिटा सकते हैं। अभी पिछले कुछ वर्ष पूर्व जापान में आयी सुनामी वा भूकम्प से सारी दुनियां दहल गयी। **नाभिकीय रियेक्टरों से विकिरण के रिसाव के समक्ष इस घमंडी विकासवादी विज्ञान को हमने असहाय होते देखा है। हमने बड़ी-२ शक्तियों यथा अमेरिका, यूरोपीय देश, चीन, रूस, आस्ट्रेलिया, भारत सबको इस विभीषिका के कारण थर-२ कांपते देखा है। सबके अहंकारों को दुम दबा कर भागते देखा है। ओजोन की परत घटती जा रही है। ग्लोबल वार्मिंग का संकट बढ़ता जा रहा है। विकसित व महाशक्ति का दम्भ भरने वाले देशों को प्रबल भूकम्प, चक्रवात, बाढ़, सूखा, बर्फबारी के प्राकृतिक भयंकर ताण्डव के समक्ष निरीह जानवर की भाँति विलाप करते देखा है।** मेरे अहंकारी विकासवादी बुद्धिजीवी बन्धुओ! क्या ऐसा ही विकास आपको चाहिये, जहाँ सम्पूर्ण प्राणिजाति का जीवन ही खतरे में पड़ जाये। आज नदियां, सरोवर, झीलें, कूए, बांध सब के सब प्रदूषित हो रहे एवं सूख भी रहे हैं। भूमिगत जल समाप्त हो रहा है। जिस आसमान से अमृतरूपी शुद्ध जल बरसना चाहिये था, वहाँ अम्लीय विषैली वर्षा हो रही है। भूमि प्रदूषित है, वन कट रहे हैं, बंजरपन बढ़ रहा है। **कहो! मेरे भाई! बोलो! क्या ऐसा विकास चाहिये, जहाँ शुद्ध भोजन, जल तो दूर, शुद्ध वायु भी श्वास लेने के लिये उपलब्ध न हो सके। जहाँ सूर्य्य के पराबैंगनी विकिरण के कारण बांझपन, मोतियाबिन्दु, चर्म व रक्त का कैंसर, पौधों में प्रकाश संश्लेषण क्रिया पर संकट, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, खण्डवृष्टि, ओलावृष्टि आदि के भयंकर संकट बढ़ते जायें। बोलो! कब तक जी सकोगे, इस मिथ्या विकास की मृगतृष्णा में?**

(ख) कृषि व खाद्य प्रसंस्करण विकास-

यह माना कि आपने अन्न, फल का उत्पादन बढ़ाया। आपने विभिन्न खाद्य पदार्थों को संरक्षित रखकर सदा उपलब्ध रहने वाला भी बनाया। यातायात के साधनों के बल पर सर्वत्र खाद्य सामग्री की पहुँच भी बनाई। परन्तु क्या आपने कभी अपनी विकसित व वैज्ञानिक बुद्धि से मिथ्या अहंकार के आवरण को हटाकर विचारने का यत्न किया है कि अन्न-फल, शाक-सब्जी सबकी गुणवत्ता समाप्त हो रही है। जो

स्वाद, सुगन्ध, पौष्टिकता, सुपाच्यता आपके कथित विकास की आंधी से पूर्व इस अन्न, फल, शाक में होती थी, क्या आज उसका चतुर्थांश भी शेष रही है? रासायनिक खाद एवं जहरीले कीटनाशक एवं संरक्षक रसायनों के कारण हम हर भोजन के साथ विष खाये जा रहे हैं। कोई भी अन्न, फल, मेवे, शाक, दूध, यहाँ तक कि माताओं का दूध भी विषहीन नहीं रह सके हैं। इसके कारण जहाँ भूमि माता रोगिणी हो गयी है, वहीं हर प्राणी, जो भी इनका सेवन करता है, अनेक रोगों से ग्रस्त हो रहा है। हम अन्न नहीं बल्कि मानो सड़ा गला कचरा अपने पेट में डाल रहे हैं। हम सुस्वादु फल, पौष्टिक मेवे नहीं अपितु कैंसर आदि रोगों के बीज अपने उदर में डाल रहे हैं। हम फलों को सड़ाकर स्वास्थ्यनाशक मदिरा आदि का सेवन कर रहे हैं, जिससे न केवल स्वास्थ्य चौपट हो रहा है बल्कि अनेक बीभत्स अपराधों का जन्म हो रहा है। **हम अन्न समस्या का रोना रोते हैं परन्तु कभी आपके मस्तिष्क ने सोचा कि कितना अन्न मांसोत्पादक पशु-पक्षियों को पालने पर आप खर्च करते हैं? कितनी भूमि पर तम्बाकू, अफीम, गांजा, चाय आदि विषैले पदार्थों की कृषि करके अन्न व चारे का अभाव स्वयं उत्पन्न किया जा रहा है।** फिर भी रासायनिक खादों की अनिवार्यता का कुतर्क प्रस्तुत किया जाता है। कितने फल, गुड़, जौ आदि पदार्थ, जो मानव क्षुधा को मिटाने में सहायक होते, उनसे शराब बनाकर मानव को रोगी व पापी बनाया जा रहा है। फिर बेचारे जानवरों को मार-२ कर अपने उदरों को कब्रिस्तान व भयंकर रोगों का घर बनाया जा रहा है। क्या इसी को विकास कहते हैं? जहाँ बुद्धि, विवेक, दया को ताले में बंद कर दिया जाये पुनरपि स्वयं को वैज्ञानिक बुद्धि वाला मानने का दम्भ किया जाये। जो कथित प्रबुद्ध मांसाहार के अर्थशास्त्र व स्वास्थ्य शास्त्र पर दम्भ करें, उन्हें मेरी लिखी पुस्तक ''**मांसाहार- धर्म अर्थ एवं विज्ञान के आलोक में**'' पढ़नी चाहिए। आज तकनीक ने मानव को प्राकृतिक स्वास्थ्यवर्धक आहार से दूर ले जाकर रोगकारक अप्राकृतिक आहार खाने का शौकीन बना दिया है।

(ग) चिकित्सा स्वास्थ्य क्षेत्र में क्रान्ति-

आपने इस क्षेत्र में अपूर्व उन्नति की है, ऐसा माना जाता है। अधिकांशतः यह बात सत्य भी है। विशेषकर सर्जरी के क्षेत्र में बहुत उन्नति की है। मानव की औसत आयु भी बढ़ी है। अनेक जानलेवा

रोगों की चिकित्सा व रोकथाम हेतु टीकों के आविष्कार भी हुए हैं। परन्तु जरा विचारें कि मानव तन व मन से कितना दुर्बल हो गया है? रोगों की संख्या उसी अनुपात में बढ़ रही है, जिस अनुपात में दवायें तथा चिकित्सकों की संख्या व उनका स्तर बढ़ रहा है। कैंसर, हृदय रोग, एड्स, नये-२ फ्लू, मधुमेह आदि का विस्तार क्या इतिहास में कभी इतना सुनने में आया, जितना आज सुन व देख रहे हैं। जन्मते बच्चों में कैंसर, हृदय रोग, एड्स वा डायबिटीज की बीमारियां हो रही हैं। कौन उत्तरदायी है, इन रोगों को बढ़ाने का? क्या कभी सोचा? लगभग हर दवा अपने पार्श्व दुष्प्रभाव से नवीन एवं गम्भीर रोगों को जन्म दे रही है। जीवन शैली व खानपान, जो आपके कथित विकसित विज्ञान ने ही आविष्कृत किए हैं, आज मानव जीवन के लिए अभिशाप बनते जा रहे हैं। अब बड़े चिकित्सक प्राचीन खानपान, शाकाहार, व्यायाम, प्राणायाम की वकालत करने लगे हैं। कहो! ये जो बातें कुछ वर्ष पूर्व तक पिछड़ेपन की प्रतीक मानी जाती थीं, वे ही आज कैसे स्वास्थ्यप्रद दिखायी देने लगीं? मनोरंजन के नाम पर अश्लीलता परोसी जा रही है। जब अश्लीलता से एड्स जैसा रोग फैला, तो तथाकथित धूर्त व मूर्ख मनोवैज्ञानिक स्वेच्छाचारिता रोकने व ब्रह्मचर्य संयम की बात न करके कृत्रिम गर्भ निरोधक साधनों के प्रयोग की बात करते हैं। सुना है, अब इन अश्लील साधनों के दुष्प्रभाव भी सामने आते दिखायी दे रहे हैं। कहो! ऐसी स्वास्थ्य क्रान्ति चाहते हो? जिसमें सदैव किसी न किसी रोग के आने की आशंका से ग्रस्त जीवन जीना पड़े?

(घ) आर्थिक क्रान्ति-

अधिकाधिक भोग के संसाधनों को एकत्र करने की प्रबल लालसा ने आज मनुष्य को अन्धा बना दिया है। हर व्यक्ति येन केन प्रकारेण धनसंग्रह का यत्न करना चाहता है। विषयलोलुपता धनलोलुपता का एक प्रधान कारण है। इस बात को सभी जानते हैं कि विषयों की पूर्ति कभी सम्भव नहीं, इस कारण धनसंग्रह की प्रवृत्ति भी तेजी से बढ़ रही है। इसके लिए अनेक अपराध हो रहे हैं। चोरी, रिश्वतखोरी, घोटाले, मिलावट, हत्या, कालाबाजारी, डकैती, प्राकृतिक संसाधनों का अपार दोहन, सब कुछ अनियंत्रित हो गये हैं। निर्धन को धनी, निर्बल को बलवान् तथा अज्ञानी को ज्ञानी यथाशक्ति लूट रहे हैं। हमारा देश तो भ्रष्टाचार में आकंठ डूबा है, तो विश्व के अनेक देशों में भी यह रोग

बढ़ता जा रहा है। आर्थिक दौर से असन्तोष, प्रतिस्पर्धा, ईर्ष्या, द्वेष भी तेजी से बढ़ रहे हैं। अमेरिका जैसे महाशक्ति का दम्भ करने वाले देश में १०–१० वर्ष के बच्चे विद्यालयों में गोलियां चलाकर हत्यायें कर देते हैं। अनेक लोग आत्महत्या, हृदयाघात, मानसिक अवसाद आदि के शिकार हो रहे हैं। इस आर्थिक क्रान्ति, विषयलम्पटता ने पारिवारिक सम्बन्धों को नष्ट भ्रष्ट कर दिया है। यह आर्थिक क्रान्ति वन व पर्यावरण को नष्ट कर रही है। पर्वत, सागर सभी कुछ विनाश की ओर बढ़ रहे हैं। सर्वत्र कानून व्यवस्था चौपट हो रही है। धनी–निर्धन के बीच की खाई बढ़ती जा रही है, इसके कारण नक्सलवाद आतंकवाद जैसी समस्यायें तेजी से बढ़ती जा रही हैं।

(ङ) सूचना तकनीक एवं अन्य तकनीक क्रान्ति–

यह सत्य है कि सूचना तकनीक एवं अन्य तकनीकें तेजी से बढ़ रही हैं। इसके सकारात्मक लाभ भी हो रहे हैं परन्तु यह भी सत्य है कि इसके पार्श्व दुष्प्रभाव भी बहुत बढ़ रहे हैं। अपराधियों, आतंकवादियों की शक्ति बढ़ रही है। सुरक्षा बलों की अपेक्षा वे अधिक तेजी से अपराधों को तकनीक से जोड़ कर मानवता की हानि कर रहे हैं। आज के यांत्रिक कम्प्यूटर युग में मानव शक्ति व्यर्थ हो गयी है। बेकारी बढ़ रही है और बढ़ती बेकारी से अनेक लोग अपराध करने को विवश हैं। इस तकनीक के कारण सम्पूर्ण व्योम–वायुमण्डल विकिरण प्रदूषण से ग्रस्त हो गया है, जिससे अनेक कीट पतंगों पक्षियों की प्रजातियां लुप्त हो गयी हैं व हो रही हैं। इस कारण वनस्पतियों में परागण की प्रक्रिया प्रभावित हो रही है। मनुष्यों में भी ब्रेन कैंसर आदि अनेक रोग इन विकिरणों के कारण हो रहे हैं। मेरा विचार है कि इस तकनीक के कारण और भी अनेक रोगों के पैदा होने की प्रबल आशंका है, जिनके बारे में अभी तक सोचा ही नहीं जा रहा। पुनरपि हृदयरोग, मानसिक तनाव व अवसाद, मधुमेह, गठिया, मोटापा, नपुसंकता आदि रोग भी इस बढ़ती तकनीक की ही देन है।

कुल मिलाकर **इस विज्ञान, तकनीक व मूर्खता को बुद्धिवाद मानने की प्रवृत्ति ने मनुष्य को स्वार्थी, रोगी, दुर्बल, कामी, क्रोधी, लोभी, अहंकारी, ईर्ष्यालु एवं क्रूर अपराधी बना दिया है। जिस मानव को पृथिवी पर चलना नहीं आता, घर परिवार में रहना नहीं आता, उसे**

चन्द्रमा, मंगल अथवा दूसरे सौरमण्डलों में बसाने की योजनायें बनायी जा रही हैं। अहो! कैसी मूर्खता है? आज का अहंकारी बुद्धिजीवी कहता है कि हमें अंग्रेजों ने ही यह सब सिखाया है। वह अपने ही प्राचीन पूर्वजों को मूर्ख व जंगली मानता है। उसे वर्तमान के वैज्ञानिक उत्कर्ष पर दम्भ है। मैं अपने इन दम्भी मित्रों से उपर्युक्त प्रश्नों के उत्तर चाहता हूँ कि आपने बड़े-२ साधनों का निर्माण किया है। एटम बम, हाइड्रोजन-न्यूट्रॉन बम का आविष्कार किया, जिससे क्षण भर में आप सम्पूर्ण प्राणी व वनस्पति जगत् को नष्ट कर सकते हो। परन्तु मेरे विध्वंसक भाई! बोलो! जरा विचार कर बोलो! **क्या तुम इन महाविनाशक अस्त्रों का निवारण करने वाले अस्त्र भी जानते हो? क्या प्रक्षिप्त होने के पश्चात् क्या इन अस्त्रों को वापिस लौटाने का विज्ञान भी जानते हो?** हिरोशिमा व नागासाकी को आपके दम्भी विज्ञान ने नष्ट तो कर दिया परन्तु क्या तुम उस विनाश के अस्त्रों को रोकने वा उन्हें निष्प्रभावी करने के अस्त्र आज तक भी खोज पाये हो? परमाणु विकिरण को निष्प्रभावी करने की टैक्नोलॉजी क्या आपके पास है? **क्यों आपका दम्भ जापान की त्रासदी के सम्मुख करबद्ध होकर खड़ा रहने को विवश रहा? क्या कर लिया आपने?** क्या एक भी विकिरण आप रोक सके? जयपुर के ऑयल डिपो में कुछ काल पूर्व आग लगी। भारत के पेट्रोलियम मंत्री ने बयान दिया, ''हम आग के स्वतः शान्त होने की प्रतीक्षा के अतिरिक्त कुछ नहीं कर सकते।'' **कहो! अभिमानी वैज्ञानिक, कम्यूनिस्ट आदि बुद्धिवादी? क्या इसी को वैज्ञानिक उत्कर्ष कहते हो? आप किसी को मारना तो जानते हो परन्तु अर्थात् मरने से पूर्व उसको बचाना नहीं सीखा। आपने अणु अस्त्र बनाना तो सीखा परन्तु एण्टी अणु अस्त्र की कल्पना भी नहीं की। आपने आग्नेय अस्त्र तो बनाये परन्तु वरुणास्त्र वा पर्जन्यास्त्र की बात तुम्हारी बुद्धि में भी नहीं आयी। आपने घातक रासायनिक अस्त्र बनाये परन्तु उनके प्रतिरोधक अस्त्र आपके दम्भ को नहीं सूझे। आपने ईंधन तो बनाये परन्तु आज तक पर्यावरण के विनाशक ईंधन ही बनाये।** अभी तक जल, थल व नभ में एक साथ चलने वाले विमान नहीं बनाये। अब सुना है, इस पर काम चल रहा है। अभी तक नारायण अस्त्र, सुदर्शन चक्र, पाशुपत अस्त्र, पर्जन्य अस्त्र, वरुणास्त्र आप नहीं बना सके। हम आपको कहना चाहते हैं कि ये सभी अस्त्र रामायण व महाभारत काल में थे। **यदि आज रामायण व महाभारत की अस्त्र विद्या होती, तो जापान की विभीषिका**

अथवा जयपुर ऑयल डिपो की आग के सम्मुख हमें विवश रोते नहीं रहना पड़ता।

मेरे प्रबुद्ध कहाने वाले भाई! आप इस पर व्यंग्य करेंगे और कहेंगे कि जब विज्ञान ने प्रगति की, विमानादि बनाये, तब आपको रामायण व महाभारत में टैक्नोलॉजी दिखायी दे रही है, इससे पूर्व केवल कथाओं तक सीमित थे? आज सबको वेद में विज्ञान दिखायी देने लगा। पहिले ये ग्रन्थ केवल कर्मकाण्ड के योग्य थे?

मेरे भोले भाई! सुनो! जब आपके गेलीलियो, कॉपरनीकस, न्यूटन पैदा भी नहीं हुए थे, तब भारतीय खगोलविद् आर्यभट्ट, भास्कराचार्य, वराहमिहिरि ने विभिन्न ग्रहों की दूरियां, उनका परिक्रमण काल, किस तकनीक से ज्ञात किया था? शून्य का आविष्कार किसने किया था? सुश्रुत आचार्य के समय आपके आदर्श यूरोप व अमेरिका आदि देशों में क्या कोई चिकित्सा पद्धति थी? रामायण, महाभारत, वेद, ब्राह्मणग्रन्थों का विज्ञान तो आप कल्पना मानते हैं परन्तु उपर्युक्त मध्यकालीन विज्ञान को तो काल्पनिक नहीं कहेंगे।

मैं आपको निवेदन कर दूं कि जब आपके विज्ञान ने विमान बनाना सम्भवतः सोचा भी नहीं था, उस समय महर्षि दयानन्द जी सरस्वती ने अपने वेद भाष्य में जल, थल व नभ में एक साथ चलने वाले विमान बनाने की बात कही थी। तब भी महर्षि भारद्वाज जी का **'यन्त्रसर्वस्व'** नामक ग्रन्थ इस देश में था, जिसमें अनेक प्रकार के ऐसे भी विमान बनाने का संक्षिप्त वर्णन था, जो आज भी सम्भव नहीं हो पाया है। नासदीय सूक्त के व्याख्यान में सृष्टि विद्या के उन रहस्यों को महर्षि ने उजागर किया था, जो आज विकसित वैज्ञानिकों के लिए भी एक मार्गदर्शक बन सकता है।

मेरे भाइयो! मैं आपको निवेदन करना चाहता हूँ कि आपका भौतिक विज्ञान यद्यपि अत्यन्त विकसित हो गया है परन्तु अभी सृष्टि की सारी समस्याओं के समाधान के दावे मत करो। आप लोग अभी भी कोई बिग बैंग से सृष्टि का प्रारम्भ मानते हैं, तो दूसरे कुछ लोग स्टीडी स्टेट थ्यौरी अथवा अनादि ब्रह्माण्ड की वकालत करते हैं। अब क्या यथार्थ विज्ञान भी परस्पर विरोधी हो सकता है? बिग बैंग के

समर्थक सृष्टि की आयु १०-१५ अरब वर्ष मानते हैं। यह कैसा गणित है, जो १० से १५ अरब के बीच कोई अन्तर नहीं मानता? क्या ऐसी गणनायें विश्वसनीय हो सकती हैं? आज बिग बैंग थ्यौरी वालों के पास इसके विरोधियों का कोई समाधान नहीं है और स्टीडी स्टेट आदि थ्यौरी वालों के पास बिग बैंग समर्थकों के प्रश्नों का कोई सुस्पष्ट हल नहीं है। हमने सब कुछ जानने का दावा करने वाले स्टीफन हॉकिंस की नवीनतम पुस्तक **'द ग्राण्ड डिजायन'** को भी देखा है। वे कुछ अधिक ही दम्भ करते प्रतीत होते हैं। हमने उन्हें भी अपने ३४ प्रश्न तथा अध्यात्म व विज्ञान की वैदिक अवधारणा को स्पष्ट करने वाले विचार भेजे हैं परन्तु वे मौन ही हैं। हम सृष्टि विज्ञान पर दोनों ही सिद्धान्तों को मानने वालों से ऐसे प्रश्न कर सकते हैं, जिनका उत्तर खोजने में अभी वे समर्थ नहीं हैं, भले ही वे स्वयं को सर्वज्ञ मानते हों। यद्यपि ऐसे महान् वैज्ञानिकों की भी कोई कमी नहीं है, जो स्वीकार करते आये हैं कि सृष्टि को सर्वथा जानना असम्भव है। सम्पूर्ण ज्ञान तो केवल ईश्वर के पास है।

मेरे बन्धुओ! मुझे आश्चर्य है कि पिछले दिनों **'द ग्राण्ड डिजायन'** पुस्तक को उद्धृत करते हुए भारतीय मीडिया ने ईश्वर को नकारने का एक बड़ा अभियान चलाया था। इस पुस्तक को पढ़े बिना विकृत मानसिकता वाले मीडिया को नास्तिकता का ऐसा प्रचार करते देखा गया, मानो उसकी ईश्वर, धर्म आदि से घोर शत्रुता हो। ये नादान मीडिया वाले वा नास्तिक २१ वीं सदी के मिथ्या दम्भ में अध्यात्म, पुनर्जन्म, धर्म सब पर व्यंग्य करते हैं। मुझे इनकी नादानियत पर बड़ी दया आती है। अयि! दम्भी बन्धुओ! **आपकी यह २१वीं सदी कौनसी बीमारी है? जिसमें आपको सत्य से घृणा हो जाती है, जिससे आप अहंकार में मदमस्त हो जाते हैं।** कोई बड़ा वैज्ञानिक दम्भ कर भी ले, तो चले परन्तु अनाड़ी मीडिया वाले भी दम्भ करें, यह कैसी मूर्खता है? हमने इस पुस्तक को मंगाकर पढ़ा, तो पाया कि स्टीफन हॉकिंस महोदय को बाइबिल के चमत्कारी, मांसाहारी, हिंसक व अज्ञानी ईश्वर के अतिरिक्त ईश्वर विषयक वैदिक वैज्ञानिक अवधारणा का या तो ज्ञान ही नहीं है अथवा वे पक्षपाती हो कर इसे विचारने से बच रहे हैं। विश्व के अन्य कुछ दर्शनों की चर्चा, तो वे करते हैं परन्तु भारतीय वैदिक दर्शन का संकेत भी नहीं करते। यह क्या दर्शाता है? हाँ, यह

भी सत्य है कि भारतीय ईश्वर को भी कथित सनातनी वास्तव में पौराणिक सम्प्रदायों ने ईसाई, मुस्लिम ईश्वर की भाँति चमत्कारी, दुर्बल, हिंसक व ईर्ष्यालु मनुष्य बना कर छोड़ा है। तब ऐसे मिथ्या ईश्वरवाद का स्टीफन हॉकिंस खण्डन करें, तो यह उचित ही है परन्तु जब तक महर्षि भगवान् ब्रह्मा से लेकर दयानन्द सरस्वती पर्य्यन्त ऋषि परम्परा का एक भी सच्चा प्रतिभाशाली भक्त जीवित है तब तक विशुद्ध वैदिक वैज्ञानिक ईश्वरवाद को कोई भी चुनौती नहीं दे सकता। हाँ, यह भी बड़े दुःख की बात है कि ऋषि परम्परा के भक्त भी अब केवल जयघोष, दान, दक्षिणा बटोरने वाले ही रह गये हैं। पुनरपि मैं आपसे निवेदन करता हूँ कि वर्तमान विज्ञान हमारे लिए अभिनन्दनीय है। हम उसके पुरुषार्थ का स्वागत करते हैं। **मैंने अनेक महान् वैज्ञानिकों की संगति की है। उनमें साधुता, विनम्रता, सत्यता को निकटता से देखा है। वे मेरे लिये बहुत सम्मानीय हैं परन्तु कुछ थोथे चने अधिक ही बजते देखे हैं।** पुनरपि हम वर्तमान विज्ञान के समक्ष यह अवश्य कहना चाहते हैं कि वह वैदिक विज्ञान की उपेक्षा करने की नादानी न करें। आप कहेंगे कि वैदिक विज्ञान की बात करने वाले लोगों ने क्या चमत्कार कर दिखाया? इसके उत्तर में मैं निवेदन करना चाहूँगा कि **वैदिक विज्ञान वालों को समाज व शासन ने सहयोग क्या किया? सारे धन व संसाधनों पर आपका अधिकार है, हमें यह देश व विश्व क्या देता है? आपके सम्मुख एक स्पष्ट वैज्ञानिक साहित्य है, तो हमारे वैदिक साहित्य को हजारों वर्ष से मूर्ख व धूर्तों ने विकृत कर रखा है। जो स्पष्ट साहित्य था, इस्लामी आदि सम्प्रदाय वालों ने आग की भेंट चढ़ा दिया, तो कुछ को चतुर लोग यूरोप ले गये। आपके पास देश व विदेश की सरकारों का साथ है, हमारे पास अपने देश व समाज का ही सहयोग नहीं है।** आपका एक बहुत बड़ा नेटवर्क है और हमारे पास कोई नहीं है। हमारे वैदिक कहाने वाले आज भी उन्हीं पाखण्डों में फंसे हैं, जो मध्य काल में प्रारम्भ हुए थे। जिनकी हमने इस पुस्तक में चर्चा भी की है, तो नादान आर्य समाजी भी दान दक्षिणा के लोभ में इस साहित्य का नाश कर रहे हैं। आपको पढ़ाने वाले बहुत हैं, तो हमें पढ़ाने तो क्या, मार्गदर्शन देने वाला भी कोई नहीं। आधुनिक विज्ञान विषय में तो चर्चा व मार्गदर्शन करने वाले अनेक वैज्ञानिक मेरे सम्पर्क में हैं परन्तु वैदिक विज्ञान पर चर्चा करने वाला कोई भी दिखायी नहीं देता। हां, अभी दो

वर्षों से एक भौतिक विज्ञान का प्रतिभाशाली छात्र विशाल आर्य अवश्य शिष्य रूप में प्राप्त हुआ है।

मेरे वैज्ञानिक सोच वाले युवको! जरा विचारो! आपको गाड़ी मिली हुई है, ईंधन भी आपके पास है, रोड भी साफ है, मार्गदर्शक पत्थर वा बोर्ड भी हैं। आपको गाड़ी को केवल चलाना ही है। इधर मुझे देखिये। गाड़ी का निर्माण मुझे स्वयं करना पड़ रहा है, रोड भी मैं बना रहा हूँ। इसके लिए कांटे, पत्थर सब साफ स्वयं ही कर रहा हूँ। ईंधन भी बहुत कम है। देने वाले नगण्य हैं। मार्ग दर्शक के नाम पर महर्षियों के संकेतों के अवशेष मात्र प्रतीत होते हैं। तब मेरा कार्य आपकी अपेक्षा कितना कठिन वा सरल है, यह आप ही विचारें, पुनरपि मैं वेद के यथार्थ व सत्य सनातन स्वरूप को संसार के सम्मुख लाने के कठिन मार्ग पर मात्र अपने शिष्य के साथ एकाकी चल रहा हूँ। इसका कुछ विवरण अगले अध्याय में दे रहा हूँ।

(10) मेरी संक्षिप्त वैज्ञानिक यात्रा

मैं वेद विज्ञान सम्बंधी अनेक गोष्ठियों में सन् १९९८ से भाग लेता रहा हूँ और इस विषय की अन्तर्राष्ट्रिय सेमीनार **'वर्ल्ड कांग्रेस ऑन वैदिक सायंसेज'** में अगस्त २००४ में बंगलोर गया था। यह संगोष्ठी विज्ञान भारती के तत्वावधान में आयोजित की गयी थी, जिसका विज्ञापन सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली ने अपने मुख पत्र **'सार्वदेशिक'** में प्रकाशित करते हुए आर्य विद्वानों से आग्रह किया था कि वे भी इस गोष्ठी में जाकर आर्य समाज का विभिन्न विषयों पर पक्ष रखें। उस गोष्ठी में ७ देशों (भारत, श्रीलंका, इंग्लैण्ड, थाईलैण्ड, केन्या आदि) के वेदज्ञ, संस्कृतज्ञ व वर्तमान विज्ञान के प्रोफेसर्स सम्मिलित हुए। उस समय मैं भी अनेक झंझटों के चलते एक लेख लिखकर ले गया था। ३२० पत्रवाचकों में से केवल मैं ही था, जिसने आधुनिक विज्ञान के सृष्टि उत्पत्ति विषयक '**महाविस्फोट सिद्धान्त**' (Big Bang Theory) को ही केवल चुनौती नहीं दी, अपितु वर्तमान पार्टिकल, न्यूक्लियर फिजिक्स के साथ अद्वैतवाद को भी चैलेन्ज किया, जबकि वहाँ सभी वक्ता आधुनिक विज्ञान व अद्वैतवाद की ही पुष्टि कर रहे थे। आर्य समाजी तो मात्र १५-२० विद्वान् थे। इस सेमीनार में मैंने उपर्युक्त ऐसे सिद्धान्त का खण्डन किया, जो उस समय लगभग सम्पूर्ण विश्व में मान्य था और आर्य समाज के भी लगभग सभी विद्वान् भी वेदों में से इसी सिद्धान्त को खोज रहे थे। इसके साथ ही हमने एक ऐसे सिद्धान्त कि शून्य आयतन में असीम द्रव्यमान, असीम ऊर्जा व असीम घनत्व विद्यमान होता है, को भी विश्व में मेरी जानकारी के अनुसार सर्वप्रथम हमने ही चुनौती और न केवल चुनौती दी अपितु अपने **'सृष्टि का मूल उपादान कारण'** नामक लेख में इसका सशक्त विकल्प भी दिया। यह लेख हमने पढ़ा भले ही ९ अगस्त २००४ में था परन्तु लिखा १७ जून २००४ को था। ब्लैक होल पर इसी से मिलता जुलता लेख भाभा एटॉमिक रिसर्च सेण्टर, मुम्बई के थ्योरिटीकल एस्ट्रो फिजिक्स सेक्शन के हैड डॉ. आभास कुमार जी मित्रा का नाम भी अगस्त २००४ में ही विश्व पटल पर चमका, जिसके कारण विश्व प्रसिद्ध भौतिक वैज्ञानिक स्टीफन हॉकिंस व अन्य वैज्ञानिकों को डॉ. मित्रा साहब के सिद्धान्त को मानने को विवश होना पड़ा। यह डॉ.

मित्रा साहब को विश्व प्रसिद्ध बनाने का कारण बना। इस प्रकार समान खोजों के आधार पर मेरा डॉ. मित्रा साहब से भाभा एटॉमिक रिसर्च सेण्टर, मुम्बई में २५ अगस्त २००४ को मेरा मिलना हुआ और इसका प्रबन्ध न्यूक्लियर पॉवर कार्पोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड, मुम्बई के तत्कालीन एडीशनल चीफ इंजीनियर श्री वी. के. भल्ला, जो बंगलोर में ही मिले तथा जिन्हें मेरा पत्रवाचन सर्वाधिक प्रभावी लगा। वस्तुतः वेद विज्ञान के क्षेत्र में मेरे इस प्रवेश के पीछे श्री भल्ला साहब व अन्तर्राष्ट्रिय वैज्ञानिक डॉ. मित्रा साहब की प्रेरणा भी बहुत बड़ा कारण रही है। इन्हीं महानुभावों की प्रेरणा पर मैंने अपने उस लेख की व्याख्या में **'सृष्टि का मूल उपादान कारण'** नामक पुस्तक भी लिखी थी, जिस पर भाभा एटॉमिक रिसर्च सेण्टर, मुम्बई के कुछ वैज्ञानिकों से एक सप्ताह भर मेरा संवाद चला। डॉ. मित्रा साहब ने इस पुस्तक को पढ़ने की सलाह अध्यवसायी वैज्ञानिकों को भी दी। यह कोई साधारण बात नहीं थी। उल्लेखनीय है कि श्री भल्ला साहब आर्य समाज के प्रख्यात् शास्त्रार्थ महारथी श्री अमर स्वामी जी महाराज एवं महात्मा आनन्द स्वामीजी के समय से आर्य समाज के सम्पर्क में हैं और उन्होंने अनेकों विद्वानों को सुना व देखा तथा आर्य समाज के अनेक ग्रन्थों का गम्भीर स्वाध्याय किया है। उन्होंने डॉ. मित्रा साहब व मेरी चर्चा को आर्य समाज के इतिहास में उनकी जानकारी के अनुसार प्रथम अद्‌भुत घटना बताया और इसी से अभिभूत होकर उन्होंने मुझे यही दिशा चुनने का आग्रह किया।

इस पुस्तक में हमने एक ऐसे सिद्धान्त का भी प्रतिपादन किया, जिसे भी शायद विश्व में कोई नहीं मानता व जानता था। वह यह कि सृष्टि की उत्पत्ति असीम शीतलता से हुई है, जबकि आधुनिक विज्ञान असीम उष्णता से मानता था। हमने अप्रेल २००६ में अमरीका के राष्ट्रपति व वहाँ के एक नोबेल पुरस्कार विजेता भौतिक वैज्ञानिक को ई-मेल व पुस्तक भेजकर कहा कि असीम ऊष्णता से सृष्टि का प्रारम्भ नहीं बल्कि असीम शीतलता से हुआ है। आर्यो! मैं आपसे निवेदन करता हूँ कि १८ अक्टूबर २००८ के राजस्थान पत्रिका दैनिक पत्र के अनुसार अमेरिका के वैज्ञानिकों ने शीतलता से सृष्टि उत्पत्ति होना स्वीकारा। मैं यह निश्चितता से यह तो नहीं कह सकता कि उन्हें हमारी वेब साइट वा वहाँ के राष्ट्रपति व उस नोबेल पुरस्कार विजेता वैज्ञानिक

को मेरे द्वारा भेजे सन्देश से यह प्रेरणा उन्हें मिली परन्तु मैं यह अवश्य कह सकता हूँ कि यह बात मैंने उनकी खोज से २ वर्ष ६ माह पूर्व अपने पत्र में उनके देश को बता दी थी। इसके पश्चात् मैंने इस विषय में आर्य विद्वानों के द्वारा अब तक होते रहे कार्य पर विचार किया। मुझे लगा कि सर्वत्र वर्तमान विज्ञान का अन्धानुगमन हो रहा है। २० जुलाई २००५ में मैं रक्षा प्रयोगशाला, जोधपुर डॉ. दौलतसिंह कोठारी स्मृति व्याख्यान माला में पद्म भूषण सम्मान प्राप्त भौतिक वैज्ञानिक प्रो. अजीतराम जी वर्मा (पूर्व प्रोफेसर कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय, इंग्लैण्ड एवं पूर्व डायरेक्टर, नेशनल फिजिकल लैबोरेट्री, नई दिल्ली) का व्याख्यान सुनने गया। जब मैंने अपनी पुस्तक 'सृष्टि का मूल उपादान कारण' डॉ. दौलतसिंह कोठारी के वैज्ञानिक पुत्र डॉ. लक्ष्मणजी कोठारी को दी, तो उन्होंने व्यंग्यपूर्वक तत्काल कहा– ''स्वामी जी! वेद व संस्कृत के विद्वान् नकल करने में बहुत तेज होते हैं। वे वेद आदि में से वे ही बिन्दु निकालकर बताते हैं, जिन्हें हम खोज चुके होते हैं। वे ऐसी कोई खोज नहीं बताते, जो हमने नहीं की हो।'' इस पर मैंने गम्भीर भाव से तत्काल कहा, ''डॉ. कोठारी जी! मेरी इस पुस्तक में आपके विज्ञान को कई स्थान पर मिथ्या सिद्ध किया है तथा ऐसे नये तथ्य दिये हैं, जिन्हें इस समय विश्व का वर्तमान विज्ञान जानता तो क्या, सोचता भी नहीं है।'' वहीं पर जब मैंने अपनी पुस्तक प्रो. वर्मा साहब को दी, तो वे भी व्यंग्य करते हुए लगभग १००–१५० वैज्ञानिकों के बीच मुझसे कहने लगे, ''स्वामी जी! आप लोग व्यर्थ के प्रश्न करते रहते हैं। बिग बैंग क्यों हुआ? उससे पूर्व क्या था? .... प्रश्न करने में दिमाग नहीं लगाना पड़ता। उत्तर देने में दिमाग लगाना पड़ता है।'' इस पर मैंने तत्काल कहा, ''प्रो. वर्मा साहब! मैं यहाँ आपसे प्रश्न करने नहीं बल्कि उत्तर देने आया हूँ। न केवल बिग बैंग थ्यौरी क्यों गलत है? अपितु सर्वप्रथम सृष्टि कहाँ से प्रारम्भ होती है, यह इस पुस्तक में जाना जा सकता है।'' यह सुनकर वे स्तब्ध रह गये। लगभग एक माह बाद मैंने फोन करके उनसे अपनी पुस्तक के विषय में पूछा तो उन्होंने उसकी बहुत प्रशंसा की। अगले वर्ष इसी पुस्तक को जोधपुर रक्षा प्रयोगशाला के डायरेक्टर प्रो. एम.पी. चचेरकर जी ने श्री वी.पी. नरसिंहाराव के प्रधानमंत्रित्व में रक्षा वैज्ञानिक सलाहकार रहे पद्म विभूषण श्री वी.एस. अरुणाचलम् को दी। विश्वविख्यात खगोलशास्त्री

पद्म विभूषण प्रो. जयन्त विष्णु नार्लीकर से भी मेरा B.H.U. में अप्रैल 2018 में विस्तार से संवाद हुआ।

मैं अपने साहित्य में बार-२ आर्य वेदानुसंधान कर्ताओं को सचेत करता रहता हूँ एवं पुनः इस लेख के माध्यम से कर रहा हूँ कि **वर्तमान विज्ञान के सिद्धान्तों को वेद में खोजने का प्रयास नहीं करें। आज जिस बात को विज्ञान स्वीकार करता है और उसी को हम वेद में खोजकर कहते हैं कि यह वेद में पहिले से ही विद्यमान है। कल्पना करें, कल वह सिद्धान्त विज्ञान द्वारा नकार दिया जाये, तब वेद का क्या होगा, जिसमें आपने वह नकारा गया सिद्धान्त खोजने का प्रयास किया था?** मैंने कई आर्य विद्वानों को स्टीफन हॉकिंस की प्रशंसा करते एवं उनके विचारों को वेद से पुष्ट करते देखा है। अब वे ही स्टीफन हॉकिंस आज डंके की चोट यह कह रहे हैं कि ईश्वर की सत्ता ही नहीं है। यह सृष्टि तो भौतिकी के नियमों से स्वयं ही हुई है। अब मेरे भाई बतायें, क्या स्टीफन हॉकिंस को प्रमाणित मानकर वेद में अनीश्वरवाद को ढूंढ़ने का प्रयास करके वेदानुसंधाता कहलाना चाहेंगे?

मैंने बिग बैंग थ्योरी के विरुद्ध भौतिक विज्ञान विभाग, सूरत विश्वविद्यालय, धातु अभियांत्रिकी विभाग, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, संस्कृत विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक में व्याख्यान दिये। कोई भी विद्वान् प्रोफेसर हमारे व्याख्यान के पश्चात् बिग बैंग का समर्थन करने नहीं आया। हमने देश विदेश में कई वैज्ञानिकों को अपने विचार भेजे। भाभा एटॉमिक रिसर्च सेण्टर तो २००४ से लगातार प्रतिवर्ष चर्चा, संवाद हेतु जाता ही रहा हूँ। इधर हमने स्वयं ही व्याकरण के साथ-२ निरुक्त का अध्ययन करने नहीं, बल्कि मात्र विहंगावलोकन का प्रयास किया। तदुपरान्त मीमांसा को छोड़ शेष दर्शन, उपनिषद्, महाभारत के शान्ति व अनुशासन पर्व, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, सत्यार्थप्रकाश, कुछ वेदभाष्य सबमें वैदिक ज्ञान विज्ञान के गम्भीर संकेत देखे। इन सबमें वैशेषिक दर्शन को विशुद्ध पदार्थ विज्ञान के ग्रन्थ के रूप में पाया। स्वामी दर्शनानन्द जी, आचार्य उदयवीर जी शास्त्री, स्वामी ब्रह्ममुनि जी के वैशेषिक भाष्य को देखा परन्तु बुद्धि को सन्तोष नहीं हुआ और स्वयं एक वैज्ञानिक भाष्य करने का प्रयास प्रारम्भ किया परन्तु कुछ सूत्रों का भाष्य करने के पश्चात् ही यह अनुभव किया कि मेरा समय वैशेषिक में ही चला जायेगा। तब मेरे वेद विज्ञान वाले लक्ष्य का क्या

होगा? वैशेषिक विज्ञान यद्यपि वेदमूलक है पुनरपि इसका वेद संहिताओं से प्रत्यक्ष सीधा सम्बंध नहीं है। इस कारण इस कार्य को त्यागकर अपने अध्ययन क्रम को आगे बढ़ाते हुए ब्राह्मण ग्रन्थों की ओर अग्रसर होते हुए ऋग्वेद के ब्राह्मण ऐतरेय को देखना प्रारम्भ किया। मैंने विचार किया कि महर्षि ने ब्राह्मण ग्रन्थों को वेद पर ऋषियों के व्याख्यान ग्रन्थ के रूप में माना है। इनका वेद संहिताओं से प्रत्यक्ष सीधा सम्बंध है। इस कारण वेद को समझने हेतु दर्शन आदि की अपेक्षा ब्राह्मण ग्रन्थों को जानना सर्वाधिक आवश्यक है। इसी प्रकार निरुक्त का भी महत्वपूर्ण स्थान है। इस कारण सबसे बड़े वेद ऋग्वेद के विज्ञान को जानने हेतु ऐतरेय ब्राह्मण को जानना तथा इसके विज्ञान की ज्येष्ठता व श्रेष्ठता को सिद्ध करना अनिवार्य है। इस कारण मैंने सम्पूर्ण ऐतरेय के वैज्ञानिक व्याख्यान का विचार किया। इस हेतु मैंने दूरभाष द्वारा अनेक शीर्ष आर्य विद्वानों से मार्गदर्शन चाहा और जो मार्गदर्शन नहीं दे सकें, उनसे यह जानना चाहा कि क्या भारत में कोई विद्वान् इस विषय में मेरा मार्गदर्शन कर सकता है? मुझे दुःखद आश्चर्य हुआ कि सभी ने इस कार्य में नितान्त असमर्थता व्यक्त करते हुए कहा, 'इस विषय में आपको स्वयं ही कुछ करना होगा। कोई भी विद्वान् मार्गदर्शन नहीं कर सकेगा।' अन्ततः मैं परमपिता परमात्मा का विश्वास करके स्वयं ही इस महान् कार्य में प्रवृत्त हुआ। मैंने ऐतरेय ब्राह्मण पर आचार्य सायण का भाष्य तथा डॉ. सुधाकर मालवीय का हिन्दी अनुवाद खरीदा, साथ ही परोपकारिणी सभा के मंत्री तत्कालीन डॉ. धर्मवीर जी से आर्य विद्वान् आचार्य वीरेन्द्रमुनि जी का हिन्दी भाष्य प्राप्त किया, जिसकी भूमिका से स्पष्ट हुआ कि उन्होंने पं. गंगाप्रसाद जी उपाध्याय के भाष्य का आश्रय लिया है तथा पं. वीरसेन वेदश्रमी जी ने इस हिन्दी भाष्य की बहुत प्रशंसा की है। सभी भाष्यों में पाया कि सभी विद्वान् इस ग्रन्थ में सोमयागादि कर्मकाण्ड को ही मान व जान रहे हैं। सायण भाष्य व डॉ. मालवीय ने तो इस महान् ग्रन्थ को बर्बर हिंसा, अश्लीलता, मूर्खता, बुद्धिमालिन्यता का ही ग्रन्थ बना दिया है। उधर आर्य विद्वान् शास्त्री जी ने प्रायः सायण भाष्य की ही नकल की है, तो कहीं-२ पं. बुद्धदेव विद्यालंकार की बुद्धि का उपयोग करने का असफल प्रयास करके सम्पूर्ण ऐतरेय को मूर्खता का भण्डार बना रखा है। मैंने अनुभव किया कि इनमें से किसी भी भाष्य को आधार मानें, तो यह ग्रन्थ और इसका आधार ग्रन्थ ऋग्वेद गड़रियों के गीत, हिंसा व अश्लीलता का जनक

ही सिद्ध होगा, जो ऋषि दयानन्द जी को कदापि स्वीकार नहीं था और न हम आर्य समाजी ऐसा स्वीकार कर सकते हैं। मेरे पौराणिक भाई क्या मानें, यह क्या कहूँ? वे तो आज भी सोमयाग में पशुबलि चढ़ाते ही हैं। इनका तो यज्ञीय इतिहास ही मांस–मदिरा से सना रहा है। हा! शोक!! पुनरपि इन्हें महर्षि दयानन्द जी को मान्यता देना स्वीकार नहीं। ऐतरेय ब्राह्मण की वैज्ञानिकता को सिद्ध करना मेरे जीवन मरण का प्रश्न था। कई दिनों के गहन मनन, चिन्तन के उपरान्त मेरा मार्ग आश्चर्यजनक तरीके से कैसे साफ होता गया, यह जानने के लिए मेरी 'वेदार्थ समर्पणम्' पुस्तिका का अध्ययन करने का कष्ट करें।

(11) सत्यधर्म तथा कल्याणकारी विज्ञान की ओर

मेरे आदरणीय मित्र महानुभाव! यह स्वभाव प्रत्येक प्राणी का होता है कि वह दुःख से बचना तथा सुख को पाना चाहता है। फिर भला सृष्टि का सर्वोत्कृष्ट प्राणी मनुष्य क्यों नहीं सुख प्राप्ति हेतु पूर्ण पुरुषार्थ करेगा? आज संसार भर के प्रबुद्ध मनुष्य चाहे, वे किसी भी उत्तरदायित्वपूर्ण पद पर आसीन हों, संसार को सुखी बनाने का यत्न अपने-अपने ढंग से करते प्रतीत हो रहे हैं। संसार के संविधान, धर्माचार्य, सामाजिक संस्थाएँ, विकसित होता विज्ञान, अर्थशास्त्री, शिक्षा-नीतियां आदि सभी इसके लिए प्रयत्नशील हैं कि मनुष्य सुखी होवे परन्तु इसके उपरान्त भी आज सम्पूर्ण विश्व अशांति, आतंक, हिंसा, घृणा, मिथ्या, छल-कपट, ईर्ष्या, राग, द्वेष से ग्रस्त होकर अति दुःखी व अशांत है। धनी, निर्धन, बली-निर्बल या विद्वान्-मूर्ख सभी अशांत हैं। तब विचार होता है कि क्या कारण है कि चिकित्सा करते रहने पर भी रोग बढ़ता ही जा रहा है। मेरा मानना है कि इस सबका मूल कारण सत्य और वास्तविकता से अनभिज्ञ रहना अथवा जानकर भी उसके अनुकूल व्यवहार न करना ही है। आज सारे संसार में विकास की प्रतिस्पर्धा हो रही है। हमें विचारना होगा कि विज्ञान ने हमें अनेकों सुख सुविधाऐं प्रदान कीं। परन्तु क्या हम सुखी व सन्तुष्ट हुए? क्या दया, करुणा, मैत्रीभाव, भाईचारा, ईमानदारी, सच्चाई जैसे मानवीय मूल्यों को यह अंधाधुंध विकास की आंधी ने नष्ट-भ्रष्ट नहीं कर दिया है? जिस मनुष्य के लिए इन संसाधनों का विकास हो रहा है, वह मनुष्य अन्तःकरण एवं आत्मा से कितना विकसित हुआ है? उसका हृदय कितना विशाल व उदात्त हुआ है? उसका मस्तिष्क कितना सत्यासत्य विवेकी व न्यायप्रिय हुआ है, क्या आज किसी के पास यह सोचने का समय वा इच्छा है? परन्तु मेरे प्यारे मित्रो! जरा सोचिए! इसका दोष विज्ञान को तो नहीं दिया जा सकता। विज्ञान तो साधन है, साधन स्वयं में अच्छा या बुरा नहीं होता, बल्कि उसके उपयोगकर्ता पर निर्भर है कि साधन से अच्छा कार्य करे वा बुरा। उपयोगकर्ता की मनोवृत्तियां ही अच्छे व बुरे के लिए उत्तरदायी हैं। अब प्रश्न उठता है कि मनुष्य की पतनोन्मुखी मनोवृत्तियों का परिष्कार कौन करे? तब हमारा ध्यान सहसा ही धर्म की ओर जाता है परन्तु आज संसार में देखें, तो अनेक परस्पर विरुद्ध विचार वाले मत मतान्तर धर्म का रूप

धारण करके मानव को सुधारने का प्रयत्न करते दिखाई दे रहे हैं और वास्तविकता यह है कि मानव इनमें फँसकर अंधविश्वास, रूढ़िवाद, अविद्या, दुराग्रह, पारस्परिक घृणा, हिंसा की ओर बढ़ता रहा है एवं बढ़ रहा है। धर्म के नाम पर जितना रक्तपात व वैमनस्य संसार में सदियों से होता आया है, सम्भवतः उतना किसी अन्य कारण से नहीं हुआ हो। आज भी यह पाप जारी है। मैं जब इस पर विचारता हूँ, तो प्रतीत होता है कि केवल विश्वास के आधार पर टिके मत-मतान्तरों का होना ही मानव जाति के लिए घातक है। इस अनिष्ट फल से बचने के लिए धर्म (जो केवल एक ही हो सकता है, जबकि मत-पंथ अनेक हो सकते हैं) को सच्चे स्वरूप में समझना होगा। ऐसा तब हो सकेगा, जब इसे विज्ञान के साथ पूर्णतः जोड़ दिया जायेगा। तब धर्म पर आस्था रखने वाले उसी प्रकार एकमत हो सकेंगे, जिस प्रकार भौतिकी, रसायन-विज्ञान, गणित, खगोलिकी, जीव-विज्ञान, कृषि विज्ञान, आयुर्विज्ञान आदि विषयों में संसार के सभी मनुष्य एक मत हैं। इन भौतिक विद्याओं के कारण संसार में न कभी अलगाववाद पनपा और न रक्तपात ही हुआ। मुझे आश्चर्य व दुःख है कि दुःखनाशक व सुखमूलक धर्म के नाम पर यह पाप क्यों? आध्यात्मिकता के नाम पर ईर्ष्या, द्वेष, हिंसा क्यों? मेरे जागरूक मित्रो! हमें धर्म का एक ऐसा सच्चा स्वरूप संसार के सम्मुख लाने का प्रयास करना होगा, जिसमें पाखण्ड, अंधविश्वास, अवैज्ञानिकता, पूर्वाग्रह, रूढ़िवाद, अमानवीयता, पक्षपात व असत्य का कोई स्थान नहीं हो। जो देश, काल व परिस्थितियों की सीमाओं से परे शाश्वत व सार्वदेशिक हो। जो मानव ही नहीं अपितु प्राणिमात्र के लिए सदैव हितकर हो। यही विचार संसार के आद्य ऋषि ब्रह्मा से लेकर ऋषि दयानन्द पर्यन्त का रहा है। धर्म के नाम पर अलगाववाद का पाठ पढ़ाने वाले, सत्य-तर्क-विज्ञान के नाम से भयभीत होकर दूर भागने वाले धर्मप्रचारकों, आचार्यों, साधु-सन्तों, पंडितों, मौलवियों, पादरियों, ग्रंथियों आदि सभी मान्य महानुभावों को अपने-अपने हठ, दुराग्रह, पूर्वाग्रह, पद-प्रतिष्ठा धन की लालसा को त्याग कर विज्ञान-बुद्धि से सोचने का साहस जुटाना होगा। उन सभी महानुभावों को विचारना होगा कि जब हम परमात्मा के बनाये भौतिक नियम विज्ञानादि पर एकमत हो सकते हैं। इन विषयों को साथ-साथ मिल बैठकर पढ़-पढ़ा सकते हैं और ऐसा करते हुए भौतिक उन्नति कर सकते हैं, तब इसी भाँति परमात्मा के ही बनाये आध्यात्मिक नियमों

में परस्पर भेद क्यों स्वीकार करते व बढ़ाते हैं? आज नये-नये मत जन्म लेकर अपने को सच्चा धर्म बताने का दावा कर रहे हैं, तो आमजन ही नहीं अपितु अत्युच्च शिक्षित महानुभाव, यहाँ तक वैज्ञानिकों का भी धर्म विषयक विशेष अध्ययन व चिन्तन नहीं होता, इससे वे भय या लोभ के वशीभूत अथवा भीड़ को देखकर मत-पंथों के दलदल में फँस जाते हैं। बड़े-बड़े राजनेता, समाजशास्त्री, पत्रकार, संविधानवेत्ता व साहित्यकार भी धर्म विषय में नितान्त मूढ़ बन सत्यासत्य विवेक बिना ही एकता का मिथ्या पाठ पढ़ाते हैं। कोई यह विचारने का यत्न नहीं करता कि **सत्य का आधार न तो भारी भीड़ होती है, और न ही लोभ या भय से उत्पन्न कोई फलाकांक्षा की पूर्ति हो जाना। सत्य का निर्णय वैज्ञानिक बुद्धिजन्य तर्क, प्रमाण व तथ्यों के आधार पर तथा गहन, मनन, चिन्तन व निर्मल निष्पक्ष निःस्वार्थ हृदय से ही हो सकता है, जो आज दुर्लभ प्रायः हो गया है।** हम यह भी विचारने का प्रयत्न नहीं करते कि हम धर्माचार्य सत्य, न्याय, निःस्वार्थ, निष्कपटता की बात करते अवश्य हैं, परन्तु अपने-अपने मत की न्यूनताओं को जानते हुए भी दुराग्रही बने रहते हैं तथा अपने मत के दोष बतलाने वाले के प्राण घातक भी बन बैठते हैं। तब सत्य ग्रहण की तो बात ही क्या कहें? उधर जो वैज्ञानिक सत्य, न्याय, पक्षपातरहितता, अध्यात्म, निर्मलता, नैतिकता की लेशमात्र भी चर्चा नहीं करते, वे सत्य के ग्रहण तथा असत्य के परित्याग के लिए सदैव तत्पर रहते हैं। कोई वैज्ञानिक जिसे धर्माचार्य भले ही नास्तिक कह दें, अपने जीवन भर के पुरुषार्थ से खोजे गये किसी सिद्धान्त को किसी अन्य वैज्ञानिक द्वारा असिद्ध होते जान लेता है, तब वह तत्काल अपनी भूल को स्वीकार कर नवीन सिद्धान्त को अपना लेता है, जिस बात को वैज्ञानिक नहीं जानता, तो तत्काल अपनी कमी स्वीकार कर लेता है। कभी अतिशयोक्ति में बात नहीं करता। अहा! कैसा अनूठा आदर्श वे हम धर्माचार्य कहाने वालों के लिए प्रस्तुत करते हैं। **ऐसे धर्म को धिक्कार है, जो हमें सत्य की ओर जाने से रोके।** क्या हमें यह नहीं सोचना चाहिए कि हमें सत्यासत्य विवेक के क्षेत्र में सबसे अधिक उदार व विशाल हृदय होना चाहिए, क्योंकि सत्य से बढ़कर कोई धर्म नहीं होता। मैं विचारता हूँ कि **जिस दिन विश्व भर के धर्माचार्य पूर्ण निष्पक्ष होकर सत्य का ग्रहण व असत्य का परित्याग करने का सत्साहस करेंगे, उस दिन संपूर्ण भूमण्डल पर एक सत्य धर्म का शासन होगा, एक ईश्वर की पूजा होगी। साम्प्रदायिक**

हिंसा, वर्गसंघर्ष, देशसंघर्ष आदि समाप्त होकर सारा विश्व परमपिता परमात्मा का एक परिवार बनने की दिशा में अग्रसर होगा परन्तु दूसरी ओर हमारे आधुनिक वैज्ञानिकों को भी यह सोचना होगा कि विज्ञान को तकनीक से कहाँ तक जोड़ना उचित व आवश्यक है, जिससे मानव व्यर्थ की स्पर्धा में फँसकर सर्वविध असंतोष में जलता हुआ चिन्ता, अवसाद, ईर्ष्या-द्वेष से ग्रसित होकर दुःखों से पीड़ित न होता रहे। पर्यावरण नष्ट भ्रष्ट होकर जीवों की प्रजातियां तक लुप्त न होती रहें। नये-नये रोग, जल, वायु का संकट न बढ़ता रहे। और इन सबके कारण संसार में भयंकर असंतोष, संघर्ष, कृत्रिम अभाव, आतंकवाद का जन्म न होता रहे। इस हेतु विज्ञान को भी सत्य धर्म से जुड़ना होगा। ऐसा करने से विज्ञान उपर्युक्त समस्याओं का जनक नहीं बनकर धर्म के साथ मिलकर मानवीय मूल्यों का संरक्षक बनेगा। पर्यावरण शुद्ध व सुरक्षित रहेगा। इसके लिए वैज्ञानिकों, समाज शास्त्रियों, साम्यवादियों अर्थचिन्तकों व राजनैतिकों को अपना दृष्टिकोण बदलने का साहस करना होगा। धर्म को नशा न मानकर सत्याचरण पर आधारित मानवीय मूल्यों का संरक्षक मानना होगा। धर्म को विश्वास की कल्पित वस्तु मानने के स्थान पर वैज्ञानिक सत्य पर सिद्ध मानना होगा। जिस दिन विज्ञान ऐसे सत्य धर्म को साथ लेकर अनुसंधान करेगा, तब सारा विश्व भोगवाद की स्पर्धा को विकास नाम से सम्बोधित नहीं करके त्यागवाद में संतुष्ट रहकर आवश्यक, उपयोगी तथा निरापद आविष्कार ही करेगा। इससे न तो प्राकृतिक संसाधनों की न्यूनता होगी और न ही कृत्रिम अभाव एवं सामाजिक असमानताजन्य, अशान्ति व असन्तोष पनपेगा।

इस प्रकार के सुखद समाज को बनाने की भावना ऋषियों की सदैव से रही है। ऋषि दयानन्दजी तो परमाणु से लेकर परमेश्वर तक का यथार्थ ज्ञान व उससे अपना व दूसरों का उपकार करना ही विद्वानों का कर्तव्य बताते हैं। पूर्वकालीन ऋषि, देवगणों में ब्रह्मा, मनु, भृगु, नारद, सनत्कुमार, मार्कण्डेय, अगस्त्य, भरद्वाज, अत्रि, यास्क, गोतम, कणाद, कपिल, व्यास, पंतजलि, याज्ञवल्क्य, बृहस्पति, महादेव-शिव, विष्णु, राम, कृष्ण आदि हजारों महापुरुषों तथा मध्यकालीनों में आर्यभट्ट, भास्कराचार्य, ब्रह्मगुप्त आदि की दृष्टि में सत्य धर्म तथा सच्चे विज्ञान का ऐसा ही आदर्श था, जिस कारण तत्कालीन संसार में सुख-शान्ति का साम्राज्य था। उधर महान् विदेशी वैज्ञानिकों में सर

अल्बर्ट आइंस्टाइन, सर आलीवर जोसेफ लॉज, प्रो. जान एमबोज फ्लेमिंग, प्रो. एडवर्ड हल, जान एलन हार्कर, प्रो. सिलवेनिस फिलिप्स आदि अनेक वैज्ञानिक विज्ञान व अध्यात्म के प्रबल समर्थक थे।

आज हमारे सम्मुख चुनौतीपूर्ण प्रश्न यह है कि आज जब विज्ञान व अध्यात्म दोनों अति दूर खड़े दिखाई दे रहे हैं, तब कैसे इन्हें साथ-साथ लाया जाये? मेरे मस्तिष्क व आत्मा ने विचारा कि क्यों न अपना जीवन इसी महान् मानवीय कार्य के लिए समर्पित किया जाये? सत्य, वेद, धर्म के संस्कार आर्य परिवार के वातावरण से मिले। मेरे आदर्श स्वरूप ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों से पोषण मिला। इस समय कुछ वैज्ञानिकों व वैदिक विद्वानों का सद्भाव व सहयोग मिल रहा है। मैं आशा करता हूँ कि विश्व के अन्य प्रसिद्ध वैज्ञानिकों, दार्शनिकों, धर्माचार्यों व युवकों का भी ऐसा ही भाव मेरे प्रति बनेगा।

मेरे मित्र महानुभावो! मैंने अब तक तो वेद धर्म को सत्य धर्म की शर्तों पर स्वबुद्धि के अनुसार यथार्थ पाया है। इस कारण मैंने विचार किया है कि वैदिक वाङ्मय से विज्ञान के गूढ़ रहस्यों को खोजकर आधुनिक वैज्ञानिकों के समक्ष प्रस्तुत किया जाये, वे उस पर प्रयोगशालाओं में अनुसंधान करें, तो उन्हें जहाँ समय की बचत होगी, वहीं उन्हें अनुसंधान हेतु नये-नये क्षेत्र प्राप्त हो सकेंगे। इसके साथ ही वैदिक विज्ञान की प्रामाणिकता भी उनकी दृष्टि में बढ़ेगी। मैं यह अनुभव कर रहा हूँ कि वर्तमान विज्ञान कई बिन्दुओं पर अपने को असहाय अनुभव कर रहा है। मैं संकल्पित हूँ कि उस असहाय विज्ञान को वैदिक वैज्ञानिक रहस्यों के द्वारा नई दिशा प्रदान करूँ। **मैं वेद को वर्तमान विज्ञान के पीछे नहीं बल्कि वर्तमान विज्ञान को वेद के पीछे चलाने की भावना रखता हूँ और मुझे विश्वास है कि मैं ऐसा कर पाऊंगा।** इससे उसकी श्रद्धा वेद की अन्य विद्याओं (यथा अध्यात्म, सामाजिक, राजनैतिक सिद्धान्त, अर्थशास्त्र आदि) पर भी होगी। प्रबुद्धजनों को इस बात का भी अनुभव होगा कि वेद वा वैदिक साहित्य किसी देश या वर्ग के लिए ही नहीं, अपितु विज्ञानादि की भाँति समस्त सृष्टि के लिए हितकारी है। संसार को धीरे-धीरे इस बात का भी ज्ञान होगा कि वेद किसी देश वा वर्ग विशेष की संपदा नहीं बल्कि सभी मानवों की सम्पत्ति है। वेद उस काल का है, जब हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई, जैन,

बौद्ध, पारसी, ताओ, यहूदी, साम्यवादी, नास्तिक आदि वर्ग बने भी नहीं थे। तब समस्त भूमण्डल पर सभी केवल मानव ही कहलाते थे। उस समय देशों का प्रादुर्भाव भी वर्तमान रूप में नहीं हुआ था। यह वेद ही समस्त ज्ञान-विज्ञान का मूल है, ऐसा जिस दिन सिद्ध हो जायेगा, तो मुझे कोई कारण प्रतीत नहीं होता कि कोई प्रबुद्ध मानव इसे स्वीकार न करे। मेरे बन्धुवर! जिस बात को मैं, यहां कह रहा हूँ, उसे सिद्ध करना ही मेरे जीवन का लक्ष्य है। **मेरा जीवन विश्व भर के प्राणिमात्र के समग्रहित चिन्तन के लिए है, न कि किसी मत पंथ का प्रचार करना मेरा प्रयोजन है। इसके लिए मैं धर्म व विज्ञान दोनों को परस्पर मिलाने के प्रयत्न का दृढ़ व्रती हूँ।** विज्ञान से तात्पर्य सर्वत्र तकनीकी ज्ञान भी मैं ग्रहण नहीं करता। मैं समझता हूँ कि बेरोक व अनावश्यक तकनीक मानव को आलसी, भोगवादी गलाकाट-प्रतिस्पर्धी, अशांत व संघर्षप्रिय बनाती है। मेरा ध्येय सृष्टि के गम्भीर व सूक्ष्म रहस्यों को जानकर महती चेतना परमात्मा की ओर विज्ञान को उन्मुख करना है। इससे मानव में आस्तिकता, दयाभाव, प्रेम, न्याय, सत्य आदि गुणों का उदय होगा। वह निरंकुश व स्वेच्छाचारी नहीं बनकर परमात्मा के आधीन चलेगा। इसी क्रम में परमाणु-नाभिकीय-कण-ब्रह्माण्ड-भौतिकी के गूढ़ तत्वों को वैदिक वाङ्मय से खोजने के साथ-साथ आधुनिक विज्ञान की अवधारणाओं को समझना मेरी रुचि के विषय रहे हैं। मेरी दृष्टि में उपर्युक्त विषय विज्ञान के सूक्ष्मतम विषय हैं, अन्य सभी विज्ञान इनसे किसी न किसी प्रकार जुड़े हुए हैं। मेरा मानना है कि उपर्युक्त विषयों में आधुनिक विज्ञान, वैदिक विज्ञान से अनेकत्र नयी दिशा प्राप्त कर सकता है। ऊर्जा व द्रव्यमान के रहस्यों को समझना भी इसी क्षेत्र का विषय होगा। इसके आगे अनेक उपयोगी तकनीकी विषय भी अनायास ही प्राप्त हो सकेंगे, ऐसी मैं सम्भावना करता हूँ।

आधुनिक विज्ञान उपर्युक्त विषयों में क्या-क्या भूल कर रहा है? तथा वर्तमान व मध्यकालीन वैदिकों ने क्या-क्या भूलें वैदिक ज्ञान को समझने में की है, या कर रहे हैं, इसका भी स्पष्ट अनुमान मेरे मस्तिष्क में है व होता भी जायेगा, ऐसा विश्वास है। (इसका कुछ संकेत वेद विज्ञान शोध प्रक्रिया नामक लेख में किया गया है।) मुझे इस दिशा में कार्य करते लगभग तेरह वर्ष ही व्यतीत हुये हैं। सृष्टि के मूल विषय पर अल्पचिन्तन से एक पुस्तक प्रकाशित की थी। पुस्तक अति संक्षेप

में है। यह पुस्तक हमने अपना कार्य प्रारम्भ करते ही २००५ सन् में प्रकाशित की थी। आज मैं स्वयं उसमें अनेक अपूर्णताएं व न्यूनताएं पा रहा हूँ। पुनरपि वह पुस्तक आधुनिक विज्ञान के लिये कुछ क्षेत्रों में एक चुनौती अवश्य है। हाँ, एक दो मित्रों ने जिन न्यूनताओं के बारे में बताया परन्तु वे न्यूनतायें नहीं है, बल्कि संक्षेपजन्य अस्पष्टता है।

अभी हाल में ऐतरेय ब्राह्मण का मेरा वैज्ञानिक भाष्य **'वेदविज्ञान-आलोकः'** नाम से प्रकाशित हुआ है। यह विशालकाय ग्रन्थ चार भाग में बड़े आकार के कुल २८०० पृष्ठों में प्रकाशित है। इस ग्रन्थ के आधार हमने विश्व के २७ देशों के ४० शीर्ष विश्वविद्यालयों के भौतिकी विभाग, NASA & CERN जैसे विश्वविख्यात वैज्ञानिक संस्थानों, कुछ नोबल पुरस्कार विजेता वैज्ञानिकों, भारत के केन्द्रीय विश्वविद्यालयों व आई. आई. टीज् के भौतिकी विभाग तथा सभी प्रसिद्ध रिसर्च सेन्टरों को भौतिक विज्ञान के एक सौ मौलिक प्रश्न अभी-अभी पूछे हैं। अभी तक प्रायः मौन हैं।

हमारा दावा है कि हम इन प्रश्नों में से जो भी वास्तविक प्रश्न हैं, उनका पूर्ण समाधान अपने ग्रन्थ **'वेदविज्ञान आलोकः'** के माध्यम से कर सकते हैं परन्तु दुर्भाग्य से वर्तमान भौतिक वैज्ञानिकों में मिथ्या दुराग्रह व अहंकार भरा दिखाई देता है, जिसे हमने बनारस हिन्दू विश्वविद्याय में 'Recent Development in Cosmology' विषय पर कॉन्फ्रेंस में दिनांक 6-8 अप्रैल 2018 को स्वयं देखा। फिर भी हम इन वैज्ञानिकों को जगाने का प्रयास करते रहेंगे। हमने वैज्ञानिकों से जो एक सौ प्रश्न पूछे हैं, वे इस प्रकार हैं-

भौतिकी पर कुछ गंभीर और मौलिक प्रश्न जिनके बारे में हमें सोचना चाहिए।

1. ब्रह्माण्ड की प्रारंभिक अवस्था क्या है?

String Theory

2. स्ट्रिंग्स क्या है?

3. क्या वे शाश्वत सूक्ष्म पदार्थ हैं?
4. यदि नहीं, तो वे किससे बने हैं?
5. क्या उनमें द्रव्यमान है?
6. यदि स्ट्रिंग कंपित सूक्ष्म पदार्थ है, तो वे किस माध्यम में कंपन करते हैं?
7. उनकी ऊर्जा का स्रोत क्या है?
8. ब्रेन्स क्या हैं?
9. उनकी संरचना क्या है?
10. क्या वे शाश्वत हैं?
11. यदि नहीं, तो वे कैसे बनते हैं?

Ekypyrotic Universe

12. ब्रेन्स के टक्कर का क्रियाविज्ञान क्या है?
13. कौन सा बल ब्रेन्स के आकर्षण और प्रतिकर्षण के लिए उत्तरदायी है?
14. यह एक चक्रीय प्रक्रिया है, तब क्या इस प्रक्रिया में ऊर्जा की कोई कमी नहीं होगी? यदि हाँ, तो यह चक्र भविष्य में समाप्त हो जायेगा और जो अतीत में शुरू हुआ था।
15. तब उस शुरुआत का क्या कारण था? अगर उनमें पहले से ही द्रव्यमान और आवेश विद्यमान था, तो ब्रह्मांड उन ब्रेन्स से ही स्वयं क्यों नहीं बना? फिर टक्कर की आवश्यकता क्यों पडी?

Big Bounce

16. जब गुरुत्वाकर्षण के कारण ब्रह्मांड पूरी तरह से सिकुड़ गया, तब कौनसा बल बिग-बैंग और बिग-बाउन्स के लिए उत्तरदायी है? यह बल कैसे उत्पन्न होता है?
17. क्या बिग-बाउन्स के दौरान टाईम शून्य हो जाता है?

18. यदि हाँ, तो यह टाईम पुनः कैसे शुरू होता है?
19. उस समय पदार्थ का क्या स्वरूप था?

Cyclic Universe

20. सबसे प्रथम बिग बैंग का क्या कारण था?
21. विस्तार के पश्चात् संकुचन का प्रारम्भ कैसे होता है, जबकि उस समय गुरुत्वाकर्षण बल प्रबल नहीं होता है।
22. ब्रह्माण्ड के क्रमिक विकास के दौरान गतिज ऊर्जा कैसे वृद्धि कर रही थी? क्या प्रारम्भ में गतिज ऊर्जा शून्य थी?

Bubble Universe

23. धनात्मक एवं ऋणात्मक ऊर्जा में क्या अन्तर है?
24. Nothing से धनात्मक एवं ऋणात्मक ऊर्जा के बनने का क्रियाविज्ञान क्या है?
25. भौतिकी के नियम कैसे बनते हैं?

Big Bang Theory

26. बिग बैंग से पूर्व पदार्थ का क्या स्वरूप था? पदार्थ का निर्माण कैसे होता है?
27. कौनसा बल उस पदार्थ को अनन्त रूप से संघनित करता है? उस बल का स्रोत क्या था?
28. शून्य आयतन में किसी भी प्रकार के पदार्थ के आदान-प्रदान की प्रक्रिया का होना कैसे सम्भव है?
29. वर्तमान विज्ञान सभी मूल बलों का कारण किन्हीं विशेष प्रकार के मीडिएटर पार्टिकल्स के आदान-प्रदान को मानता है, तब उस अनन्त संघनित पदार्थ के अन्दर कौनसे पार्टिकल्स का आदान-प्रदान हुआ?

30. कौनसा बल या ऊर्जा, इतने शक्तिशाली बल के होते हुए भी उस महाविस्फोट के लिए उत्तरदायी है?
31. इन्फ्लेशन का क्या कारण है?
32. यदि इन्फ्लेशन एन्टी-ग्रेविटी के कारण होता है, तब किस कारण ग्रेविटी एन्टी-ग्रेविटी की तरह व्यवहार करती है?
33. इन्फ्लेशन फील्ड कब और कैसे बनता है और इसका क्या स्रोत है?
34. सिमिट्री कैसे भंग होती है और इसका क्या कारण है?
35. क्या सिमिट्री भंग के लिए ब्रह्माण्ड का कोई अन्य बल उत्तरदायी है?
36. चारों मूल बलों के विभाजन का क्या क्रियाविज्ञान है?
37. ये कैसे उत्पन्न होते हैं?
38. 10^{-43} के पहले ऊर्जा किस अवस्था में विद्यमान थी?
39. यदि यह फोटोन के रूप में थी, तब उस समय विद्युत चुम्बकीय बल भी अवश्य विद्यमान होना चाहिए, परन्तु इसे कोई भी स्वीकार नहीं करता, क्यों?
40. गुरुत्वाकर्षण बल सर्वप्रथम यूनिफाइड फोर्स से उत्पन्न हुआ, जबकि आइंस्टीन कहते हैं कि गुरुत्वाकर्षण बल कोई बल नहीं है बल्कि केवल स्पेस-टाइम का कर्वेचर है, तब गुरुत्वाकर्षण बल वास्तव में क्या है?

Time

41. काल (टाइम) क्या है?
42. काल कैसे उत्पन्न होता है?
43. यह बिग बैंग के समय कैसे प्रारम्भ होता है?
44. क्या यह केवल भ्रम है या वास्तव में कोई सूक्ष्म पदार्थ है?
45. ब्रह्माण्ड में इसकी क्या भूमिका है?
46. ऋणात्मक या शून्य टाइम (काल) से हमारा क्या आशय है?

47. इसके स्वरूप की वास्तविकता को जाने बिना हम कैसे कह सकते हैं कि टाइम ऋणात्मक या शून्य होता है?

Space

48. स्पेस क्या है?
49. ब्रह्माण्ड में इसकी क्या भूमिका है?
50. वर्तमान वैज्ञानिक स्पेस की संरचना को शीट या नेट जैसा मानते व दर्शाते हैं, परन्तु कोई इसकी वास्तविक संरचना के बारे में नहीं जानता है?
51. इसके उत्पत्ति का क्रियाविज्ञान क्या है?
52. क्या आकाश (Space) एक वास्तविक पदार्थ है? जो एक द्रव्यमान युक्त वस्तु के प्रभाव से मुड़ता है, और जिसमें तरंगें उत्पन्न होती हैं और जो फैलता है तथा विकृत होता है?
53. यह किन–२ पदार्थों से मिलकर बनता है?
54. स्पेस द्रव्यमान युक्त और आवेशित वस्तुओं के साथ क्रिया क्यों करता है?
55. स्पेस और द्रव्यमान/आवेश के मध्य क्या संबंध है?
56. क्या स्पेस में द्रव्यमान और आवेश विद्यमान होता है?
57. हम स्पेस टाइम की Singularity की बात करते हैं लेकिन स्पेस और टाइम के मध्य क्या संबंध है? और क्यों?
58. अगर स्पेस एक काल्पनिक वस्तु है, तब इसका विस्तार, विनाश, झुकाव और Singulirity भी काल्पनिक होनी चाहिए, तो हम काल्पनिक वस्तुओं से वास्तविक संसार को कैसे समझ सकते हैं?

Red Shift and CMB

59. क्या विद्युत चुम्बकीय तरंगें स्पेस के साथ जुड़ी हुई हैं?

60. यदि हाँ, तो उनकी अपनी कोई गति नहीं होगी, लेकिन वे स्पेस की गति के साथ गमन करेंगी, जो वर्तमान समय में Hubble गति होगी?

61. बिग–बैंग के समय, सम्पूर्ण ऊर्जा स्पेस के साथ गमन करेगी (10^{28} m/s)। तब खगोलीय पिंड के निर्माण के लिए ऊर्जा को कैसे संघनित किया जा सकता है?

62. क्या सभी खगोलीय पिंड और कण भी स्पेस से जुड़े होते हैं? यदि हाँ, तो वे एक–दूसरे साथ संयोग कभी नहीं करेंगे और वे सिर्फ स्पेस की गति से गमन करेंगे।

63. यदि वैद्युत चुम्बकीय तरंग स्पेस के साथ जुड़ी हुई नहीं है, तब रेडशिफ्ट का क्या कारण है?

64. स्पेस का फैलाव सिर्फ तरंगों को प्रभावित कर सकता है, अणु, परमाणु आदि क्यों को नहीं?

65. स्पेस का फैलाव क्यों सिर्फ गेलैक्सियों को प्रभावित कर सकता है, और तारे, ग्रह व उपग्रह को नहीं?

66. CMB विकिरण, जो 13 अरब वर्षों से पहले मुक्त हुआ था, तो अब हम इसे कैसे प्राप्त कर सकते हैं? जबकि ब्रह्माण्ड एक त्वरित गति के साथ फैल रहा है।

67. अगर यह विकिरण लगातार हमारे द्वारा निरन्तर प्राप्त हो रहा है, तो इसका तापमान ब्रह्माण्ड में हर जगह समान नहीं हो सकता।

Elementary Particles

68. ग्रेवीटॉन या अन्य फील्ड कण कैसे बनते है?

69. ब्रह्मांड के प्राथमिक अवस्था में फोटॉन और मूल कण कैसे बनते हैं?

70. उनकी संरचना क्या है?

71. गुरुत्वाकर्षण बल सबसे कमजोर बल क्यों है?

Mass

72. वास्तव में द्रव्यमान क्या है?

73. द्रव्यमान का गुण कैसे उत्पन्न होता है?

74. यदि इसका उत्तर हिग्स फील्ड है, तो इसके Quanta के द्रव्यमान का क्या कारण है? (हिग्स बोसोन 125 GeV/c^2)

75. यदि हम कहें कि यह द्रव्यमान बिग-बैंग के समय ऊर्जा से उत्पन्न होता है, तो प्रश्न यह है कि यदि एक बहुत बड़े कण (हिग्स बोसोन) की उत्पत्ति ऊर्जा द्वारा सम्भव है, तब उसी ऊर्जा से अत्यधिक छोटे द्रव्यमान वाला इलेक्ट्रॉन क्यों नहीं उत्पन्न हो सकता?

Charge

76. पदार्थ द्वारा आवेश के गुणधर्म दर्शाने का मौलिक कारण क्या है?

77. यदि यह ऊर्जा(युग्म उत्पादन) से उत्पन्न होता है, तो क्या इसका अर्थ यह नहीं है कि फोटॉन में इलेक्ट्रॉन और पॉजिट्रॉन के समान अवयव होते हैं?

78. वे कौन से मौलिक पदार्थ है, जिनसे आवेश के गुणधर्म उत्पन्न होते है।

79. आवेश और ऊर्जा के बीच क्या सम्बंध है?

80. यदि पीटर हिग्स ने द्रव्यमान जैसे मौलिक गुणधर्म के लिए हिग्स फील्ड की कल्पना की है, तो मुझे विद्युत् आवेश जैस मौलिक गुणधर्म विद्युत आवेश के लिए और किसी फील्ड की कल्पना क्यों नहीं करनी चाहिए?

81. साथ ही, विभिन्न प्रकार के आवेश (कलर आवेश) के लिए विभिन्न प्रकार के फील्ड होने चाहिए। क्या आप इसे स्वीकार करेंगे?

82. विपरीत आवेशित कणों के अवयवों के मध्य क्या अंतर है?

83. वर्चुअल फोटॉन का आवेशित कणों के मध्य क्यों आदान-प्रदान होता है, जबकि ये द्रव्यमानरहित होते हैं तथा उन पर कोई विद्युत् आवेश भी नहीं होता है।
84. इन फोटॉनों को क्यों नहीं डिटेक्ट कर सकते?
85. वे थोड़े समय के लिए क्यों विद्यमान रहते हैं?
86. इनके आदान-प्रदान के लिए कौनसा बल जिम्मेदार है?
87. एक विद्युत् क्षेत्र किससे बना होता है?
88. आवेशित कण विद्युत् क्षेत्र को कैसे बनाते हैं?
89. वैक्यूम ऊर्जा का क्या रूप है और यह कैसे उत्पन्न होती है?
90. वैक्यूम ऊर्जा से फील्ड कण की उत्पत्ति की क्रियाविधी क्या है?
91. फील्ड कणों के आदान-प्रदान के माध्यम से दो विपरीत आवेश कणों के आकर्षण का क्रियाविज्ञान क्या है?

ऊर्जा और डार्क ऊर्जा

92. ऊर्जा क्या है?
93. यह कैसे उत्पन्न होती है?
94. ऊर्जा द्वारा द्रव्यमान कैसे उत्पन्न होता है?
95. इसका क्रियाविज्ञान क्या है?
96. एक अवस्था से दूसरी अवस्था में ऊर्जा के रूपान्तरण का क्रियाविज्ञान क्या है?
97. डार्क पदार्थ क्या है और कैसे व किससे बना है?
98. डार्क ऊर्जा है और यह कैसे उत्पन्न होती है?
99. डार्क पदार्थ तथा डार्क ऊर्जा में क्या सम्बंध है?
100. किसी भी आकाशगंगा में उसके केन्द्र से तारों को धारण करने का क्रियाविज्ञान क्या है?

मेरा विश्वास है कि इन प्रश्नों का उत्तर वर्तमान भौतिकी नहीं दे सकती है, तब वैज्ञानिकों को हमारी वैदिक भौतिकी के विषय जानने

का प्रयास करना चाहिए। मतभेदों को दूर करने हेतु प्रत्येक प्रबुद्ध व वैज्ञानिक को हमारी लघु पुस्तिका ''विज्ञान क्या है?'' अवश्य पढ़नी चाहिए।

प्यारे भाइयो? मेरे हृदय में तीव्र इच्छा सदैव यह रहती है कि संसार का प्रत्येक मानव सत्य का प्रबल पक्षधर व अन्वेषक बने। यदि ऐसा न कर सके, तो सत्य अन्वेषण में स्वसामर्थ्यानुसार सहयोग तो करे ही। यदि सहयोगी भी नहीं बन सके, तो कम से कम किसी पूर्वाग्रह, दुराग्रह, पद-प्रतिष्ठा व धन की लालसा में अथवा अनेकता में एकता की भ्रान्त धारणा, कल्पित भ्रान्त मानवता, मिथ्याधारित राष्ट्रियता, मिथ्या सैक्यूलरिज्म के वशीभूत होकर सत्य का विरोधी तो नहीं बने। प्रत्येक मानव को यह बात हृदय की गहराइयों तथा मस्तिष्क के चिन्तन की ऊँचाइयों से विचारनी चाहिए कि सत्य-धर्म तथा विज्ञान दोनों की ही कोई भौगोलिक सीमा नहीं होती। तब नस्ल, भाषा, वर्ग, सम्प्रदाय का भेद तो नितान्त भ्रामक कल्पना है, यद्यपि मैं यह स्वीकारता हूँ कि कुछ बातें देश काल परिस्थिति के अनुसार बदल भी जाती हैं, परन्तु इसी तर्क पर भिन्न-भिन्न परस्पर विरुद्ध विचारों को सत्य मान लेना सत्य के साथ घोर अन्याय है। ईश्वर के नियम सार्वदेशिक, शाश्वत तथा सर्वहितकारी होते हैं। ईश्वर एक है, उसकी व्यवस्थाएं भी एक ही हैं, चाहे वे भौतिक क्षेत्र में हों अथवा आध्यात्मिक क्षेत्र में। उन्हें ही सत्य-धर्म तथा वास्तविक विज्ञान कहा जा सकता है और उसी सत्यमार्ग पर मानव मात्र को प्रवृत्त करना मेरा ध्येय है। मैं संसार भर के विद्वानों, वैज्ञानिकों, दार्शनिकों व धर्मानुरागियों के स्नेह व सहयोग का अभिलाषी हूँ। इसके साथ ही मैं विश्वभर के प्रबुद्धजनों, प्यारे छात्र-छात्राओं, पत्रकारों, शिक्षाविदों, समाज-शास्त्रियों, अर्थ-शास्त्रियों, राजनेताओं, उद्योगपतियों, व्यापारियों, कृषकों, श्रमिकों, नास्तिकों, साम्यवादियों या अन्य किसी भी क्षेत्र के प्रतिभाशाली युवाओं का आह्वान करता हूँ कि वे मेरे विचारों व उद्देश्य पर एक बार शान्त व निष्पक्ष हृदय एवं प्रखर तार्किक मस्तिष्क से गम्भीरता से विचार करें। यदि उनके निष्पक्ष आत्मा को यह मार्ग सत्य व हितकारी प्रतीत होवे, तो अपने-२ ढंग से यथेष्ट सहयोग करें व करावें।

मेरे प्यारे मानव !

क्या आप पुस्तक में ऐसा कुछ देखते हैं, जिसे आपका आत्मा मिथ्या तथा किसी भी प्राणी के लिए अहितकारी मानता है? यदि हाँ, तो कृपया हमें सूचित करने का कष्ट करें। क्या इसके अन्त में भौतिक विज्ञान से किये गये सभी प्रश्नों का उत्तर आपकी वैज्ञानिक प्रतिभा, जिसका आपको बहुत अहंकार है, के पास है? यदि नहीं तो आप इस मार्ग पर आओगे वा मिथ्या मार्गों पर ही यथेच्छ विचरना चाहोगे? बोलो मेरे प्यारे पाठक! किधर जाओगे?

(12) सभी से अन्तिम हार्दिक निवेदन

मेरे पाठक मित्रो! अब आप ही बोलें! एक ओर आपका मार्ग है, जो अनेकार्थ में अशान्ति, हिंसा, दुःख, अपराध, रोग आदि का जनक सिद्ध हो रहा है, तो दूसरी हमारा वेदविज्ञान का मार्ग है, जो आपका सहायक तो होगा ही, आपकी अनसुलझी समस्याओं का हल निकालेगा ही, साथ ही इस विश्व को शान्ति, आनन्द, अहिंसा, मैत्री, प्रेम, सहकार, स्वास्थ्य को सुन्दर वातावरण प्रदान करेगा। जिससे न केवल मानव अपितु प्राणिमात्र सुखी-सानन्द रहकर सम्पूर्ण पृथिवी को परमपिता परमात्मा का परिवार मानकर सभी मिलकर शान्ति से रह सकेंगे। मैं चाहता हूँ कि सम्पूर्ण भूमण्डल में विज्ञान व अध्यात्म का यथार्थ विकास हो। दोनों विषयों पर खुला सम्वाद हो। **पाखण्डी गुरुओं व दम्भी नास्तिकों दोनों का तिरस्कार हो।** निरापद तकनीक का ही आविष्कार व उपयोग हो। ईमानदारी, सच्चाई, जितेन्द्रियता, सत्य, प्रेम, भाईचारा, समानता, यथायोग्यवाद, पवित्रता, शान्ति, आनन्द, स्वास्थ्य, समृद्धि, करुणा आदि सद्गुणों का हर मानव में संचार होवे। पक्षपात, साम्प्रदायिकता, जन्मना जातिगत भेदभाव (सामाजिक व राजनैतिक), प्रतिशोध, हिंसा, असन्तोष, स्वेच्छाचारिता, बेईमानी, भ्रष्टाचार, पर्यावरण प्रदूषण, वैचारिक दूषण, भाषावाद, क्षेत्रवाद आदि पापों से यह ईश्वरपुत्र मानव दूर रहे। और **सब मानव ऐसे रहें, मानो संसार एक घोंसला है, जिसमें एक पक्षी का परिवार मिलकर प्रेम से रहा है, यही वेद का सन्देश है।**

'यत्र भुवनं भवत्येक नीडम्' और इस घोंसले अर्थात् विश्व में रहने वाले लोगों में ऐसा प्रेम होवे, इसकी उपमा में वेद कहता है कि ''जैसे गाय अपने नवजात बछड़े से प्रेम करती है। अपने प्राण देकर भी उसके प्राणों की रक्षा करने में तत्पर रहती है, वैसे ही हर मानव परस्पर प्रेम करे।'' महर्षि दयानन्द जी सरस्वती ने मनुष्य की परिभाषा करते हुए यही कहा है, ''जो अपने आत्मा के सुख व दुःख के समान पराये सुख को सुख व पराये दुःख को दुःख समझे।'' आयें! हम हिन्दू, मुस्लिम, ईसाई, जैन, बौद्ध, नास्तिक अथवा अनेक कथित जातियों व

उपजातियों के अंग न बनें, बल्कि वेद माता के शब्दों में **'मनुर्भव'** अर्थात् मनुष्य बनें।

यदि हम सब सच्चे अर्थों में मनुष्य बन गये, तो संसार की सभी समस्याओं का समाधान स्वतः हो जायेगा। और मनुष्य बनने का केवल एक ही मार्ग है, वेद मार्ग। यदि कोई दूसरा मार्ग बताये, तो हम विचार अवश्य करेंगे। इसके निर्णय के लिए एक सन्देश विश्व भर के सैक्यूलरवादियों से नामक अध्याय को ध्यान से पढ़ने का कष्ट करें। अब एक बार मैं पुनः आप सबसे जानना चाहूँगा कि आप किधर जायेंगे?

आशा है आप सत्य व कल्याण के मार्ग पर हमारे साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर चलेंगे। यही आपका व हमारा कर्तव्य है। आयें, अपने कर्तव्य व धर्म का निर्वहन करने का व्रत लें।

इस पुस्तक में समीक्षित सभी मतमतान्तरों के अनुयायी हृदय पर हाथ रखकर सोचें, निष्पक्षता से सोचें, प्राणिमात्र को एक ईश्वर वा खुदा की सन्तान समझ कर विचारें कि आप किधर जायेंगे? ऐसा निर्णय करें जिससे

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे पश्यन्तु भद्राणि मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत्।।

अर्थात् सभी सुखी हों, सभी निरोग होवें। सभी का कल्याण हो, कोई भी दुःख का भागी न बने।

(घ) सन्दर्भ व सहायक ग्रन्थ संकेत

पुस्तक का नाम	संस्करण	लेखक, अनुवादक	प्रकाशक (टीकाकार व भाष्यकार)
वेदविज्ञान–आलोकः	२०१८	आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक	श्री वैदिक स्वस्ति पन्था न्यास
शिवमहापुराणम्	२००६	डॉ. ब्रह्मानन्द त्रिपाठी	चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली
श्रीमद्देवी भागवतम्	२००८	डॉ. रामतेज पाण्डेय	,,
श्रीमद्भागवतमहापुराणम्	२००५	–	गीताप्रेस, गोरखपुर
भविष्य महापुराणम्	२००६	पं. बाबूराम उपाध्याय	हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग इलाहबाद
ब्रह्मवैवर्तपुराणम् (दोनों भाग)	२००१, २००२	तारिणीश झा व बाबूराम उपाध्याय	हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, इलाहबाद
महाभारत	संवत् २०५८	–	गीताप्रेस, गोरखपुर
रामायण	–		गीताप्रेस, गोरखपुर
पौराणिक पोल प्रकाश	२०००	पं. मनसारामजी 'वैदिक तोप'	विजयकुमार गोविन्दराम हासानन्द, दिल्ली
पौराणिक पोप पर वैदिक तोप	१९९९	,,	,,
आर्य सिद्धान्त सागर	१२-१२/१९८९	आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री	वैदिक सिद्धान्त सन्देश, फरीदाबाद
आर्योदय	२० मार्च १९६६	रघुवीरसिंह शास्त्री	आर्योदय हिन्दी साप्ताहिक, नई दिल्ली
कुरान		(तर्जुमा मौलाना फतेह मुहम्म्द खां साहिब)	महमूद एण्ड कम्पनी, मुम्बई
बाइबिल			बाइबिल सोसायटी ऑफ इंडिया महात्मा गांधी रोड़, बैंगलोर
धम्मपद	१९९१	कुन्दन दिवाण	सर्व सेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी

महर्षि मनु बनाम डॉ. अम्बेडकर	२००७	डॉ. सुरेन्द्रकुमार	सत्यधर्म प्रकाशन, रोहिणी, नई दिल्ली
हिन्दू धर्म की विडम्बनाएँ	२००७	आर. के. आकोदिय	आकोदिया पब्लिकेशन्स, जयपुर (राज.)
भारत के मूल निवासी	२००२	स्वप्नकुमार बिश्वास	ओरियन बुक्स, कोलकाता और आर्य आक्रमण
देवता, झूठे देवता, शूद्र और अछूत	२००७	स्वप्नकुमार बिश्वास	मूल निवासी पब्लिकेशनन्स ट्रस्ट, नई दिल्ली
ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका		महर्षि दयानन्द सरस्वती	
सत्यार्थ प्रकाश		महर्षि दयानन्द सरस्वती	
ऋग्वेद भाष्य		महर्षि दयानन्द सरस्वती	
मनुस्मृति		डॉ. सुरेन्द्रकुमार	आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट ४५५, खारी बाबली, दिल्ली-६
कठोपनिषद्			
रामचरितमानस		गोस्वामी तुलसीदास	
आर्योदेश्य रत्नमाला		महर्षि दयानन्द सरस्वती	
वैशेषिक दर्श		आचार्य उदयवीर शास्त्री	
उपदेश मंजरी		महर्षि दयानन्द सरस्वती	
यजुर्वेद भाष्य		महर्षि दयानन्द सरस्वती	
यही मार्ग क्यों		आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक	
वेदार्थ समर्पणम्		आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक	
न्याय दर्शन		आचार्य उदयवीर शास्त्री	
मीमांसा-शाबर-भाष्य	१९८४	म. म. पं. युधिष्टिर मीमांसक	बहालगढ सोनीपत, हरियाणा
बहुजनों का बहुजन भारत	२४ फरवरी २००८	वामन चिंधुजी मेश्राम	रेंगरपुरा करोलबाग, नई दिल्ली
वैदिक सम्पत्ति		पं. रघुनन्दन शर्मा	श्री प्रहलादकुमार धूड़मल आर्य धर्मार्थ ट्रस्ट, हिण्डौनसिटी

(ङ) विश्व शान्ति का आधार – मानव धर्म–सूत्र दशक

1. सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उन सब का आदि मूल परमेश्वर है।

2. ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप, निराकर, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्त्ता है, उसी की उपासना करनी योग्य है।

3. वेद सब विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना–पढ़ाना और सुनना–सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।

4. सत्य के ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये।

5. सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिये।

6. संसार का उपकार करना आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य है, अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

7. सबसे प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य वर्तना चाहिये।

8. अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिये।

9. प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रहना चाहिए, किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।

10. सब मनुष्यों को सामाजिक सर्व हितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम पालने में सब स्वतन्त्र रहें।

प्रणेता– महर्षि दयानन्द सरस्वती

मेरे प्रिय पाठक !

क्या आप इन नियमों में कुछ आपत्तिजनक मानते हैं, यदि हाँ, तो हमें सूचित करने की कृपा करें और यदि आप ऐसा नहीं मानते हैं तो फिर आप विश्व शान्ति के आधार मानव धर्म के सुदृढ़ स्तम्भ इन नियमों पर आओगे वा अन्यथा ही भटकते जीवन बिताना चाहोगे? बोलो! मेरे प्यारे **बोलो! आज किधर जाओगे**?

विशेष निवेदन

यह कार्य अत्यन्त पवित्र है, इस कारण आचार्य श्री की भावनानुसार विनम्र निवेदन है कि **जिनकी आजीविका किसी भी प्रकार की हिंसा, चोरी, तस्करी, अश्लीलतावर्धक साधनों, नशीली वस्तुओं की विक्री, धोखाधड़ी, शोषण आदि पर निर्भर हो तथा जो निर्धन भाई अपनी सामर्थ्य से अधिक (अथवा अपने परिवार में क्लेश करके) दान देना चाहते हों, ऐसे महानुभावों की सद्भावना का धन्यवाद करते हुए भी हम उनका दान लेने में असमर्थ हैं। कृपया ऐसा करने का प्रस्ताव करके हमें लज्जित न करें। हाँ, जो बन्धु ऐसे कर्मों को त्यागकर हमसे जुड़ना चाहें, तो उनका हार्दिक स्वागत है।**

Bank Name	**Punjab National Bank**
A/c Holder	Pramukh, Shri Vaidic Swasti Pantha Nyas
A/c Number	4474000100005849
Branch	Bhinmal
IFS Code	PUNB0447400

या

Bank Name	State Bank of India
A/c Holder	Pramukh, Shri Vaidic Swasti Pantha Nyas
A/c Number	61001839825
Branch	Khari Road, Bhinmal
IFS Code	SBIN0031180

आप अपना चैक/ड्राफ्ट/धनादेश, **"प्रमुख, श्री वैदिक स्वस्ति पन्था न्यास"** PAN No. AAATV7229A के नाम (केवल खाते में देय) भेजने का कष्ट करें, साथ ही अपना नाम व पता साफ अक्षरों में लिखकर अवश्य भेजने की कृपा करें। **आप ऑनलाइन भी धन जमा करवा सकते हैं** परन्तु ऐसा करने वाले **महानुभाव अपना नाम व पता दूरभाष द्वारा तत्काल सूचित करने का कष्ट करें,** जिससे समय पर रसीद भेजी जा सके, अन्यथा हमें बहुत कठिनाई होती है।

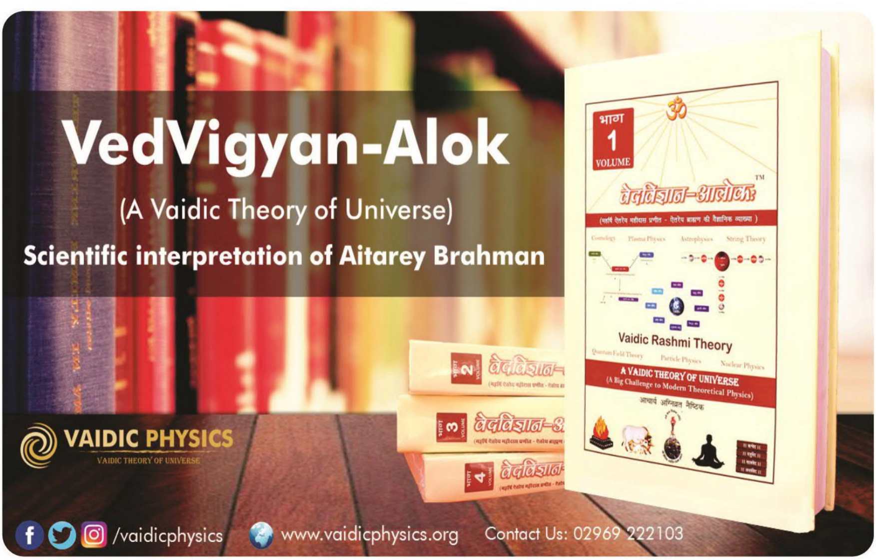
नोट- न्यास को दिया हुआ दान आयकर अधिनिय 1961 **की धारा** 80**-जी के अन्तर्गत करमुक्त है।**

Donations now accepted through BHIM/UPI also

UPI Address shrivspnyas@upi



मान्नीय डॉ. सत्यपाल सिंह जी, मानव संसाधन विकास राज्य मंत्री, भारत सरकार को 'वेदविज्ञान-आलोकः' ग्रन्थ भेंट करते हुए



“ जब संसार के नागरिक व्यक्तिगत, पारिवारिक, कथित जातीय, सांप्रदायिक, क्षेत्रीय स्वार्थों से ऊपर उठकर समग्र संसार के स्थायी व दूरगामी हित को वरीयता दें। जब संसार के सभी नागरिक अपने कर्तव्य तथा दूसरों के अधिकारों की रक्षा में प्रवृत्त हो जायें, तभी संसार बच सकेगा और संसार के बचने से ही हम सब बच सकेंगे अन्यथा हम सब समाप्त हो जाएंगे। ”

-आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक

वैदिक पथ के महान् पथिक



हमसे जुडे लिंक





सब PDF पुस्तक 01

सब PDF पुस्तक 02

Zevyoq **+917433906871**